Jangal ka Phool.

14/9/73

80

53

जंगल के फूल

राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित'

Rajandar Awasthi

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

Rajpal and Sons Delhi

मूल्य	:	चार रुपये
प्रथम संस्करण	:	जुलाई, १९६०
प्रकाशक	:	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
मुद्रक	:	युगान्तर प्रेस, दिल्ली

आमुख

बस्तर जन-जीवन पर यह आञ्चलिक उपन्यास है। बस्तर मध्यप्रदेश में क्षिण में यत क्षेत्रफल के हिसाब से भारत का सबसे बड़ा ज़िला है। किन्तु आबादी उतना ही विरल है। सघन वनों, घाटियों और नदी-नालों से भरी हां की ।-भरी धरती के पचहत्तर प्रतिशत से भी अधिक निवासी आदि-ासी हैं र आज भी आदिम सभ्यता में हैं। उनके अपने रीति-रिवाज हैं। उनकी ी संस्कृति है। उनकी अपनी मान्यताएं हैं। कुछ वर्षों से मोटर-ातायआरम्भ कर इस अंचल का सभ्य संसार से सम्बन्ध जोड़ दिया गया है, रन्तु तक यहां के निवासी शहरी सभ्यता से काफी दूर हैं और उन्होंने अपनी ाचीनंस्कृतिक धरोहर को अछूते कौमार्य की भांति सुरक्षित रखा है।

यास की कथा बस्तर राज्य के आदिवासियों के ऐतिहासिक गदर े संत है। यह गदर आज से लगभग ५० वर्ष पूर्व अंग्रेजी सरकार के विरुआ था। गदर के अनेकानेक कारण थे और उसमें वहां के राज-परिवार का ाथ था। गदर का पूरा संगठन घोटुल से हुआ था—लाल मिर्च और आम डाल घर-घर भेजकर। घोटुल बस्तर में प्रायः सर्वत्र पाए जाते हैं। ये एकार के कुंवारों के आवास या 'बेचलर्स होम' हैं।

स उपन्यास का अधिकांश भाग घोटुल-जीवन, वहां की संस्कृति, वहां के नियों के रीति-रिवाज और उनके जीवन के समग्र चित्र सामने रखता है। दि पाठक वह पा सके तो मैं अपना श्रम सफल मानूंगा।

—राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित'

१

ऊपर महुआ की लाल-लाल नई कोंपलें। कोंपलों के बीच रस भरे फूल। नीचे वैसी ही धरती। जब सामने किसी पहाड़ की चढ़ाई होती है और रंगीन हवा बहती है तो जैसे धरती का सारा खून आसमान में समाने के लिए उड़ने लगता है। गुफाओं में गोते लगाती यह हवा समतल में अंधी होकर चक्कर काटने लगती है, चोट खाए सांप की तरह। साल, अर्मा[1], महुआ, कोहा और सागोन के ऊंचे-ऊंचे झाड़। बेरी की घनी और फैली झाड़ियां। छित्ती[2] से छत-राई हरी-भरी खेती-सी धरती। पीपल, मर्का[3] और कदम्ब की घनी छाया। सर्प जैसी पगडंडी इन्हें पार करती नीचे उतरती है। सामने एक नाला है। दोनों ओर दो ऊंची घाटियां। एक ओर चढ़ने में सांस फूलती है। दूसरी ओर उतरने में सांस को चैन आता है। पहले चैन फिर दम फुला देने वाली चढ़ाई। तब कांटों का रास्ता। थोड़ी दूर चलकर वह सरसों के फूल जैसी टपरियों में खो जाता है।

ट्ह ट्ह ट्ह—यह टिमकी की आवाज़ है।

ठन ठन ठन—यह थाली पीटी जा रही है।

सुर्र्र्र्र्र्र्र—की भर्राई आवाज़ जंगली भैंसों के सींग के बाजे से निकली, ढोल के घर्राए सुरों के साथ मिलकर गांव भर में फैल गई।

रे रे रेलो रे रेलो रे,
रेलो रे रे रे रेला रेएएए !

[लड़]कियों के समवेत स्वर ने बाजे वालों को चुनौती दी। बजाने वालों में [...]का नया रंग आया। उनके स्वर और बढ़े। लड़कियों के मीठे कंठों ने

[...]ा पेड़ २. इमली ३. आम

जैसे हिलोरें लीं। जितने खड़े थे सबकी आंखें फट गईं। दांतों ने अंगुलियां काट लीं। सब जाग गए। एक साथ खिलखिलाकर हंसने लगे।

'ठहरो' सेमर की रूए जैसे बाल, पर करईमुण्डा के पत्थरों-सा दृढ़ शरीर वाला आदमी ज़ोर लगाकर चिल्लाया। किसी मिलिटरी अफसर का आर्डर था वह, गांव का गांव चुप। बस एक हलकी-सी सुरसुरी—सीईईईई। एक दूसरे की आंखें आपस में टकराईं।

'यह होड़ किसलिए ?'—जवान-बूढे ने रौबदार आवाज़ में पूछा।

कहीं से कोई आवाज़ नहीं।

सब तरफ खामोशी।

'बोलो'—गरज सुनकर ढोलक वाले के हाथों से ढोल गिर गया। वह तना खड़ा रहा। उसके होंठ खुले, हिले, फिर बन्द हो गए। कुछ देर बन्द रहे, फिर खुले, 'इन लड़कियों की इत्ती हिम्मत !'

'हां'—एक सुरीली आवाज़ आई। पानी भरी घटाओं के बीच से बिजली जैसी चमकती उसकी आंखें नाच उठीं।

'तुम हमारे गले को नीचा दिखाना चाहते हो ?'

बूढ़ा पलक झपकते सब कुछ भांप गया। आगे बढ़कर उसने लड़की को गोद में उठा लिया और ढोलकिये के पास जाकर उसकी पीठ थपथपाई।

'शाबास !'

न जाने कितने और जोड़ों की छाती पर कांटे चुभे। भाग्य छाया की तरह होता है। जब कोई उसे पकड़ना चाहता है, वह दूर भागता है। जब आदमी उदासीन हो जाता है, वह पीछा करने लगता है।

महुआ ने शायद पकड़ने की कोशिश नहीं की, औरों ने की होगी। सुलकसाए की छाया उसके पास थी।

'झगड़ा बन्द नहीं होगा ?' बूढ़े फगरू का प्रश्न, इन दोनों के होंठों पर खेलती मुसकान में घुल गया।

'हां-हांऽऽ'—एक आवाज़ गूंजी। दोनों दलों के नेताओं ने सुलह कर ली थी। सैनिकों ने अपने तीर तरकस में डाल दिए।

सुलकसाए ने आगे बढ़कर झालरसिंह के हाथ से खरहरा छीन लिया। वह गैलों के बीच के चौरस्ते को साफ करने लगा। जिस पैंतरेबाज़ी से वह सफ

कर रहा था उसे देखकर बूढ़ा गायता[1] भी अपनी हंसी न रोक सका। बोला, 'देख महुआ, कहती थी सुलकसाए अलाल है। दिनभर पड़ा-पड़ा खाता है, काम-धंधा उसके बाप से नहीं हुआ। देख रही है न उसके कमाल, अब शिकायत तो नहीं करेगी ?'

महुआ ने आंचुल[2] का छोर मुंह में ठूंस लिया और अपनी कौड़ी जैसी बड़ी आंखों से सुलकसाए को देखा। वह नीचे सिर झुकाए तेज़ी से धूल उड़ा रहा था। ज़मीन झाड़कर वह तनकर खड़ा हो गया और उसने गर्व के साथ चारों ओर नज़र डाली, 'इंगे।'[3]

महुआ चौक में कूदी। जब ज़मीन ने सारा गोबर सोख लिया तो उसने जोंदरा (ज्वार) के आटे से चौक पूरा। उसपर कुछ कच्चे और पके चावल बगरा दिए। गायता ने अपनी चकमक सुलकसाए की ओर बढ़ा दी। सुलकसाए ने आगे बढ़कर 'जोत' जला दी। जोत जलते ही सब सिरहा[4] की ओर देखने लगे। सिरहा नारायनदेव की पूजा में खो गया। दो-चार मन्तर पढ़ने के बाद उसने देवताओं को धूप दी। सारे लोगों की आंखें सुअर पर अटक गईं। वह ज़मीन में मुंह लगाए पहले की तरह खड़ा था और सारे चावल उसी तरह बिखरे थे। सिरहा के चेहरे पर चिन्ता की रेखाएं उभरीं। उसने देवता का नाम लेकर नारियल फोड़ा। उसपर लांदा चढ़ाई। मन्तर द्वारा वह सुअर की चेतना जगाने लगा। सुअर मन्तर के प्रभाव से झूम उठा। चावल के दानों को समेटने के लिए उसने जैसे ही मुंह खोला, सुलकसाए ने आगे बढ़कर उसकी पूंछ काट ली। पूंछ के कटते ही नारायनदेव की आतमा सुअर पर उतर आई। फिर उसने खूब चावल खाए। सिरहा ने उसकी खूब पूजा की और आरती उतारी। बूढ़ी झमको तब तक बाजू में गड्ढा बना रही थी। गड्ढा खुद गया तो उसमें गरम पानी भर दिया गया। फगरू, सुलकसाए और सिरहा तीनों ने सुअर की पिछली टांगें पकड़कर उसका मुंह गड्ढे में जैसे ही डाला कि वह दर्द भरी आवाज़ से चीख उठा : चि चीं चीं चीं चीं चीं। औरतों की खुशी का अन्त नहीं। उनका नारायनदेव प्रसन्न हो गया था। देव प्रसन्न हो गए। अब बरस भर गांव

---

१. गांव का मुखिया, जो सारे गांव का प्रतिष्ठित धार्मिक पुरुष होता है।

२. गोंडी साड़ी ३. हां

४. गुनिया; झड़ाई-फुंकाई का काम करने वाला गांव का प्रमुख व्यक्ति

सुखी रहेगा। भूत-प्रेतों की बाधा उन्हें नहीं सताएगी। कहीं कोई बीमार नहीं पड़ेगा। महुआ सबसे ज़्यादा खुश थी। सुअर के खून की धार को देखकर उसके काले बदन में, सेमर के फूल की तरह चमकते होंठ अपने आप गुनगुना उठे :

तेर ना नी न ओ, तेर ना ना के नांव रे।
तेर ना ना, ना ना, तेर नाना के नांव रे;
तेर नाना ओऽऽऽ।

दूसरी लड़कियों ने महुआ का साथ दिया और लड़कों ने भी। ढोलची अपने साथी को पहल लेता देखकर कैसे चुप रहता! वह भी मैदान में उतर पड़ा। टिमकी, किकिर।[१] थाली और नगाड़े बज उठे। देखते-देखते वहां नाच-गाने का खासा मजमा जम गया। मजमें में जब सब खो गए तो सुलकसाए ने गले से ढोल का फन्दा निकालकर फग़रू के गले में डाल दिया। फगरू के नंगे हाथ ढोल के चमड़े पर थाप देने लगे। सुलकसाए ने आगे बढ़कर महुआ की कमर पकड़ ली। वह प्यार के दर्द से चीख उठी। बांस की जवान कोंपल की तरह उसने अपनी कमर को लचकाया और गले को ऊपर झटका देकर छाती सामने तान दी। सुलकसाए ने भी वही किया। यह देखकर दस-पांच और जोड़े मैदान में उतर पड़े। गांव के अधेड़ औरत-मरद भी पीछे न रहे। बूढ़े-बूढ़ियों की आंखें इन्हें देखने में खो गईं।

ती ना ना मुर ना ना रे ना ना
ना मुर ना ना हो।.........

ढोल और नगाड़े बजते रहे। जवान जोड़े अपने रंगीन पैंतरे दिखाते रहे। अधेड़ औरतें अपने बिसरे ज़माने की याद में मस्त उसके गीतों का साथ देती रहीं और बूढ़े खीझे हुए यह तमाशा देखते रहे। सब खुश, सब मगन, सब अपना दुःख भूल गए। किसीको कोई चिन्ता नहीं, कि।को काई परवाह नहीं। नारायनदेव ने इतनी सरलता से उनकी पूजा स्वीकार कर ली थी।

उत्सव घंटों चलता यदि झमको की नज़र काले घोड़े पर सवार गोरे अफसर पर न पड़ती। वह न जाने कब वहां आकर खड़ा हो गया था। देखते ही झमको ने आगे बढ़कर महुआ के चिहुंटी काटी। महुआ ने दर्द भरी 'सीऽऽऽ' की

१. यह बांस का एक तरह का बाजा होता है, जिसे मुंह से बजाया जाता है।

आवाज़ की। उस आवाज़ के साथ ही सारा मजमा पस्त पड़ गया। गांव भर की आंखें काले घोड़े और उसपर सवार गोरे अफसर पर अटक गईं। महुआ पास खड़े गायता की छाती से लिपट गई और ज़ोर-ज़ोर से सांस भरने लगी। 'क्या बट्टमीजी'—गोरे अफसर के पीछे सफेद घोड़े पर सवार दूसरे अफसर ने ज़ोर से कहा। उसकी आंखें लाल थीं। उनसे जैसे चिनगारियां निकल रही थीं। सब लोग भयभीत खड़े थे। दोनों अफसरों के हाथ में पिस्तौलें थीं और उनके पीछे चार-पांच सिपाही खड़े थे। वे हाथों में कोड़े लिए थे।

गोरा अपने काले घोड़े से नीचे उतर पड़ा। औरतों पर उसने एक उड़ती नज़र डाली। उसकी नज़र सबको छानती हुई महुआ पर अटककर रह गई। उसने सिर से पैर तक घूरा। उसके उभरते जोबन और दमकते चेहरे को देखा। मन ही मन वह न जाने क्या बुदबुदाया। साथ वाले काले अफसर ने उसके सामने सिर झुका दिया। गोरे ने शायद उसकी परवाह नहीं की! वह बूढ़े गायता की ओर बढ़ा जिसकी छाती से लिपटी महुआ जैसे महक रही थी और उसकी सुगंध ने उसे पागल बना दिया था।

'टुम ये किया करटा!'—गोरे ने आंखें निकालते हुए गायता से पूछा। गायता शायद उसकी बात नहीं समझ पाया। महुआ को छोड़कर वह थोड़ा आगे बढ़ा। आगे बढ़कर उसने गोरे के सामने सिर झुकाया और प्रश्नभरी मुद्रा में उसकी ओर आंखें फेरीं।

'क्या टुकुर-टुकुर देखता, बट्टमीज!'

गायता अब भी चुप था। काले अफसर ने एक सिपाही के हाथ से कोड़ा छीनकर उसकी पीठ पर दो-चार जड़ दिया।

सर्रर सट्ट् सर्रर।

वहां खलबली मच गई। औरतें एक तरफ इकट्ठी होकर खड़ी हो गईं। अपने तरकस से एक तीर निकालकर सुलकसाए ने अफसर को निशाना साधा ही था कि सिरहा ने उसका हाथ पकड़ लिया। काला अफसर और उसके सिपाही आगे बढ़े। वे सुलकसाए को पकड़ना चाहते थे पर गोरे ने रोक दिया। उसने काले अफसर को पास बुलाकर पूछा, 'ये किया गरबर?'

काले अफसर ने यही बात गायता से पूछी। उसने कहा, 'हुज़ूर, हम लोग अपने नारायनदेव की पूजा कर रहा है। ये बरस भर का परब है। हम इसे

'लाङ्गकाज' कहते हैं।

'लेंडकाज ! ये किया बाट ?'—गोरे ने जिज्ञासा से पूछा। उसने अपना कोड़ा नीचे कर लिया था। उसके होंठ मुस्करा रहे थे और उसकी आंखों में खुशी चमक रही थी। गोरे के साथ वाले बड़े सिपाही ने, जो अपने सहायकों के साथ खुसफुस कर रहा था, आगे जाकर साब को बताया कि लाङ्गकाज गोंड़ों का एक उत्सव है। इसे ये साल में एक बार मनाते हैं और नारायनदेव की पूजा करते हैं। नारायनदेव इनके गांव की रक्षा भूत-प्रेत और चुड़ैलों से करता है। ये सब मिलकर अपने देवता को मनाते हैं और उससे प्रार्थना करते हैं कि साल भर उनके गांव में कोई आपत्ति न आए।

गोरे ने पूछा, 'ये नरायनदेव कौन डेव ?'

गायता को जैसे अब गोरे की बात समझ में आ गई थी। बोला, 'सिरकार, ये बीमारियों का राजा है। सारी बीमारियां इसीके कहने पर चलती हैं। सारे भूत-प्रेतों का वह मालिक है। चुड़ैल उसके इशारे पर नाचती है।' गायता ने गांव के गेंवड़े की ओर अंगुली दिखाई। वहां पत्थरों की एक ऊंची कोठी थी और उसपर कई छोटे-छोटे झंडे लगे थे, 'वह रहा हमारा नरायनदेव।'

गोरे ने सिर हिलाया, जैसे वह सब कुछ समझ गया। चारों ओर उसने नज़र फेंकी। उसने गड्ढे की ओर देखा जहां सुअर उलटा खड़ा था। देखकर उसने मुंह और आंखें दोनों अजीब-से ढंग से बनाए, 'जंगली आडमी ! कैसा जानवर को मारटा !'

'जंगली' शब्द सुनकर सिरहा प्रसन्न हो गया। 'हां सिरकार, हम जंगली आदमी है। जंगल में रहता है। जंगल में घूमता है। जंगल का हर झाड़ हमारी रच्छा करता है। जंगल का हर जानवर हमारा साङ्गुती[1] है। सुरजाल[2] को हम भला क्यों मारता ! हमने इसे नरायनदेव को दिया। उसने ले लिया। अब हम सब मिलकर इसका परसाद खाएगा।' सिरहा ने सुलकसाए को इशारा किया। सुलकसाए ने गड्ढे से सुअर को निकाला। गोरे ने अपनी लाल आंखों से घूरा और सिर तक टंगिया उठाकर सुलकसाए ने जैसे ही चोट की कि सुअर दो टुकड़े हो गया। उसने एक अजीब तरीके से टंगिया दूर फेंक दी। गोरे की तरफ देखकर

---

१. साथी २. सुअर

बोला, 'खाइगा सिरकार ?'

न जाने गोरे ने उसकी बात समझी या नहीं। बोला, 'ट्रेमेंडस''''जानवर आडमी !'

'नहीं, जंगली आदमी !' सुलकसाए ने व्यंग्य किया और सुअर को अपने हाथों से ठीक करने लगा।

गोरे ने ज़ोर से हंस दिया, 'बहुत खूब !' उसने काले अफसर की ओर देखा, 'आज रात रेस्ट करेगा''''खूबसूरत लोंडी !'

घोड़े ने दुम हिलाई और टापों की आवाज़ करते वे आगे निकल गए।

गांव के पैरों को धोता नाला ! किनारे एक छोटा-सा टूटा-फूटा पक्का मकान ! किस ज़माने में, किसने उसे बनवाया, कोई नहीं जानता। न जाने कितने सालों से वह हवा-पानी की बौछारें सह रहा है। गांव वाले दिन में उसकी परछी में कभी बैठ-उठ लेते हैं। बरसात के दिनों में उसकी ज़्यादा फिकर की जाती है। परन्तु रात को वहां कभी कोई नहीं ठहरता। गांव भर में इसके सम्बन्ध में कई किस्से कहे जाते हैं। नाम है राजामहल। आने-जाने वाले सोचते हैं, कभी कोई राजा वहीं रहता रहा होगा। परन्तु सच तो यह है कि बस्तर के सिवाय किसी गांव में राजाओं ने न कभी यहां अपना डेरा डाला और न कोई इमारत बनवाई। कुछ मंदिर बनवाए हैं परन्तु वह भी यहां नहीं। गांव में फूस की बीस-बाइस टपरियां हैं। सारे मकान कच्ची माटी और बांस की कमचियों के बने हैं। गांव के दो छोरों पर दो ऊंचे टीले हैं। लगता है किसीने ज़मीन खोद-कर बिल बना दिए हैं। ऐसे गांव में ईंटों का पक्का मकान, चाहे वह खण्डहर ही क्यों न हो, महल से कम नहीं। इसीलिए उसे सारा गांव राजामहल कह-कर पुकारता है। राजामहल की सफाई की गई। यहीं गोरे अफसर और उसके साथियों के ठहरने का बन्दोबस्त किया गया।

गायता को जब यह खबर लगी कि यह गोरा अफसर रियासत का बड़ा साहब है और गांव की जांच करने आया है, तो वह कोड़े की मार भूल गया। अपने को वह धन्य मानने लगा। इतने बड़े अन्नदाता के हाथ की मार उसे भग-वान् के वरदान जैसी लगी। उसने सिपाहियों को सलाह दी कि सरकार को

उस महल में न ठहराया जाए, किन्तु सबने उसकी बात अनसुनी कर दी। गायता से न रहा गया। गांव में आने वाले हर अफसर की सेवा करना उसका काम था। वह जानता था कि इन्हीं अफसरों के बल पर गांव सुखी रह सकता है। राजा तो नाम के लिए है। सारा कारोबार अंग्रेज़ अफसर ही करते हैं। उसने यह भी सुन रखा था कि रियासत पर कड़ी नज़र रखने के लिए अंग्रेज सरकार ने एक बहुत बड़ा अफसर बैठाल दिया है। दौरा करने वाले अफसर अपनी रिपोर्ट उसी आफिसर को देते हैं और वही सबके भाग का फैसला करता है। यदि ये अफसर नाराज़ हो गए तो न जाने कब, किस आदमी पर कौन-सी विपदा आ पड़े।

गायता बुद्धिमान था। सारे गांव का वह नेता था। उसकी अंगुलियों के इशारे पर पूरे गांव का गांव आग में कूद सकता था। उसपर सबको अटूट भरोसा था। यही कारण है कि गांव के किसी आदमी ने कभी अदालत नहीं देखी। गांव के सारे झगड़े गायता बड़ी होशियारी से निपटा देता है। उसने कभी किसीका पक्ष नहीं लिया।

गायता की बात गोरे अफसर के सिपाहियों ने नहीं मानी, इसलिए गायता भयभीत था। उसे डर था, यदि रात को गोरे अफसर पर किसी भूत या चुड़ैल ने धावा बोल दिया तो उससे ज़्यादा नुकसान सारे गांव का होगा। वह मालिक है। गांव में आग लगवा सकता है। गांव के एक-एक आदमी को ज़िंदा जलवा सकता है। हाथ में लाठी लिए वह राजामहल आ पहुंचा। दरवाज़े पर उसने माथा टेका तो गोरा अफसर बेहद खुश हुआ। उसने आगे बढ़कर गायता के हाथ पकड़ लिए। बोला, 'अमको बहुत रंज, टुमको कोरा मारा—अमको मुआफ करो।' गायता ने सिर झुकाया, 'यह क्या सिरदार, ऐसा भाग किसे नसीब होता है!'

गोरा लज्जित हुआ। कमर के पीछे दोनों हाथ बांधकर वह राजामहल की भीतरी परछी पर आगे-पीछे घूमने लगा। गायता ने कहा, 'हुज़ूर!'

'हां।' गोरा ठहर गया।

'एक बात कहने आया हूं, सिरकार!'

'येस्, येस्, कओ।'

'हमारे यहां थानागुड़ी है, सिरकार।'

'ये किया ?'

'थानागुडी। यहीं हम गांव में आए हर मिहमान को ठहराते हैं।'

अंगुली दिखाकर वह बोला, 'वह रहा हमारा घोटुल और उसीसे लगी है थानागुड़ी। यहां हर गांव में वह होती है। शायद सिरकार अभी नये-नये आए हैं!'

'हां' गोरे ने सिर हिलाया, 'अभी आया।' वह गायता की अंगुली की नोक की ओर ध्यान से देखता रहा। बोला, 'वो कच्चा घर ! डर्टी !'

'हां सिरकार, वही।'

'ना ना, अम उसमें नई जाएगा। यईं ठहरेगा।'

'ठहरिए सिरकार····पर····'

'पर क्या····?' गोरे ने ज़ोर से कहा।

'महल में ठहरना खतरे से खाली नहीं है मालिक ! हर रात को यहां चुड़ैल आती है, छम छम छम करती। कभी-कभी कुछ गाती है। ये होऽऽऽ हो हो····रे रे ऽऽ रेलो ऽऽ रे।

'बहुत खूब'—गोरे ने दोनों हाथों की हथेलियों को ज़ोर से मिलाया, 'अम उसका गाना सुनेगा।'

'नहीं सिरकार !'

'नहीं····क्यूं ?'

'राजामहल हमारे गांव का सिरदर्द है मालिक ! बचपन से मैं इसे इसी हालत में देख रहा हूं। पुराना किला है। पेपी (बड़े बाप) ने बताया था कि कई बरस पहले दो पंजाबी सिपाही यहां आए थे। वे यहां क्यों आए यह ठीक-ठीक कोई नहीं जानता, पर सुना है अंग्रेज़ सिरकार से उन्होंने बगावत की थी और यहां आकर छिपे थे। उन्हीं पंजाबियों ने इस महल को बनाया था। दोनों इसी में रहते थे। उनमें से एक तो थोड़े दिन के बाद चला गया। दूसरा इकेला रह गया। वह बड़ा नेक आदमी था। सारे गांव की उसके साथ दोस्ती थी, पर जब से वह झिरिया से प्रेम करने लगा था, सारा गांव चिढ़ गया था। झिरिया सिरहा की बेटी थी। पंजाबी के पास बंदूक थी। सब उससे डरते थे। कोई मुंह नहीं खोल सकता था, पर सब मुंह बनाते थे। गांव भर में उसका और झिरिया के प्रेम का किस्सा कहा जाता था। जहां देखो, उसकी चर्चा। ठीक

भी तो है, हुजूर ! हम गोंड़ हैं । जात के पक्के । ईमान के सच्चे । अपनी जात की बेटी पर परजात को आंख उठाते कैसे देख सकते हैं ! वह झिरिया से बिहाव रचाना चाहता था । परजात और बिहाव ! परजात में बिहाव किया था साल्हो ने । एक पंका के साथ । बिहाव क्या हुआ बरियारपेन[1] बिगड़ गया । पंका हाट से लौट रहा था, गैल में बाघ ने धावा बोल दिया । रूख[2] पर चढ़कर उसने जान बचा ली । तीन दिन-रात ऊपर चढ़ा रहा । किसी तरह बचकर घर आया तो ताप से उसका अंग-अंग जल उठा । सिरहा ने खूब झाड़-फूंक की । खूब दवा-दारू पिलाई । सब बेकार । एक रात उसने कुएं में डूबकर जान दे दी । सबेरे उसकी लाश तैरती मिली । बेचारी साल्हो फूट-फूटकर रोई । महीना भर बाद उसके लड़की हुई, वह भी अंधी और लंगड़ी । साल्हो को फिर अपनी जात में लौटकर आना पड़ा ।

'गांव भर यह जानता है । फिर बिपदा कौन मोल ले ! कौन अपने हाथ अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारे । इसलिए कोई नहीं चाहता था कि झिरिया पंजाबी से पिरेम करे । एक दिन गांव के सारे गोंड़ टंगिया और तीर-कमान लेकर इस बंगले में आ धमके । सबने उसे खूब समझाया । मेरा पेपी तब इस गांव का गायता था । उसने भी समझाने की खूब कोशिश की । पंजाबी नेकदिल आदमी था । अपनी बंदूक भीतर धरकर वह खाली हाथ बाहर आ गया । बोला, 'इतनी भीड़ ! आखिर क्यों ?'

' 'हम तेरी जान लेंगे ।'

'उसने हाथ जोड़कर पूछा—'किसलिए ?'

' 'तूने हमारे गांव की लड़की पर नज़र उठाई है ।' उसने सिर झुका दिया, बोला—'तुम सब सच कहते हो । मैंने सचमुच नजर उठाई है ।' वह भीतर गया और झिरिया का हाथ पकड़कर बाहर ले आया—'यह रही तुम्हारी बेटी । इसे सम्हालो और मेरी हत्या कर दो ।' झिरिया रो रही थी । कहती थी—'नहीं, मैं इससे प्यार करती हूं ।' मेरे पेपी ने सबके सामने झिरिया को खूब मारा और उसका बिहाव गांव के ऐसे लड़के के साथ कर दिया जिसे वह बिलकुल नहीं चाहती थी । पंजाबी ने किसीसे कुछ नहीं कहा । वह इसी परछी में बैठा आंसू

---

१. एक देवता २. पेड़

बहाता रहा। परन्तु जिस रात झिरिया का बिहाव हुआ, उसी रात वह सामने के पीपल के झाड़ में फंदा लगाकर लटक गई।'

सामने पीपल के झाड़ की ओर अंगुली दिखाते हुए गायता ने कहा, 'वह रहा पीपल। नरकी पहर[1] पंजाबी ने अपने सारे कपड़ों में आग लगा दी और झिरिया के साथ मरने को तैयार हो गया। गांव भर ने उसे समझाया पर वह दीवाना था, न माना। जहां झिरिया को दोरसाया[2] गया था, वह रोज़ जाकर वहां घंटों बैठा रहता था। कई दिन यही करता रहा। गांव में किसीसे न वह बात करता और न कुछ खाता-पीता। मोटा-ताज़ा आदमी सूखकर कांटा हो गया और एक रात गांव छोड़कर न जाने कहां चला गया। आज तक फिर उसका पता नहीं लगा। जाते समय किसीसे कहता रहा है कि झिरिया रोज़ रात को उससे मिलने बंगले में आती है और कहती है, वह उसके पास आ जाए। —पंजाबी चला गया पर, झिरिया का हन्सा रोज़ नडुम नरकी[3] इसी कमरे में जहां वह सिपाही सोता था, आती है। वह उसे खोजती है। कहते हैं कभी झिरिया ज़ोर-ज़ोर से रोती है। कभी गाती है। कभी नाचती है। मरने के बाद झिरिया चुड़ैल हो गई, मालिक, इसलिए उसके जीव से हर कोई डरता है। मेरे ही लोन[4] का किस्सा है सिरकार। कोबेसाल[5] मिहरिया ने एक पेड़गी[6] को जनम दिया। यह खबर बताने जब मेरी पेकी[7] बाहर आई तो छाती पर उसने एक अरुआ[8] बैठा देखा। पेड़गी का जनम और अरुआ की सिर पर-सवारी! कित्ता बड़ा अशुभ था यह! उसने अरुआ को मारने के लिए एक पथरा फेंका। उस पथरे को उठाकर अरुआ भाग गया और उसके बाद पेड़गी माटी जैसी रोज़ घुलने लगी।'

काला अफसर वहां आ पहुंचा था। एक 'सिलट' मारकर बोला, 'सब अरेंजमेंट हो गया सरकार! हुज़ूर के मन-बहलाव के लिए नाच-गाने का भी।' गायता की ओर मुड़कर उसने तेज़ी से कहा, 'क्यों रे, सरकार से क्या शिकायत करता था?'

'शिकायत नहीं मालिक····।'

'शिकायत नहीं तो क्या है, हुज़ूर को क्या सिखाता है? अरुआ पाथर ले

---

१. सबेरे २. दफनाना ३. आधी रात ४. घर ५. दो साल पहले ६. लड़की ७. जवान लड़की ८. उल्लू

गया तो तेरी पेड़गी घुलने लगी ! अभी झूठ बोलना सीख....' अफसर ने आंखें तरेरते हुए कहा।

गायता के मन को धक्का लगा। हाथ जोड़कर बोला, 'सही कह रहा हूं सिरकार ! मेरी बात का भरोसा रखें। उस अरुआ ने वह पथरा पानी में भिगोकर किसी ऊंचे टिगस्ते[1] पर रख दिया होगा। जैसे-जैसे पथरे का पानी सूखता गया पेड़गी भी घुलती गई। गुनिया ने बड़ी कोशिश की पर उस चुड़ैल ने मेरी पेड़गी को न छोड़ा। झिरिया अब भी चुड़ैल है मालिक, न जाने कितने भेस में वह गांव के चक्कर लगाती रहती है। जो उसके अड़सट में पड़ जाए उसका नास हो जाए। सारे गांव से चिढ़ी है वह। गांव वालों ने ही तो उसे अपने जीवाल[2] से नहीं मिलने दिया। खैर तो यह कि गांव का सिरहा हुशियार है। रात-आधीरात जब भी उसकी सांकल बजाओ—मदद को दौड़ पड़ता है।'

काले अफसर ने डांटा, 'रहने दे ये किस्से, चल, जा यहां से।'

गोरे ने मुसकराकर कहा, 'बहुट खूब, राट तो अम तुमारा चुड़ैल से मुलाकात लेगा।' फिर उसने काले अफसर की ओर देखकर कहा, 'छोकरी का किया ?'

'वह इन्तजाम भी हो गया हुजूर। रात को इहां नाच होगा। नाच के बाद महुआ सरकार के कमरे में ठहर जाएगी।'

'वो टेय्यार हो गया ! खूब !' गोरे ने उसकी पीठ थपथपाई।

गायता ने सुना तो खून सूख गया। पर वह कुछ बोला नहीं। गोरे ने कहा, 'गाटा, टुम जा सकटा। आज राट अम बस तुमारा चुड़ैल से मुलाकात लेगा।'

गायता सिर नीचा किए जाने लगा तो गोरे ने अपने सहायक अफसर से कहा, 'महुआ से बोलो, वो कल आएगा। आज नहीं।'

गायता ने सुना, उसकी जान में जान आई। गोरा अफसर बहुत खुश था। वह तेज़ी से आगे-पीछे कमरे में घूम रहा था—ये ग्रेट नाइट ! स्पिरिट !! व्हाट नॉनसेंस !!!

सिपाही ने आकर खबर दी कि नाचने-गाने वाले आ गए हैं और हुज़ूर की

---

१. टेकरी २. प्रेमी

प्रतीक्षा की जा रही है। वह बाहर निकलकर आया। राजामहल के सामने पचीस-तीस स्त्री-पुरुष आभूषणों से सजे खड़े थे। पुरुष सिर पर मोरपंखा और जंगली भैंस के सींग बांधे थे। गोरे ने आश्चर्य से उन्हें देखा। फिर यहां-वहां नज़र दौड़ाई। गायता वहां कहीं नहीं था। गोरे ने पूछताछ की तो पता लगा कि राजामहल से जाते समय रास्ते में सांप ने उसे डस लिया। सुनकर गोरा दुःखी हुआ। वह डर गया, बोला, 'स्नेक, ओ गोड ! बरा स्वीट आदमी ठा, मर जाएगा !'

गुनिया उसकी बात समझ गया था, बोला, 'नहीं हुज़ूर, अब वह नहीं मरेगा।'

'नहीं मरेगा !' अफसर ने मुंह फाड़ दिया।

'हां हुज़ूर, वह वहीं खड़ा-खड़ा अद्धाझारे[1] के पत्ते जितने चबा सकता था चबा गया। घर आकर आठ मुर्गियों को उसने अपना खून पिलाया। न जाने कितनी कड़ू तुरइया वह खा गया। मुझे भी समय पर पता लग गया और मेरे जाते ही सांप ने अपना जहर वापिस ले लिया। वह आता ही होगा सिरकार !'

गोरा आंखें निकालकर उसे देख रहा था। अपने आप वह बोला, 'अजीब आडमी है। स्नेक ने पोयज़न वापिस ले लिया !' बरामदे में कट्टुल[2] बिछी थी। वह बैठ गया। तभी गायता ने आकर जुहार की। गोरे ने रूमाल निकालकर अपनी आंखें पोंछीं और सिर से पैर तक उसे घूरा। उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। बोला, 'वंडर, ग्रेट वंडर !'

लांदा के तीन पीपे मैदान में खोल दिए गए। तेन्दू के पत्तों के दोने लेकर जिसने जितना चाहा, पिया। आखिर में पीने वाला था ढोलिया। पीते ही उसने उचाट भरी और ढोल पर थाप दी। अन्दर से सिहरती आवाज़ निकली। टट्ठा, ठट्ठा, टट्ठा। टेंडुर, निसान और किकिर भी बज उठे और जैसे ही बांसुरी के सुरों ने हवा में लहराते झोंकों को पकड़ा कि औरत और मरदों की टोली झूम उठी। सुलकसाए ने बीच में कूदकर तान छेड़ी। महुआ ने सबसे पहले उसका जवाब दिया। और इस धुन के साथ ही धीरे-धीरे गीत नीचे सरका :

---

१. एक विशेष प्रकार का झाड़; जिसकी जड़ दातून के काम आती है।
२. खटिया

धना रे अंगरिजवाऽऽऽ
तोरी अक्कल भारी रे,
रे रे रेलो रे रेलो रे।
अधरे, चलाय रिलगारी, हो
रिलगारी, रेऽऽऽ।

महुआ ने गीत पर जो पैंतरे दिखाए, उसकी लचीली कमर ने नागिन की तरह जितने रंग बदले, गीत की हर लय और तान के साथ उसने जो अंगड़ाई ली, गोरे अफसर की छाती में छुरी की तरह चुभ गई। पहाड़ी नाले की तरह उचटती और हवा की तरह लहराती महुआ उस झुंड में अकेली दीख रही थी। गोरा रह-रहकर जीभ से अपने होंठ चाटता और आंखें फाड़कर इस लहराती हुई नागिन को देखता। गाने की तान और लय पर भी वह मुग्ध था। देहातियों के मुंह से अपनी प्रशंसा सुनकर वह खुश था। गीत जहां कहीं उसे समझ में न आता वह बाजू में बैठे काले अफसर से पूछ लेता। वह तत्काल खड़े होकर अर्थ बता देता। गोरा मुसकरा देता तो अफसर के चेहरे पर सन्तोष की एक रेखा खिंच जाती।

आधी रात तक नाच-गाना होता रहा। उसके बाद सब अपने-अपने घर चले गए। महुआ को भी नहीं ठहराया गया। गोरे ने एक बार आंख भर महुआ को फिर देखा और अपने कमरे में चला गया। उसके सहायक अफसर और सिपाही बाजू के कमरे में सो गए।

नाडुम नरके जैसे अचानक किसीने उसे झकझोर दिया। हड़बड़ाकर उसने आंखें खोलीं। इधर-उधर देखा और फिर सोने चला गया पर नींद नहीं आई। उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार चक्कर काटने लगे। वह इन विचारों में उलझा था कि कमरे के दरवाज़े की संध से ज्वाला की एक पतली-सी रेखा दिखाई दी। ऐसा लगा जैसे किवाड़ जल रहे हैं। वह कांपने लगा, क्या गांव वालों ने आग लगा दी? उसने एक हल्की-सी आवाज़ सुनी। आवाज़ रह-रहकर आ रही थी। कभी कुछ तेज़ हो जाती तो कभी एकदम बन्द। आवाज़ में दर्द था—जैसे कोई कराह रहा हो। गोरे ने देखा, आग की उस रेखा के बीच से एक काली-सी छाया उसकी ओर बढ़ी चली आ रही है। दो-चार कदम जब वह सामने आ गई तो छाया नहीं रही। वह एक जवान और नंगी औरत थी।

उसके पूरे शरीर में कहीं कोई कपड़ा नहीं था। गले से स्तन तक झूलती लाल घुंघचियों की केवल एक माला थी, जो उसकी कोयले-सी काली देह में आग की तरह चमक रही थी। इस लड़की की आंखों से आंसुओं की, नाले की तरह लगातार एक धार-सी निकल रही थी और उसके पूरे शरीर को धोती हुई ज़मीन पर गिरकर एकदम सूख जाती थी। उसका चेहरा डरावना था। गोरे का मुंह जैसे किसीने बन्द कर दिया था। वह कांप रहा था और आंखों के सामने उसे केवल उस लड़की का भयानक चेहरा ही दिख रहा था। उसने जैसे ही उठने की कोशिश की, किसीने उसके पैर पकड़कर उसे पछाड़ दिया। उसने दो-तीन कुल्लाटें भरीं और बिस्तर से दूर ज़मीन पर जा पड़ा। नीचे गिरते ही उसके मुंह से ज़ोर की चीख निकली।

आवाज़ सुनकर बाजू में पड़े काले अफसर और सिपाही कंडील लेकर दौड़े। उन्होंने दरवाज़े पर दस्तक दी। धक्का देकर दरवाज़े को खोला तो गोरे को ज़मीन पर अचेत पड़ा पाया। उसके सिर में चोट आ गई थी और वहां से खून निकल रहा था। कंडील लेकर सिपाहियों ने महल के चारों ओर देखा। सभी ओर गहरी खामोशी थी। सामने गांव का घोटुल था। वह भी अब शांत था। उसके अहाते में आग की हल्की-सी चिनगारी कभी-कभी दिख जाती थी।

गोरे के घायल होने की बात सवेरा होते ही गांव भर में हवा की तरह फैल गई। गायता ने जब यह सुना तो दौड़कर सिरहा के दरवाज़े खटखटाए और शाम की सारी बात उससे कह दी। गांव भर में यह खबर फैल गई कि झिरिया ने हुज़ूर को दबोच लिया है। गायता ने यही बात काले अफसर से कही, पर उसने बात नहीं मानी। बोला, 'हम भूत-प्रेत नहीं मानता। यह तुम लोगों का बहम है।' गांव के हर आदमी ने अफसर को समझाया। आखिर गोरे का बिस्तर राजामहल से उठवा दिया गया और थानागुड़ी में उसकी खाट डाल दी गई।

गोरे अफसर के सारे साथी चिन्तित थे। एक आदमी को नारायनपुर भेजा गया। वहां से घंटे भर में 'डागधर' आ गया। उसने 'स्थेटिस्कोप' लगाकर गोरे की कई बार परीक्षा की। वह चक्कर में था। बीमारी क्या है, उसकी समझ में नहीं आ रही थी। फिर भी उसने दो-चार किसम की गोलियां दीं, दो-तीन इंजेक्शन लगाए पर असर कुछ नहीं हुआ। हताश होकर उसने सलाह दी कि, गोरे को जगदलपुर के बड़े अस्पताल में तुरन्त भेज दिया जाए।

गायता और सिरहा वहां हाज़िर थे। गायता ने सिरहा की तारीफ के पुल बांधने शुरू कर दिए। उसने बताया कि एक बार वह एक मरे लड़के को जिला चुका है। उसे मरे एक घंटा हो गया था। जब सिरहा को पता लगा तो उसने झाड़-फूंक की। लड़के के सिर से एक 'जूं' निकालकर उसके खून से हवन किया। उसकी भस्म को एक पत्ते में लपेटकर वह उसे नदी में बहाने ले गया। जब वह लौटकर आया तो लड़का खेलता हुआ मिला।

काले अफसर ने यह सुना तो गायता को फिर डांट दिया। बोला, 'बेवकूफ बनाता है, हुजूर की जान लेना चाहता है ?' लेकिन न जाने क्यों डागधर को गायता की बात पर भरोसा हो गया। उसने सिरहा को अपना कमाल दिखाने का समय दिया।

सिरहा झाड़ू का एक टुकड़ा हाथ में लेकर ज़मीन पर बैठ गया। सामने एक सूप में उसने थोड़े नुका (चावल) रख दिए। हाथ में पानी लेकर उसने मंतर पढ़ना शुरू कर दिया। एक मंतर खतम होता और चुल्लूभर पानी वह गोरे के मुंह पर दे मारता। काफी देर तक वह यह करता रहा। फिर उसने हवन किया और कट्टुल के जैसे ही दो चक्कर काटे कि गोरा सांप की तरह अंगड़ाई लेने लगा। सिरहा ने आगे बढ़कर एक हाथ से उसकी बाईं कलाई पकड़ी और दूसरे से झाड़ू का टुकड़ा लेकर उसके चारों ओर घुमाया। थोड़ी लांदा (शराब) ज़मीन पर डाली और मंतर दुहराए कि गोरे ने आंखें खोल दीं। वह अपने आप न जाने क्या बड़बड़ाने लगा।

सिरहा का चेहरा खुशी से फूल उठा। वह खड़ा हो गया। खड़े होकर उसने फिर मंतर पढ़े। अब गोरा एकटक सिरहा की ओर देखने लगा था। सिरहा ने उसकी आंखें बांध ली थीं। हाथ आगे-पीछे खींचते हुए उसने पूछा, 'बता, तू कौन है ?'

गोरे ने उत्तर दिया, 'झि····रि····या !'

सिरहा मंतर पढ़ता गया और प्रश्न पर प्रश्न बराबर करता गया।

'तूने इसे क्यों दबोचा ?'

'मेरी कट्टुल पर सोया। नारायनदेव का अपमान किया, गायता को मारा, मैं नहीं छोड़ूंगी, खून पी जाऊंगी।'

सिरहा ने फिर एक झाड़ू घुमाई। बोला, 'क्या कहा ? खून पीएगी ?····

हमारे अन्नदाता हैं।'

'कोई हों।'

'उनसे गलती हो गई।'

'नहीं, नहीं छोड़ूंगी, खून पीकर रहूंगी!' गोरे के मुंह से इतनी अच्छी भाषा सुनकर 'डागधर' और काला अफसर दोनों आश्चर्य में थे। वे खड़े-खड़े सारा तमाशा देख रहे थे। सिरहा और झिरिया के बीच खींच-तान चल रही थी। झिरिया गोरे को ज़िन्दा छोड़ने के लिए तैयार नहीं थी और सिरहा छुड़ाने के लिए कमर कस चुका था। बातचीत की खींचातानी के बीच एकाएक उठकर गुनिया ने गोरे के गाल में जैसे ही एक तमाचा मारा कि उसकी आवाज़ लड़खड़ाने लगी। वह रोने लगा, 'मुझे छोड़ दो''''छोड़ दो।'

काले अफसर को क्रोध आ गया। सिरहा की यह हिम्मत देखकर उसकी आंखों से खून चुआ जा रहा था। उसने अपना हंटर संभाला परन्तु डागधर ने हाथ मारकर उसे नीचे कर दिया। वह बड़े गौर से सारे परिवर्तन देख रहा था। अन्त में झिरिया, गोरे अफसर को छोड़ने के लिए तैयार हो गई। एक नारियल फोड़ा गया और घी, शक्कर का होम देकर धीरे-धीरे सिरहा दरवाजे के बाहर गया। नीचे उतरकर मैदान में उसने झाड़ू का टुकड़ा गाड़ दिया और आकर गोरे के सिर पर जो हाथ फेरा तो उसने आंखें खोल दीं। गोरे की आंखें भारी थीं। लगता था जैसे वह भारी नशे में चूर था और अभी उसका नशा उतरा है। 'डागधर' ने 'स्थेटिस्कोप' से फिर उसकी परीक्षा की, बोला, 'अब हुज़ूर ठीक हैं?'

'ठीक हये।' गोरा बिस्तर से उठ बैठा। उसने दौड़कर सिरहा को गले लगा लिया, 'टुमने अमारा जान बकशा।' वह जेब से दस रुपये का एक नोट निकालकर बक्शीस के रूप में सिरहा को देने लगा तो उसने लेने से इनकार कर दिया। बोला, 'नहीं सिरकार, हम तुम्हारा दिया ही तो खाते हैं। तुम ही तो हमारे अन्नदाता हो।' गोरे के बहुत कहने पर भी सिरहा ने बक्शीस नहीं ली।

गोरे के लिए अब उस गांव में पल भर भी ठहरना मुश्किल हो रहा था। उसने अफसर को हुक्म दिया कि हम लोग इसी समय गांव छोड़ देंगे। आज्ञा मिलते ही सिपाही तैयारी में लग गए। दोनों घोड़े कस दिए गए। गोरे ने थानागुड़ी से निकलकर चारों ओर देखा। सामने राजामहल था। उसे देखते

ही रात की सारी घटना उसकी आंखों के सामने घूमने लगी। उसने आंखें बन्द कर लीं और घोड़े पर सवार हो गया। चलते-चलते गोरे ने गायता और सिरहा की पीठ ठोंकी और अफसर को आदेश दिया कि दोनों को दो-दो एकड़ ज़मीन सरकार की ओर से मुफ्त दी जाए। गायता और सिरहा ने उसके सामने सिर झुका दिया, 'हुज़ूर हमारी गल्तियां माफ करें। अब कब आएंगे ?'

'ने····व····र' कहते हुए उसने घोड़े को एड़ लगाई और घोड़ा आगे बढ़ गया। सामने से महुआ अपनी सखियों के साथ नाले से मुंह धोकर आ रही थी। उसे देखकर काला अफसर गोरे की बराबरी से अपना घोड़ा लाया और बोला, 'हुज़ूर, खूबसूरत लौंडिया।'

'नो, नो···' गोरा झल्लाया, 'जंगली आडमी···अमको खा जाएगा····अम उसको डेखना नयीं मंगता !'

घोड़े हवा से बातें करने लगे और साल, अर्मा, महुआ तथा सागौन के जंगल पीछे छूटते गए।

२

गढ़ बंगाल का घोटुल !

नरायनपुर से सिर्फ तीन मील दूर, दक्षिण में, नाले के उस पार, गांव से लगा, पर गांव के बाहर। दिन भर सोता रहता है। चिड़िया भी नज़र नहीं आती। पोरद[1] पच्छिम की पहाड़ी में आंख मूंदता है, इसके भाग जाग जाते हैं। नींद टूट जाती है। झोरिया[2] आता है। उसके साथ दो-तीन साथी। सब खरहरा उठाते हैं। घोटुल का कोना-कोना साफ कर जाते हैं। उसे जगा जाते हैं। वह आंख खोले किसीकी प्रतीक्षा करता है। जब चांद कुछ ऊपर आ जाता है, गांव के कुत्ते रह-रहकर भूंकने लगते हैं तो गांव की हर गैल घोटुल को जाती

---

१. पोड़द या सूरज

२. घोटुल का वह अफसर जिसके जिम्मे घोटुल की सफाई का काम रहता है।

है। गांव का हर पेड़गा और हर पेड़गी बगल में गीकी[१] दबाए घोटुल पहुंचता है। पहले पहुंचने वाला देर से आने वाले दूसरे साथी का द्वार पर स्वागत करता है। दूसरा, तीसरे का। तीसरा, चौथे का। बस, यही क्रम चलता है। लड़कियों का सिंगार देखते बनता है। दिन भर अपने को वे आवारा भले रहें, रात को वे लगन से संवरती हैं। बालों में प्यार से लहरियां डालती हैं। पड़िया[२] खोंसती हैं। एक नहीं, दो, तीन, चार या उससे भी ज़्यादा। पड़िया उनकी ज़िंदगी है। किसी प्रीतम के प्यार की निशानी। इसे उन्हें कभी खरीदना नहीं पड़ता। उनका प्रेमी उन्हें भेंट करता है। पड़ियों से एक प्रेमी की अगाध प्रीत या कई प्रेमियों के प्यार का परिचय मिलता है। गले में रंग-बिरंगी मालाएं! लाल-सफेद घुंघचियों की। मोतियों की। कांच की रंगीन गुरियों की या लाख की गोटियों की। मालाओं से गला भर जाता है और वे स्तन तक झूलन लगती हैं। स्तन बेपरवाह खुले रहते हैं। उन्हें ढकें वे लड़कियां जिन्होंने प्रेम करना नहीं जाना! जो प्रेम को पाप समझें! प्रेम जिनके लिए गिरगिट की तरह है! जो उससे भूत की तरह भागें या भय खाएं! इन लड़कियों में भय नहीं। प्रेम उनके लिए व्यापार नहीं। प्रेम उनके लिए नया पाठ नहीं। न उसे वे पाप समझते। प्रेम उनका देवता है। प्रेम उनकी ज़िंदगी है। पहाड़ के पत्थरों को वे दिन भर छाती में धरती हैं। जंगलों के कांटों से हर घड़ी उन्हें लड़ना पड़ता है। रात को सब कुछ खतम हो जाता है। सब दुःख डूब जाता है। रात उनकी राजधानी है और वे रात की रानी हैं। उनके पैरों की पायल मधुर झंकार बिखेरती है। रात के सुरों में सुर मिलाती है। और यही सजी-धजी रानियां घोटुल की मोटियारी हैं।

चेलिक उनका प्रेमी। वह भी सज-संवरकर घोटुल में आता है। उसके गले में डगरपोल[३] होता है। कान में छोटी-छोटी बालियां। वह कभी न ये बालियां खरीदता, न डगरपोल। वह अपनी मोटियारी को प्रेम की भेंट देता है तो मोटियारी से भी इन्हें भेंट के रूप में पाता है। इस हाथ दे, उस हाथ ले। न कभी देर, न कभी अंधेर।

---

१. चटाई २. कंघी

३. गुरियों की माला जो चेलिक को उसकी प्रेमिका मोटियारी भेंट करती है।

धीरे-धीरे सब घोटुल में पहुंच जाते हैं। घोटुल को छोड़कर सारा गांव नींद में सोता है। गांव की हर झोंपड़ी में पति-पत्नी होते हैं या तीन-चार बरस से कम के लड़के-लड़कियां। बाकी सब घोटुल में आकर अपनी जगह में गीकी बिछा देते हैं। यह उनका बिछौना है। घोटुल का हर सदस्य गीकी से बंधा है। गांव की हर गीकी घोटुल से बंधी है।

सब पहुंच जाते हैं तो सिरदार आता है। सब मिलकर उससे जुहार करते हैं। सिरदार उनका मुखिया है। घोटुल का लीडर (नेता) है। यहां का हर काम उसकी मरज़ी से होता है। सिपाही एक बार हुक्म अदूली कर सकता है, पर घोटुल का कोई सदस्य सिरदार की बात नहीं टाल सकता। टाले भी क्यों? वही सब मिलकर तो उसे चुनते हैं। वही उसे लीडर बनाते हैं। वह भी अपना धरम निबाहता है। न निबाहे तो पद से हटा दिया जाए। सारे सदस्यों की राज़ी-खुशी पूछता है। सबकी हाज़िरी लेता है। उसके कई सहायक हैं, लड़के भी और लड़कियां भी। बेलोसा, और दुलोसा कुमारियों की रानियां हैं। तिलोका, निरोसा, पियोसा, जानको और मालको घोटुल की ऐसी लड़कियां हैं, जो सफाई करतीं, पत्तों के दोने बनातीं और दूसरा काम करती हैं। दीवान और मुखवान घोटुल के बुद्धिमान् कुमार सदस्य होते हैं। यहां के हर सदस्य के भले-बुरे कामों को ताकना उनका काम है। कोटवार और चलान सबकी उपस्थिति और काम बांटने के लिए ज़िम्मेदार हैं। मुंशी, घोटुल के सदस्यों का हिसाब-किताब रखता है। झोरिया घोटुल की सफाई के लिए ज़िम्मेदार है और जमादार यह देखता है कि कोई मोटियारी बिना पड़िया के तो नहीं है। चालकी सबको तम्बाकू बांटता है और उत्सवों में भाग लेता है।

घोटुल इस गांव की सम्पति है। गांव भर के लोग मिहनत कर इसे बनाते हैं। आज जो चैन से घर में सो रहे हैं, कभी यहां के सदस्य थे। शादी की और घोटुल ने इन्हें दुलत्ती मारी। तब वे यह सोचते बिदा लेते हैं कि उनके भी लड़के-लड़कियां होंगे। उनकी तरह वे भी यहां आएंगे, खेलेंगे और मौज करेंगे।

घोटुल गांव की रखवाली करता है। यहां के जवान सदस्य गांव के सिपाही हैं। गांव में जाने वाले को पहले इनसे मुठभेड़ लेनी होती है।

यहां हर पिरेमी की एक प्रेमिका होती है और हर प्रेमिका अपने पिरेमी पर शासन करती है। ये प्रेमिका समय-समय पर बदल सकते हैं। रात को काफी

देर तक यहां किस्सा, कहानियां, नाच-गाना होता रहता है और जब चांद सिर पर चढ़कर नीचे गिरने को मुंह औंधा करता है तो प्रत्येक पिरेमी अपनी प्रेमिका को लेकर गीकी से बंध जाता है। मुर्गे की बांग होते ही फिर घोटुल धीरे-धीरे खाली होने लगता है। घोटुल का सिरदार आखिर सिरदार है। वह जिस लड़की को चाहे अपने साथ सुला सकता है। दो लड़कियां भी उसका साथ दे सकती हैं और वह न चाहे तो एक भी नहीं।

घोटुल कच्ची मिट्टी की फूस की एक छोटी-सी झोंपड़ी है। बीच में खासा खुला मैदान। चारों ओर परछी। परछी की दीवालों पर कई चित्र। आड़े-तिरछे, सीधे-टेढ़े। घोटुल के सारे सदस्य अपनी मरज़ी से लगन के साथ इन्हें बनाते हैं। उनकी कला इन चित्रों में बोलती है। उनके चित्र उनकी ज़िन्दगी का इतिहास कहते हैं। घोटुल के खुले मैदान के बीच में आग जलती रहती है। यही उनका उजेला है। यही जंगली जानवरों से उनकी रक्षा करती है।

सुलकसाए! कितना मीठा नाम है! और यही नाम तो गढ़ बंगाल के घोटुल का सिरदार है। ऊंचा पूरा हट्टा-कट्टा। सत्रह बरस का जवान। पत्थरों जैसी कठोर धुआंरी देह। बात का पक्का और काम का पूरा। मन में कुछ ठान ले तो करके छोड़े और मन न चाहे तो दुनिया की ताकत उससे कुछ न करा सके। तीन बरस हो गए घोटुल का कोई सदस्य उसे छोड़ने को तैयार नहीं है। हर साल चुनाव होता है। हर साल वही सिरदार चुना जाता है। उसकी बराबरी का दूसरा कोई आदमी जैसे इस घोटुल में मिलता ही नहीं। वह भी खुश है। काम करने का उसे मौका मिला है। कहता है, 'इसका पिरेम मेरी ज़िन्दगी है। दादाल से गांव की सेवा में अपना तन-मन दे दिया है। मैं घोटुल की सेवा करूंगा।'

महुआ जब यह सुनती है तो चुटकी ले देती है। वह चुलबुली लड़की है। कहती है, 'जिन्दगी यहीं गुजारेगा रे!'

'काश, गुजार पाता'—महुआ खूब हंसती है। हंसते-हंसते ज़मीन पर लोटने लगती है। उसकी सखियों का भी यही हाल होता है। सिरदार का मज़ाक उड़ाने में उन्हें मज़ा आता है। महुआ ने लूघर हाथ में उठाया। उसकी रोशनी में सिरदार की सूरत देखी और अजीब ढंग से नाक-भौं बनाते बोली, 'मुनीजी, राजा-महल में चमीटा गाड़ लो न!'

सिरदार मज़ाक समझ गया। उसने महुआ की कलाई इतनी ज़ोर से दबाई कि वह कांव कर रह गई। लूघर ज़मीन पर गिर गया। बोला, 'चमीटा गाड़ूं ! वह भी राजामहल में ? तब तुझे चुड़ैल बनना होगा।'

'हि श् श्‌श्। ऐसा नहीं कहते।'

'मज़ा आ गया रे सिरदार।'

'क्या हुआ ?' उसने गर्दन उठाकर देखा।

'कमाल है मेरे शेर।'

'कुछ बोल झालरसिंह।'

'हि हि हि, हा हा हा; राजामहल !'

'राजामहल ! क्या है ? चुड़ैल........!'

'हि हि हि, हा हा हा, चुड़ैल वह हो गोरे के लिए। हमारे लिए नहीं। धन्न झिरिया धन्न। बड़े देव तुझे उमर दें। तूने गांव की लाज धर ली.....।'

'वरना......।'

'म....हु...आ'—सारी मोटियारी एक साथ मिलकर हंसी, 'बेचारी महुआ !'

महुआ ने दोनों हथेलियां अपने मुंह पर रखलीं, 'क्यों शरमाती है साइगुती ? गांव में अकेली है, सबकी नजरें सीधी पड़ती हैं। हां भाई, महुआ जब फूलता है...तो चार को कौन देखे !'

'महुआ नहीं, चम्पा कह लो'—महुआ ने हथेलियां हटा ली थीं और उसके चेहरे पर हलकी-सी लाल रोशनी पड़ रही थी, 'वह चम्पा जिसके पास कभी भौंरा नहीं जा सकता।'

जलिया हंसी। उसका साथ झालरसिंह ने दिया। दोनों ने तालियां बजाईं तो सारे घोटुल ने नकल की। बस, अकेला सिरदार था जो चुप खड़ा था। तालियों की गड़गड़ाहट जब कम हुई तो जलिया बोली, 'अरी चम्पा, अब काहे को सीना तानती है ? अलवेतू[1] जाकर झिरिया की पूजा कर, वरना कल रात भौरों ने फंसा ही लिया होता। बड़ी बातें करती है। सब धरा रह जाता।' सारे दांत चमकाकर महुआ ने बनावटी हंसी से हंस दिया। दाहिना हाथ सामने बढ़ाकर

---

१. सुबह

वह बोली, 'क्या समझे है जलिया; महुआ को पुतरिया ?'

'सो तो नहीं'—तीन-चार मोटियारी एक साथ बोलीं, 'वह तो खूब खिला पुंगार[1] है, पुंगार। हम देख रही हैं न।'

महुआ समझ गई, सब मिलकर उसे बनाना चाहती हैं। उसने टेंट से एक पुड़िया निकाली। झालरसिंह को बुलाया। जब वह पास आ गया तो उसने कहा, 'इसे चख भला, कितनी मीठी है!'

'क्या ?'

'वही, मिठाई रे।'

'इत्ती-सी!'

'यही क्या कम है ?'

'ला, दे।'

महुआ ने अपनी जीभ ओंठों के चारों ओर फिराई और नाक सिकोड़कर सिर हिलाते बोली, 'ला, दे!···जीभ में पानी आ गया ? आंखें बन्द कर और जलिया की याद कर।'

झालरसिंह ने सचमुच आंखें बन्द कर लीं और हाथ जोड़ लिए। महुआ ने पूछा, 'क्या दिख रहा है ?'

'तू।'

'हि श् श् नईं मिलता। वह देख कौन खड़ी है तेरे सामने; जलिया; कह; जलिया है न ?'

'हां, कुछ-कुछ दिख रही है।'

'तो मुंह खोल।'

उसने मुंह खोला। महुआ ने ज़मीन से थोड़ी-सी मिट्टी उठाई और उसके मुंह में भर दी। हड़बड़ाकर उसने आंख खोली और मिट्टी थूक दी। पर अब तक सारा घोटुल हंसी में डूब गया था। महुआ ने झालरसिंह का हाथ पकड़ा, बोली, 'जानता है, यह क्या है ?'

झालरसिंह बुत बना खड़ा रहा। उसका चेहरा उतर गया था। महुआ ने सबके सामने उसे बुद्धू बनाया था।

---

१. जंगली फूल

'माहुर'[१] है माहुर'—महुआ बोली।

झालरसिंह ने मुंह फाड़ दिया, 'किसलिए ?'

'वह, वही तेरी जलिया कहती है न, रात को भौंरा फंसा लेता। नहीं जानती भौंरा पास आता तो माहुर उसके मुंह में रख देती।'—सब तरफ हलकी-सी हलचल मच गई। सुलकसाए ने महुआ के हाथ से माहुर छीनकर फेंक दिया और उसे छाती से लगा लिया। जलिया की आंखें भी झुक गईं। सारा घोटुल एकदम चुप हो गया।

'यह क्या महुआ ?' सुलकसाए उसके सिर पर हाथ फेर रहा था।

'कुछ नहीं सुलक, कुछ नहीं। तेरी साइगुती हूं न ! उस सुलक की जिसने कल चौराहे पर ज़रा-सी बात में कमान खींच ली थी।'

सुलकसाए उसे छोड़कर चुपचाप कट्टुल पर बैठ गया। उसका हाथ अपने सिर पर था। न जाने वह क्या सोच रहा था। महुआ के अगाध पिरेम की थाह लगा रहा था या उस परिणाम की आशंका से भयभीत था जो गोरे को माहुर देने के बाद होता।

'सुना है गोरा कोई बड़ा अफसर है ?' सूबेदार ने पूछा।

'हां सूबेदार !' सिरदार ने सिर ऊपर उठाया। उनकी आवाज़ धीमी थी और चेहरे का तेज गायब हो गया था, 'दादाल ने बताया था, जगदलपुर रियासत का सबसे बड़ा अफसर है।'

'नहीं रे, हमारे मालिक तो राजा रुद्रप्रतापदेव हैं।' झालरसिंह ने कहा।

'हां झालर थे, पर सुना है अब गोरे आ गए हैं और सब कुछ वही करते हैं। हमारे राजा का नाम भर चलता है। न जाने राजा ने क्या किया था ?'

'सुना है दुनिया भर में सब जगह गोरे ही राज करते हैं। बस, हमारे यहां भर राजा रुद्रप्रताप हैं या एक राजा कांकेर में और एक राजनांदगांव में'—महुआ ने कहा।

'अब कांकेर और राजनांदगांव रियासत में भी अंग्रेज आ गए हैं, यहां की तरह।' सिरदार बोला।

---

१. एक प्रकार का भयंकर ज़हर। यदि यह ज़रा भी खून में मिल जाए, तो बड़े से बड़ा जानवर तत्काल ढेर हो जाता है।

'आखिर क्यूं ?' जलिया ने पूछा।

'न जाने। शायद राजा ने इन्हें बुलाया हो। बिना बुलाए भला कोई आता है ?'

'और इत्ते बड़े अफसर की तू माहुर खिलाकर जान ले लेती ? दिमाग तो ठीक है न महुआ···?'

'हां सिरदार ठीक है।' महुआ निश्चित थी।

'और सारा गांव तबाह हो जाता तो ?'

महुआ ने हंसकर अपना बायां हाथ सिरदार के सिर पर दे मारा। बोली, 'सच, पागल हो गया है तू; और तुम सब भी। यह गांव क्या आसपास के गांव भी जानते हैं कि राजामहल में चुड़ैल रहती है। गांव भर ने अफसर को रोका था, वह उस महल में न ठहरे। वह अकड़कर कहता था, 'टुमारा चुड़ैल देखेगा।' चुड़ैल देखी न उसने रात को ! तब एक ही चुड़ैल थी—झिरिया ! जब दूसरी चुड़ैल जाती तो जान लेकर आती। अरे, धन्य मानो रे अपने पुरखों को। दुनिया कहती है—हम जंगली-गंवार हैं। हमारे गांव की हर गैल में देवता रहता है। हर झाड़ में भूत बसता है। नदी के किनारे प्रेत रहता है और हर खंडहर में चुड़ैल। कित्ता सच कहते हैं वे ! बोलो रे, यह सब न कहा जाता तो न जाने कब के हम और हमारे गांव धूल में मिल गए होते !'

'सच कह रही है महुआ।' जलिया बोली।

महुआ ने आंखें निकालीं और दांत दिखाए—'सच कहती है !' उसने झालरसिंह की पीठ ठोंकी फिर सिरदार के सिर पर हाथ मारा, 'तुम गोंड हो न ? लोग कहते हैं गोंड आदमी नहीं, पत्थर होता है। वह लोहा चबाता है और जिन्दा शेर के दांत उखाड़ता है। पर····पर सब कहने का है। सब चांद की चांदनी की बात करते हैं, कोई नहीं जानता चांद के पीछे क्या है ? तुम सब दिलेर गोंड, और डर गए उस अफसर से ! इसलिए कि वह आदमी है। यानी तुम सब जानवर हो, तो ऐसे जानवरों का अन्त होना चाहिए, सिरदार ! मैं तो माहुर से अफसर की जान ले लेती और यदि दुनिया यह कहती कि झिरिया ने मालिक के प्राण लिए तो मैं सीना तानकर चिल्लाती कि नहीं, झिरिया निर्दोष है, जान मैंने ली है; मैंने। और····जब सारा गांव कुचला जाता, गांव में आग लगाई जाती, तो मेरी छाती तर हो जाती। मैं खड़ी-खड़ी सब तमाशा देखती।

हि···हि···हि···हा···हा···हा···जानवर···दि···ले···र···गोंड !'

सिरदार ने महुग्रा का हाथ पकड़कर मोड़ दिया। हाथ में लोच पड़ा तो उसकी सारी देह लचक गई। दूसरे हाथ से सिरदार के हाथ पर एक घूंसा मारती बोली, 'छोड़····जानवर····!'

सिरदार ने हाथ खींच लिया। एक लम्बी सांस ली। बोला, 'खूब हो गया महुग्रा। तूनें जी भर कह लिया। ग्रब बस कर। तू सच कहती है, बहुत सच। ग्रब हमें ग्रौर नीचा न दिखा।'

सारा घोटुल शान्त था। किसीके मुंह से कोई शब्द नहीं निकल रहा था।

सिरदार ने ज़ोर से कहा, 'खड़े क्यों हो ? जाग्रो सब काम करो।'

सिरदार की बात सबने मान ली ग्रौर सब ग्रपने-ग्रपने काम में लग गए। सुलकसाए का मन उचाट खा चुका था। वह चुपचाप भीतर चला गया ग्रौर ग्रपनी गीकी से बंध गया। महुग्रा की ग्रांखों में हलके-से ग्रांसू ग्रा गए। उसने ग्रपने साइगुती का दिल दुखा दिया था। गुस्से में ग्राकर वह न जाने क्या-क्या कह गई थी। ग्रपने साइगुती की बाजू में जाकर वह भी सो गई। बाहर घोटुल के सदस्य नाचते-गाते रहे, परन्तु रह-रहकर वे रात भर किसीके सिसकने की ग्रावाज़ बराबर सुनते रहे।

३

बीस बरस पहले !

बिंझली की गलियों में ज़िन्दगी बहती थी। जहां से वह निकल जाती एक चिराग जल उठता। उसके जाते ही पूनों की रात सूनी ग्रौर ग्रंधेरी लगती। पके मक्के के रेशों जैसे सफेद बालों में भी हलकी-सी हलचल हो जाती। तब जिनकी उमर ग्रभी उठ रही है, उनका क्या कहना ! भेड़ का रेड़ लेकर वह गलियों से गुज़रती थी तो न जाने कितने उससे हमदर्दी से पूछते थे, न जाने कितने ग्रड़-कर पगडंडी में खड़े हो जाते थे।

उस दिन वह लौटी। पोरद का मुंह तब तवा जैसा लाल था। गेंवड़े पर

उसने रेड़ की रास ढील दी। एक लम्बी हकार लगाई। भेड़ों ने जैसे ही आज़ादी पाई कि अपने-अपने गैल घर की तरफ थूंथने मोड़ दिए। कोरी के पास पचलू से भेंट हो गई। पचलू बोला, 'आज तो बछेरी बनी है री !'

'हां दादाल'—मुंदरी के दांत उस झुटपुटे में भी चमक रहे थे। लालतुरई के फूल जैसे उसके होंठ अपने आप बज उठे।

'सो क्यों ?' पचलू ने पूछा तो वह जी खोलकर खिलखिलाई और अपने नाक-नक्शे को विचित्र ढंग से बनाकर, हाथ में गुलेल खेलते, मेंढक की तरह आगे उचट गई। पचलू खड़ा देखता रहा। गेंवड़े के मोड़ पर सन्तू का कुत्ता था। उसे देखकर भौंकने लगा तो उसने कान पकड़कर दो थप्पड़ उसके सिर पर जड़ दिए—'दुर्ररररे।' और वह दुर्रर हो गया। कुत्ता तो भाग गया पर पीछे से सन्तू ने उसके हाथ पकड़ लिए, 'मेरे जानवर को दलकारती है !'

'दलकारूं नहीं तो क्या पूजा करूं ? भला तू ही बता, उसे क्या पड़ी थी, वह मेरा रास्ता रोके ?' सन्तू मुंह से कुछ नहीं बोला, खड़ा-खड़ा मुंदरी को निहारता रहा। वह क्या देख रहा था, वही जाने; पर दिसा-फिराकत से पटेल हाथ में लुटिया लिए लौट रहा था। उसे देखकर दोनों उत्तर-दच्छिन चले गए।

मुंदरी उस रात सो नहीं सकी। नदिया के तीर की कगारें रह-रहकर उस की आंखों में झूलती थीं। वह एक पत्थर पर बैठी चुल्लू से पानी पी रही थी कि सामने छप्प की आवाज़ हुई। घबड़ाकर उसने देखा, भारी सांभर था। वह चिल्लाई तो छिवला की डाल हिलाता हिरमे घटिया से नीचे उतर आया। तरकस से एक तीर निकालकर उसने ऐसा निशाना साधा कि पानी पीता सांभर वहीं मछली की तरह तलफने लगा। हिरमे ने कमर भर पानी से नदिया पार की। फरसे से जब सांभर ढेर हो गया तो उसने गले के पास मुंह लगाकर खून पीना शुरू कर दिया। मुंदरी देख रही थी। उसे यह सब अच्छा नहीं लगा, बोली, 'जानवर है रे !' हिरमे की जीभ खून चाटने में लगी थी, उसने सुनी-अनसुनी कर दी। मुंदरी के मन ने भी विद्रोह कर दिया था। नदिया पार कर वह पास पहुंच गई। पीछे से उसने हिरमे को एक धक्का दिया, 'यह क्या कर रहा है रे ? घर ले जा तो बियारी में उसका सोंधा-सोंधा मांस उड़ जाए। तू तो शेर बना है।'

हिरमे तनकर खड़ा हो गया। वह जीभ बराबर होंठों पर चलाता रहा।

बोला, 'आज शेर भी आ जाए तो खून पिए बिना न छोड़ूं री।'

'धत् तेरे की...आदमी है !' मुंदरी ने दोनों हाथ उसके कंधे पर दे मारे और बनावटी हंसी में दांत निकाल दिए।

हिरमे ने फिर ऊचाट भरी, नदिया के उस पार पहुंचा। छिवला की डाल से तूम्बा निकाल लाया और गटगट कर शराब पीने लगा। आधा तूम्बा उसने एक ही सांस में खाली कर दिया। उसने मुंह जब तूम्बा से निकाला तो मुंदरी ने और शराब पीने से उसे रोका, 'ज्यादा हो जाएगी रे।' हिरमे हंसा। उसने मुंदरी के दोनों हाथ पकड़ लिए और तूम्बा उसके मुंह में जबरन लगा दिया। मुंदरी को शराब पीनी पड़ी। जब तूम्बा खाली हो गया तो हिरमे ने उसे ज़ोर से उत्तर दिशा की ओर फेंका, 'जा रे, ठिकाने लग।' तूम्बा घटिया के पार कहीं ठिकाने लग गया।

मुंदरी और हिरमे दोनों मस्त थे। नये लांदा की नई शराब भला अपनी गुलाबी छोड़ सकती है ! दोनों ने उतरकर नदिया में खूब गोते लगाए। दोनों झूमते जब पानी से निकले तो बुढ़िया ग्वालिन दही बेचकर उसी रास्ते गांव लौट रही थी। इन्हें देखकर वह खड़ी हो गई पर मुंदरी ने अपनी जीभ बाहर निकालकर उसे चिढ़ाया और हिरमे का हाथ खींचकर ले गई। बुढ़िया ग्वालिन अपने आप कुछ बुदबुदाती चली गई।

झुरमुट में दोनों बैठे बातें कर रहे थे। मुंदरी ने कहा, 'तुझपर तो मैं जान देती हूं रे, पर दईमारा सन्तू हाथ धोकर पीछे पड़ा है। रोज मेरी देहरी छूता है और बीर[1] के कान भरता है। बीर है सो उसपर जान देता है। जान क्यों न दे, दोनों चिलम-भाई जो ठहरे। दम-भाई सो सगा भाई।'

'तू भी मच्छर की बात करती है। एक हाथ में पिसकर पानी हो जाएगा। तू भर अपना मन न डुलने दे। देखता हूं तुझे कौन व्याहता है ?'

'पर मुसीबत तो यह है हिरमे, कि तापे कहता है, तू आन गांव का है। सन्तू मेरे मामा का लड़का है और हमेशा दूध लौटाने[2] की बात करता है।

---

१. भाई
२. दूध लौटाना एक प्रथा है। जिस वंश में एक लड़की ब्याही जाती है, उसी वंश से एक लड़की लेने का अधिकार ब्याहने वाले वंश को होता है। इस प्रथा को 'दूध लौटाना' कहते हैं।

कहता है, मुंदरी को लेकर रहूंगा।'

'चिन्ता न कर मुंदरी। तेरा तापे बड़ा आदमी है और तू उसकी इकलौती बेटी है। वह तेरी मर्जी के खिलाफ नहीं जाएगा।'

मुंदरी का मन फूल उठा और हिरमे की गोद में उसने अपना सिर रख दिया।

रात भर मुंदरी न जाने क्या-क्या सोचती रही। बूढ़ी ग्वालिन को उसने चिढ़ाया था। वह न जाने गांव में जाकर क्या बकेगी? सबेरे हुआ भी यही। ग्वालिन ने नाले के तीर पर जो देखा था, गांव भर में बो दिया। सन्तू ने जब सुना तो उसे आग लग गई। उसका साथ गांव के बूढ़ों ने दिया और जवानों ने भी। बूढ़ों ने इसलिए कि मुंदरी के बाप को दूध लौटाना चाहिए। समाज के नियमों को तोड़ने की ताकत उनमें नहीं थी। उनका ख्याल था कि लड़की की मरजी की कोई क़ीमत नहीं होती। इस उमर में विवेक की जगह बहकावा और ऊपरी दिखावा अधिक होता है। जवानों का साथ देना स्वाभाविक था। मुंदरी जहां से निकलती थी, बिजली चमक जाती थी। उसकी चकाचौंध में न जाने कितने युवक अपने को लुटाने को तैयार थे, पर मुंदरी ने कभी किसीको तिरछी आंखों भी नहीं देखा। परकी साल जरपू फांसी लगाकर मर गया, सिर्फ इसलिए कि उसने मुंदरी से तम्बाकू मांगी[1] थी। उसने उसके बदले एक डंडा सिर पर दिया था। घोटुल में भी मुंदरी ने कभी जरपू का साथ नहीं दिया। और वह था, जो दिन-रात उसकी माला फेरता। जब वह हाथ आते न दिखी तो उसने जान ही दे दी। एक बार पटेल के लड़के ने ज़ोर-ज़बरदस्ती की थी तो उसे तीन दिन तक खाट सेना पड़ा था। मुंदरी ने भेड़ों के हकालने के डंडे से उसकी बेजा मरम्मत की थी।

सारे गांव में हंगामा मच गया। मुंदरी की सहेलियों ने समझाया कि वह बूढ़ों का कहना मान ले। आज तक गांव की कोई लड़की इतनी बेशरम नहीं हुई। गाय की तरह उसे जिस खूंटी से बांध दिया, वह बंध गई। मुंदरी पर इन बातों का कोई असर नहीं हुआ। वह अपनी बात पर अड़ी रही। उसका कहना था कि जिस आदमी को वह नहीं चाहती, उसके घर वह कभी नहीं

---

१. तम्बाकू मांगने का अर्थ अनुचित सम्बन्ध के लिए आमंत्रित करना है।

जाएगी। हिरमे ने भी कमर कस ली थी। कहता था, 'गांव वाले प्यार के साथ इतनी ज्यादती नहीं कर सकते। फिर समाज के भी कुछ कानून होते हैं। मैं आन गांव का जरूर हूं पर मेरा बाप भी वहां का गायता है, निपट लूंगा।'

यह झगड़ा बढ़कर दो गांव वालों का झगड़ा हो गया—बिंझली और गढ़ बंगाल। ढोल और नगाड़े मैदान में उतर पड़े। लात, घूसों और लट्ठ से बात शुरू हुई और अन्त में टंगिया तथा फरसा में उतर आई। दो दल बिजली की तरह टकराए। बिंझली में हाहाकार मच गया। ज़रा-सी बात ने सारे गांव में तहलका मचा दिया। आखिर इस कलह का अन्त बुरा हुआ। हर झगड़े का अन्त बुरा होता है। दोनों गांवों के दोनों गायता मारे गए—बिंझली का गायता मुंदरी का तापे, और गढ़ बंगाल का गायता हिरमे का तापे। जब नेता ही चल बसे तो काहे का झगड़ा! दोनों गांव वाले अपनी करनी पर बहुत पछताए। दोनों ने दोस्ती करने के लिए मिली-जुली पंचायत कराई पर खबर थाने तक पहुंच गई थी। सैकड़ों आदमी जेल में डाल दिए गए। साल भर मुकदमा चला और अन्त में सन्तू को फांसी की सज़ा हुई। अदालत में यह सबूत हुआ कि उसीके फरसे से दोनों मारे गए।

मुंदरी और हिरमे का रास्ता साफ हो गया। दोनों के बाप जा चुके थे। दोनों के सिर से छाया चली गई थी। हिरमे ने मुंदरी की झोंपड़ी सन्तू के भाइयों को दे दी। बोला, 'मुझे मुंदरी चाहिए थी, वह मिल गई। जायदाद का लोभ नहीं है।' मुंदरी को भी तो अपने पिरेम की दरकार थी। अपना गांव छोड़कर वह गढ़ बंगाल आ गई। नई दुलहिन ने नये गांव में नया घर सजाया। प्यार की देहरी में नया कदम रखा और साल के भीतर ही दीपक की 'जोत' जल उठी। दोनों पति-पत्नी की खुशी की सीमा नहीं थी। जोत था सुलकसाए, मुंदरी और हिरमे का इकलौता लाडला!

उसके बाद फिर मुंदरी के कोई सन्तान नहीं हुई। बहुत दवा-दारू की, झाड़-फूंक की, पर असर नहीं हुआ। सात-आठ बरस दोनों में प्रेम रहा, पर गांव भर में दोनों को नीचा देखना पड़ता था। अन्त में हिरमे ने दूसरा बिहाव भी कर लिया। दूसरे बिहाव की मिहरिया इसी गांव की थी। वह भी विधवा! उसका आदमी बिहाव होते ही चल बसा था। मुश्किल से तीन महीने उसने साथ दिया होगा। उसका घर में और कोई नहीं था। जंगलों से जो मिल जाता या थोड़ी-

सी बनी-मजूरी कर जो पा लेती उसीसे पेट भरती थी। उमर भी उसकी सोलह-सत्रह की रही होगी। छिवला के लाल-काले फूलों की तरह उसकी देह खिल रही थी। हिरमे की नज़र उसपर पड़ी तो अटक गई। कहते हैं दोनों में काफी दिनों तक सम्बन्ध रहा। लुक-छिपकर ये जंगल-पहाड़ या नदी-नाले के किनारे मिलते रहे। आंखमिचौनी का खेल खतरनाक होता है। परिणाम भी सामने आ गया। उसका पेट रह गया था। पेट बढ़ा तो बात खुल गई। गांव का गायता तब सिकमी था। उसके पास गांव वालों ने शिकायत की। मुंदरी से पूछा गया। हिरमे ने मुंदरी को बड़े प्यार से समझाया कि वह उसे पिरेम करता रहेगा। वह सत्ताय को अपनी नौकरानी समझे। मुंदरी ने उसे बिहाव करने की इजाज़त दे दी। देती भी क्यों नहीं ! वह कर क्या सकती थी ! एक लड़के को जनकर रह गई। फिर आदमी को भला कौन रोक सकता है ! औरत की जात। वह तो कच्ची माटी की हंडी है। जिसे जो निशान उसपर बनाना हो, बना दे। जब कोई हंडी अकड़ती है तो कुम्हार उसे चाक में कसकर भरपूर तड़पाता है। मुंदरी जानती थी कि दुनिया में कोई औरत बिना मर्द के नहीं रह सकती। मर्द उसका सहारा है। वैसा ही जैसे ओल के लिए झाड़ होता है। मरद शीशम का पेड़ है और औरत उसकी अमर बेल। बिना झाड़ का सहारा पाए वह जी नहीं सकती। इसीलिए जब मुंदरी सत्ताय के बारे में सोचती, तो उसके मन में हमदर्दी के भाव जाग उठते।

गायता सिकमी ने शिकायत की सफाई जब हिरमे से पूछी तो उसने गांव भर के सामने सत्ताय का हाथ पकड़ लिया। सारी बात खुशी-खुशी खत्म हो गई। हिरमे की इस करनी की गांव भर में चर्चा रही और सबने दिल खोलकर उसकी तारीफ की।

छः महीने के बाद सत्ताय ने एक लड़की को जनम दिया। उसके बाद दूसरे साल एक लड़का। तीसरे साल एक लड़की, चौथे साल फिर लड़का और इस तरह अब वह पूरे आठ लड़के और पांच लड़कियों का बाप है। चार लड़के-लड़कियां बीच में मर गए।

हिरमे की नई औरत सत्ताय सीधी तो थी पर जैसे-जैसे घर में सन्तान बढ़ती गई उसके सुभाव में अन्तर आता गया। वह चिड़चिड़ी हो गई और अतरे-दूसरे कलह होने लगी। कलह बढ़ी और अपने-पराए का भेद आया। सत्ताय न

जाने क्या-क्या हिरमे से जुझाती। मुंदरी ने कभी कोई बात नहीं कही। चुगली खाना उसका सुभाव नहीं था। फल यह हुआ कि हिरमे, मुंदरी को तंग करने लगा। अक्सर वह अलवा-जलवा[१] बकता, सबके सामने उसे नीचा दिखाता और कभी-कभी मारता-पीटता भी।

एक दिन मुंदरी हाट गई, नरायनपुर। वहीं दन्तेवाडा के पेरमा[२] कलमुमी-मासा से उसकी मुलाकात हो गई। दोनों का शायद सौदा पट गया था। वह उसके साथ भाग गई। मुंदरी ईमानदार थी। उसने नया खसम कर लिया पर पुराने खसम की एक कौड़ी अपने साथ नहीं ले गई। इत्ता ही नहीं, नये खसम से उसने हरजाना भी दिलवाया। गढ़ बंगाल का पूरा गांव आज भी मुंदरी की इज़्ज़त करता है। वह यहां से जाने के बाद फिर लौटकर नहीं आई।

तीसरे साल गायता सिकमी चल बसा। एक तो वैसे ही बूढ़ा था फिर गांव भर का दुःख-दर्द अपने सिर पर लिए फिरता था। आखिर कब तक जांगर तोड़ता! एक दिन एकाएक आधी रात को हंसा देह छोड़कर उड़ गया। धूम-धाम से गांव भर ने उसे गेंवड़े के पास दफना दिया और काले पत्थरों की एक खासी समाधि बनवा दी। आज भी सालाना जलसे में गांव के लोग अपने गायता को श्रद्धा के फूल चढ़ाते हैं।

सिकमी जब मरने लगा तो अपना भार हिरमे पर छोड़ गया। उसने हनगुण्डा[३] पेरमा और सिरहा को बुलाकर कहा था, 'भाई, हम अपना लोभ छोड़ें। जवानों को काम करने का समय दें। जिनकी रगों में अधिक खून दौड़ता है, उन्हें आगे आने दें। यही हमारे गांव के तारे होंगे। हमारा नाम रोशन करेंगे।'

सिकमी ने यह भी चाहा था कि अब यह एक परम्परा बन जानी चाहिए। ५० साल की उमर के बाद गायता को अपना काम दूसरे को सौंप देना चाहिए। गांव के लोगों ने बूढ़े सिकमी की बातें सिर-माथे धर लीं और ३५ बरस के हिरमे को सारा भार सौंप दिया गया। आज पिछले सात वर्षों से वह बराबर अपना काम करता चला आ रहा है। गांव के किसी आदमी को उसके काम से शिकायत नहीं है।

---

१. अंटसंट या व्यर्थ की बातें २. गांव के धार्मिक कृत्य कराने वाला व्यक्ति
३. मृतक कर्म कराने वाला व्यक्ति

सुलकसाए इसी गायता का लड़का है। आवा (मां) का प्यार उसे मिला नहीं। जब कोई उसकी आवा के बारे में पूछता है तो वह लंबी सांस लेकर कह देता है, 'आवा तो है पर बिना आवा का हूं!'

जब कई दिन बीत जाते हैं, वह एकाध दिन के लिए दन्तेवाड़ा चला जाता है, अपनी मां की देहरी चूमता है और लौट आता है। मां के वियोग ने उसके मन को गहरी ठेस पहुंचाई है। वह कहता है, 'मैं कभी बिहाव नहीं करूंगा।'

उसके साथी महुआ की बात करते हैं। वह कहता है, 'हां, महुआ से प्यार करता हूं, करता रहूंगा, पर ब्याह नहीं करूंगा।' उसकी बात सुनकर सब हंस देते हैं। वह इस हंसी की टीस चुपचाप पी जाता है। महुआ भी शायद उसका साथ देने को तैयार है। कहती है, 'बिहाव से क्या! हम जब एक हैं तो बिहाव करने से ही क्या मिलेगा!' वह सुलकसाए जैसा साथी पाकर खुश है। सुलकसाए उसे पाकर खुश है। इस खुशी को बिहाव के बन्धन में बांधकर क्यों नष्ट कर दिया जाए! बंधन, चाहे जैसा हो, आखिर आदमी को बांध लेता है। तब आदमी दास बन जाता है, बिक जाता है। परवशता बुरी है—चाहे वह आदमी को ब्याह करने से मिले या अपने देश पर पराए शासक के अधिकार कर लेने से।

सुलकसाए अपने ढंग का अकेला जवान है। जो काम करने से सारा गांव डरता है वह अकेला कर डालता है। अपनी जान सदा हथेली पर लिए घूमता है और दुनिया में वही आगे बढ़ता है जो अपने जीव का मोह छोड़ दे। शायद इसीसे सुलकसाए से सुखी नौजवान गढ़ बंगाल में नहीं हैं।

४

रात बीती और सूरज की लजीली किरनों ने जब पीपल की लाल-लाल फुनगियों को आकर चूमा तब महुआ मलटाघाट की दमतोड़ चढ़ाई पार कर चुकी थी। सामने खुला मैदान था। और घाटी से लगी सूरज की किरणें सारे मैदान में ऐसी बिछी थीं जैसे किसीने वहां सोने का फर्श डाल दिया है। उसने देखा

सामने राजामहल खड़ा है। उसकी मटमैली लाल ईंटों में सोनियां रंग चमक रहा है। दोनों हाथ जोड़कर उसने राजामहल को सिर झुकाया। झिरिया की याद की। पंजाबियों को असीसा। सोचने लगी—काश, उस समय मैं होती! उन पंजाबियों को एक बार देख लेती। झिरिया होती तो उसे अपनी सबसे भली साइगुती बनाती। धन्य है वह झिरिया जिसे सारा गांव चुड़ैल कहता है, जिससे सारा गांव डरता है। मरकर भी जो गांव की सेवा कर रही है। जिन्दा होती तो उसमें इतना सामर्थ्य कहां रहता! मेरी तरह वह भी गाय की बछिया बनकर रहती। जंगलों में रहने वाले इन जंगली आदमियों के हाथ का खिलौना बनती। वे आदमी, जो जंगल के शेर के तो दांत तोड़ सकते हैं, अपने गांव में जरा-सी बात पर खून की नदियां बहा सकते हैं, पर किसी भी परदेसी के सामने कुत्ते जैसी पूंछ दबा लेते हैं। अपना सब कुछ लुटाने तैयार हो जाते हैं। तो क्या सुलकसाए भी ऐसा ही होगा! उसकी विचारधारा ने एकदम पलटा खाया—उसका तापे मुझे राजामहल छोड़ने गया था, इसलिए कि वह गांव का गायता है। उसका बेटा घोटुल का सिरदार है। मुझसे प्रेम की बड़ी-बड़ी बातें करता है। जिन्दगी भर क्वांरे रहने का स्वांग रचाता था। यह क्यों? वह सोचती है—एक दिन उसने कहा था कि बिहाव में बन्धन है। जिन्दगी में बन्धन रहें तो मजा नहीं आता।

महुआ सोच रही थी तभी छिवला की डाल पर बैठा एक सुआ फड़-फड़ाया। उसने देखा, पत्ते को छोड़कर वह पोरोभूम[1] की ओर उड़ गया। सुलकसाए भी शायद यही जिन्दगी चाहता है। तोते की तरह पोरोभूम में उड़ता रहे। वह सोचता है, इसमें बन्धन नहीं है, पर तोता भी तो बंधा है। रात को वह अपने ही घोंसले में आता है। अपने बच्चों से मिलता है। अपने प्रेमी से बातें करता है। उसका भी अपना घोटुल है। घोटुल उसे रोज जाना ही पड़ता है, नहीं तो उसे जात से निकाला जा सकता है। तब निर्बन्ध वह कहां रहा! फिर सुलक-साए ही यह क्यों सोचता है? क्या इसके पीछे उसके मन का पाप नहीं है!

महुआ के मस्तिष्क में गहरे बादल छा गए थे। वह सोच रही थी—काश, रात में उसे अफसर के पास रहना पड़ता, झिरिया चुड़ैल न होती तो, क्या पता

---

१. आकाश

सबेरे सुलकसाए उससे आंखें फेर लेता और न जाने किससे वह अपनी नजरें उलझा लेता ! इसीलिए वह बन्धनहीन रहना चाहता है । उसका क्या, वह रह सकता है, पर मेरा क्या होगा ? मैं औरत जो हूं ! कुम्हार की हंडी ! एक बार जूठी हुई कि फिर बेकार । दूसरा खसम भले मिल जाए, पर दिल कहां मिलता है ! उसने तय कर लिया कि आज रात जब घोटुल में सुलकसाए से मिलेगी तो जरूर बातें करेगी । वह पूछेगी—तू जनम भर क्वांरा क्यों रहना चाहता है ? तुझे बन्धन की जिन्दगी में क्या मुसीबत है ?

अब तक वह गांव के काफी पास आ गई थी । उसने देखा, सामने से सुलकसाए आ रहा है । हाथ में टंगिया लिए है और कंधे में तेंदू के पत्ते की टोकनी टांगे है। वह ठिठक गई । जिसके बारे में वह सोच रही थी, वही सामने था । उसने सोचा, जो रात को कहना चाहती हूं, अभी क्यों न कह दूं ! तभी सुलक ने प्यार से कहा, 'महुआ !'

'हां ।'

'आज सबेरे जल्दी उठ गई थी ?'

उसने सिर हिलाकर हामी भरी ।

'आखिर क्यों ?'

'वैसे ही,' उसी तरह गिरे मन से उसने उत्तर दिया ।

'आज मन बिगड़ा है, महुआ ? बोलती क्यों नहीं ? तू तो धतूरे का फूल थी । मुरझाई क्यों है ?'

महुआ ने मुंह खोला फिर अपने आप बन्द कर लिया ।

'कह, कहती क्यों नहीं ? कुछ कहना चाहती थी न ?'

महुआ यह न समझ सकी कि वह हां कहे या न । बुत बनी खड़ी रही ।

झालरसिंह पीछे से आ रहा था । बोला, 'बीर, कलेवा रख लिया ?'

'हां झालर । थोड़ा-सा रख लिया है । बाकी वहीं मिल जाएगा ।'

महुआ ने अपनी नजर ऊपर उठाई, पूछा, 'कहां ?'

'नेतानार में ।'

'नेतानार, क्यों ?'

'वहां जा रहा है महुआ, बिहाव में....' झालर ने कहा तो महुआ के कलेजे से जैसे पत्थर टकरा गया ।

'किसके बिहाव में रे ?'

'वही·······ते·······रे ।'

सुलकसाए ने जोर से झालरसिंह को डांटा, 'क्या मजाक है ?' फिर महुआ के सिर पर हाथ रखकर बोला, 'वहां के सिरहा की बेटी का बिहाव है महुआ, तापे को रात से बुखार आ गया तो मुझे जाना पड़ रहा है। साथ में झालर को लिए जा रहा हूं।'

'बिहाव कहां हो रहा है ?' महुआ ने पूछा।

'तू कहेगी, मैं भी मजाक करने लगा।' सुलकसाए ने उसकी ठुड्डी ऊपर उठाई, 'तुझे नहीं मालूम मेरी हिरनी, उसी गांव में गायता के लड़के के साथ।'

महुआ ने उसका हाथ अलग कर दिया, 'मजाक नहीं तो क्या है ? तुझे हमेशा यही सूझता है। ऊपर से मीठी-मीठी बातें करता है और भीतर···।' कहते-कहते महुआ रुक गई।

'भीतर क्या···?' सुलकसाए ने उसके दोनों कंधे पकड़ लिए, 'बता, तू कहना क्या चाहती है ?'

'बहुत कहना चाहती हूं, साइगुती। कहते-कहते सारा दिन बीत जाएगा।'

'तो अभी कह ले, यहीं दिन बीत जाए।'

'नहीं' महुआ ने अपने को पीछे खींचा। उसके हाथ छुड़ा दिए। झालरसिंह की तरफ देखकर बोली, 'जलिया कहां है ?'

'मैं क्या जानूं ! अपने लोंन (घर) में होगी।'

दोनों को छोड़कर महुआ गांव की ओर चली गई। झालर ने सुलकसाए की पीठ पर हाथ रखा,'चल यार, तू भी कहां हिलग गया ! औरत की जात, न समय देखे न बात। अपनी मस्ती में मगन, बस न दुनिया की फिकर, न घर की चिन्ता। मरद को अपना चाकर समझे। हुक्म दे और जो चाहे, वह उसकी बजाए। ऊपर से आंख दिखाए। गुस्से में नागिन-सी फुसकारे। बाघनी-सी गुर्राए, सुअर जैसी चीखे। मरद के लिए जैसे और कोई काम नहीं है। बस, औरत है····दिन भर उसके सामने झूलता रहे····।'

'क्या बकता है ?' सुलकसाए ने डांट दिया, 'सबेरे से पीकर आया है क्या ? महुआ ऐसी नहीं रे। और औरतों से उसमें फरक है। तूने उसकी आंखें नहीं देखीं। उनमें कितना भार था ! उसके सिल्वी किस तरह खुल और बन्द हो रहे

थे ! वह कोई बड़ी बात कहना चाहती थी । तू नहीं जानता, कल रात भर घोटुल में सिसकती रही ।'

'भला क्यों ? कल सिसकने की बात ही क्या हुई है ? इसीसे कहता हूं सिरदार, औरत के जाल में मत फंस, वह बला है बला !'

'तू गलत सोचता है झालर । जलिया ने क्या तुझे कभी धोखा दिया ?'

'कब नहीं दिया यह पूछ सुलक । कभी कहती है १२ बजे झिरिया के तीर मिलूंगी । गैल हेरता रहता हूं पर उसके बारा कभी नहीं बजते । देखता हूं तो किसी और से घुल-घुलकर बातें करती है । जब बिगड़ता हूं तो पांव पकड़ लेती है । कहती है, बिसास कर, मेरा साइगुती तू ही है । लोंन में आवा ने रोक लिया था सो देर हुई । यहां आई तो गैल में यह मिल गया । ऐसी-ऐसी बात कर रहा था । एक दिन का बहाना हो तो चले ।'

'जरा भरोसा करना सीख झालर । अपने मन का पाप हर जगह क्यों देखता है ? कभी तूने उसे बुरे रास्ते में देखा ?'

'सो तो नहीं ।'

'तो चुप रह, पापी कहीं का !' सुलक ने दर्दभरी सांस ली, 'बेचारी महुआ ! दो दिन बाद लौटना है—तब तक उसका जाने क्या हाल होगा ?'

झालरसिंह ने उसे धक्का दिया, 'चल माई बिन्दा, छिन्दा[1] का कुछ नहीं बिगड़ेगा । वह ऐसी ही रहेगी। पर डर तो मुझे तेरा ही है, कहीं लौटते-लौटते घुलकर मोम न हो जाओ । औरत के ढोंग नहीं देखे ? नाटक रचाने में अव्वल । लौटकर एक दिन घोटुल में हम लोग नाटक क्यों न रचाएं !'

'चुप रह !' सुलक ने उसे डांट दिया और दोनों आगे बढ़ गए । उनके डग तेज़ होते गए और सूरज धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता गया ।

नेतानार में जितने मिले सबने गोरे अफसर की कहानी पूछी । वह किस्सा हवा हो गया था । गांव के हर मर्द-औरत के कान में पहुंच चुका था । नेतानार के लोग महुआ और सुलकसाए को जानते थे । एक सिरहा की बेटी, तो दूसरा गायता का लड़का । गांव के दो सिरदार और बेटा-बेटी भी घोटुल के मालिक । काम के पक्के, जात के सच्चे । भला कौन न जाने इन्हें !

---

१. गोंड़ों की एक प्रेमकथा है ।

जितने सुलकसाए से मिले सबने राजामहल की बात पूछी। झिरिया चुड़ैल को खूब कोसा। राजामहल के प्रति उनमें जो भय था वह और भारी हो गया। एक चुड़ैल ने इत्ते बड़े अफसर को भी नहीं छोड़ा, फिर गांव वालों का क्या ! वे मिलें तो वह शायद उनका खून ही पी जाए ! गांव के बूढ़े, जमाने को कोसते रहे। कहते, कैसा जमाना लग गया है। पिरेम की तो लगाम टूट गई है। ऐसा बेलगाम प्रेम हमने नहीं देखा। हमने धूप में थोड़े बाल सफेद किए हैं ! बूढ़े रास्ता बताते हैं, पर इन जवानों को देखो, सावन के अंधे बने हैं। परजात से ब्याह करने चली थी वह। सब कुछ सुना था उसने फिर भी गलत काम किया और उसे रोका तो सारे गांव के लिए मुसीबत बन गई है।

सारे लोगों ने गहरी सांस लेकर पूरे गांव पर हमदर्दी जताई—बरियारपेन रच्छा करे, गांव पर गाज गिरने से बचाए। अफसर कोई परवाना भेजकर गांव को माटी में न मिलवा दे। सुलकसाए और झालरसिंह को भी इसकी चिन्ता हुई। गांव वालों का सोचना व्यर्थ नहीं है। अफसर सब कुछ करा सकता है। पर जो होना था हो गया। अब कोई क्या करे ! आदमी पर आदमी का बस चलता है। भूत-प्रेत पर भला आदमी का क्या कब्जा !

इसी दर्दभरे किस्से के बीच गांव में बिहाव हो गया। सिरहा के घर खूब धूम हुई। बड़े परगौंनी[1] के बाद महुआ की शराब का हंडा खोल दिया गया। सबने मन भर पी। दूल्हा-दुल्हिन भी शामिल हुए। एक दूसरे को उन्होंने शराब पिलाई। इसके साथ ही घर के सामने मजमा जम गया।

टिमक् टिमक् टिम टिम,
टिम टिम टिम टिम।

टिमकी की आवाज़ जब निकली तो झालरसिंह ने परछी में टंगी ढोल उतार ली। उसका फन्दा अपने गले में डाला और एक तिरछी उचाट भरते हुए मैदान में कूदा :

रे रे रेलो रेलोरे रेलारे हो ओ ओ।

उसकी आवाज़ एक चुनौती थी। वह हिरन की तरह कूद रहा था और ढोल

---

१. गौंड़ों के ब्याह की एक रस्म

की थाप के साथ 'रीलो' गीत के सुर मिला रहा था। सुलकसाए अलग नशे में झूम उठा।

होय होयऽऽऽ
वाह् व्ह् वह् रेलो रे रेलोऽऽऽ।

और फिर क्या था। गांव भर के जवान जोड़े सामने आ गए। नई दुल्हिन यह देख रही थी। उसके सिल्वी खुले थे और दांत कांस के फूल जैसे चमक रहे थे। घुंघचियों की लाल माला उसके गले में लटकी आग की तरह चमक रही थी। वह जैसे हवा में झूल रही हो। कभी बाएं करवट लेती तो कभी दाएं। शायद उसने ज़्यादा पी ली थी। उसका दूल्हा हैरान था। उसकी नज़रें यह साफ जताती थीं। सुलकसाए ने मैदान में खड़े होकर ललकार भरी, 'कैसा मरद है रे, चल नीचे उतर।' दूल्हा चुपचाप बैठा रहा। न जाने क्यों, उतरने की उसकी हिम्मत नहीं हुई। पर दुल्हिन उसी तरह हवा में झूलती नीचे उतर आई, 'आ रे सुलक, तूने क्या समझा है?'

'पुंगार, गोरी पुंगार!'

'तो ले सम्हाल'—उसने अपना पैर ताकत से ज़मीन पर पटका। पयरी छमक उठी। सुलक ने उसके हाथ में अपने हाथ डाल दिए और फिर दोनों ने वो पैंतरे भरे कि धरती भी झूम उठी। झाड़-पेड़ नाचने लगे। लोंन के भीतर से दुल्हिन की बूढ़ी महतारी तब बाहर निकल आई। घुली हल्दी की हंडी से करछुली में भर-भरकर घोल सारे नाचने वालों में छोड़ने लगी। घंटों नाच होता रहा, तब तक दूल्हा मुंह लटकाए बैठा था। शायद उसे दर्द हो रहा था, उसकी दुल्हिन भुसरी सुलकसाए की बाजुओं में थी। सुलक पूरे नशे में चूर था। वह झटका दे-देकर भुसरी के प्रत्येक अंग को धरती के ऊपर जैसे हवा में उड़ा रहा था। वह भी अपना गला फाड़-फाड़कर गा रही थी। ढोलिए हाथ पीटने में लगे थे। टिमकी वाला बांस की कमचियों को चमड़े पर इतने ज़ोर से पीटता कि चमड़े के तागे भी ढीले पड़ने लगे थे।

रिवाज के अनुसार इसी समय छानी से तीन लड़कियों ने तेल नीचे फेंका। वह भुसरी और उसके दूल्हे पर पड़ना चाहिए था, पर पड़ा भुसरी और सुलकसाए पर। अब क्या था हो-हल्ला मच गया। दूल्हा गुस्से में उठकर टंगिया लेकर खड़ा हो गया। सारा मजमा ढीला पड़ गया। सब अपनी जगह खड़े हो गए।

सुलकसाए के चेहरे पर न तो चिन्ता की रेखा थी और न उसके पैर रुके थे। वह अपने आप उचट रहा था। वहां क्या हो रहा है, इसकी उसे जैसे फिकर नहीं थी। भुसरी सहमी और डरी थी। वह कांप रही थी। उसका बाप सामने खड़ा था। गांव के मुखिया ने कहा, 'अब कल फिर एनदाना[1] होगा, आज बिहाव नहीं हो सकता।'

'नहीं, आज ही होगा, अभी होगा'—दूल्हा बोला।

वह सुलकसाए की तरफ दौड़ा तो बीच में झालरसिंह ने उसकी टंगिया पकड़कर छीन ली, 'क्या करता है रे? वह तो दारू में चूर है, तू उसे मारने चला है!'

'मारूं क्यों नहीं! उसे...।'

'ठहर!'—भुसरी ने हाथ उठाकर कहा, 'अरे मरद के बच्चे, मुझसे बिहाव रचाने आया है, किसीकी जान लेने नहीं।'

'उससे तेरी यह हमदर्दी?'

'हां, गढ़ बंगाल का घोटुल हमारा साइगुती है। यह उसका सिरदार है। तू अलवा-जलवा नहीं बक सकता। मैं यहां के सिरदार से तेरी शिकायत करूंगी। इज्जत करना सीख।'

भुसरी की बातों ने जले पर नमक छिड़का। अब तक सुलकसाए के पैर रुक गए थे।

'क्या बात है भुसरी? कोई मच्छर आ गया क्या?'—सुलक ने दौड़कर दूल्हे को ऊपर उठा लिया और ज़मीन पर दे मारा।

ज़रा-सी बात, पर बिगड़कर भारी हो गई। राई का पहाड़ बन गया। दूल्हे का तापे उस गांव का गायता था। इसे वह सहन नहीं कर सका। रात को ही गांव में डोंड़ी पीट दी गई। गांव भर के सियाने बुलाए गए और पंचायत भरी। मामला बड़ा था। गांव के सिरहा की बेटी और गायता का बेटा, इनका बिहाव! आनगांव के गायता के लड़के की हरकत। वह सारा गांव, यहां के हर आदमी का साइगुती था। तेहार-परब ये लोग एक दूसरे के गांव आते-जाते थे।

---

१. नाच

हाल ही दीवाली[1] नाचने इस गांव की मोटियारी गढ़ बंगाल गई थीं। तब भुसरी उस दल की अगुआ थी। गढ़ बंगाल के घोटुल के चेलिकों ने इन मोटियारियों का भरपूर स्वागत किया था। गायता ने इस दल को खूब खिलाया था। भुसरी इसी समय पहली बार सुलकसाए से मिली थी। लौटकर उसकी बड़ी चर्चा की थी। कहती थी, 'आदमी नहीं शेर है। गांव भर की मोटियारियां उसपर मरतीं हैं।' जब यह दल गढ़ बंगाल का गेंवड़ा पार कर वापस आने लगा था तो सीमा पर नाच हुआ था। उस नाच में सबसे ज्यादा भाग लिया था सुलकसाए नें। नाचते-नाचते पोड़द काफी नीचे उतर आया था। तब वह इस दल को भेजने गांव के गेंवड़े तक आया था। गांव के गायता ने तब भुसरी की पीठ ठोंकी थी। भुसरी बेहद खुश हुई थी और सुलक की दरियादिली की कहानी उसने गांव के कोने-कोने में फैला दी थी।

आज रात पंचायत इसी जवान शेर सुलकसाए के बारे में चर्चा करने इकट्ठी हुई थी। कुछ गांव वालों का कहना था कि सुलकसाए ने हमारे सारे गांव को चुनौती दी है। हम उसके गांव से जाकर निपटेंगे। कुछ कहते थे—वह भुसरी पर हाथ साफ करना चाहता है। कुछ यह भी कहते थे कि यह सब सोचना गलत है। सब कुछ अनजान में हुआ है। सुलक आज खूब पिए है। ऊपर से तेल डालने वाली लड़कियों ने भी गलती की है। इसलिए मामला रफा-दफा किया जाए और यह रस्म एक बार फिर दुहराई जाए। इन तीन बातों को लेकर पंचायत में खूब चर्चा चली। इनमें सच क्या है, यह पता लगाना पंचों का काम था।

एक पंच ने भुसरी से जब सफाई मांगी तो वह बोली, 'मैं उस निखट्टू से बिहाव नहीं करूंगी। मैं पहले ही उससे बिहाव नहीं करना चाहती थी। जबरन मुझे बांधा जा रहा है।'

उसकी सफाई कड़ी साबित हुई। इसका पंचतोर[2] ने यह अर्थ निकाला कि जो कुछ हुआ है गलती से नहीं हुआ। सुलकसाए और भुसरी की इसमें जरूर साजिश है।

१. मुड़िया गोंड़ों का विशेष उत्सव जो अक्टूबर मास के लगभग होता है। इस समय एक घोटुल की मोटियारियां दूसरे घोटुल जाकर नाचती हैं।

२. पंचायत का मुखिया

झालरसिंह ने सुलकसाए की वकालत की। बोला, 'सुलकसाए ऐसा आदमी नहीं। वह तो महुआ से पिरेम करता है। उसके सामने किसी लड़की को नहीं देख सकता। उसने सब कुछ नशे में किया है।'

जब सुलकसाए से पूछा गया तो वह डोलता हुआ बोला—'हो···हो···हो, हो····जाए····ना····च,···रे····रेलो···रे, रेला···।' वह फिर झूम उठा। उसने सबके सामने भुसरी का हाथ पकड़ लिया और उचटने लगा। बोला, 'एनदाना देखो····मोर····मोरिनी···का एनदाना।' भुसरी खूब खिलखिलाकर हंस पड़ी। उसके सारे दांत उस हलके-से उजेले में बिजली की तरह चमक उठे। वह बिजली दूल्हे के कलेजे पर जाकर गिरी। छानी में घास काटने का हंसिया पड़ा था। उसने भुसरी के गले में दो बार ताकत भर मारे और सुलकसाए को मारने जैसे ही उसने हाथ उठाया कि सुलक ने एक हाथ से उसकी कलाई पकड़ी, दूसरे से हंसिया छीनकर उसके पेट में घुसेड़ दिया। पेन्डुल[1] की हल्दी खून में बदल गई। दोनों जमीन पर पड़े तलफने लगे। यह देखकर सारे पंचों के तन-मन में आग लग गई। वे सुलकसाए को पकड़ने दौड़े। वह सबको धक्का देता हुआ, अंधेरी रात में जाने कहां समा गया। तब आसमान में छोटे-बड़े अनगिनत तारे टिमटिमा रहे थे। सिरहा दोनों घायलों की दवा कर रहा था और उसकी आर[2] दहाड़ मार-मारकर रो रही थी। बाकी लोग अपने-अपने लोंन जा चुके थे। गांव की सोती टपरियां जाग उठी थीं। उनके अन्दर बैठे जोड़े यह किस्सा दुहरा रहे थे।

सुलकसाए अपने गांव तो लौट आया पर उसके पेट में जैसे बायशूल था। भीतर भयंकर आग लगी थी और उसमें वह जला जा रहा था। उसने यह क्या कर दिया? वह सोचता है, सोचता रह जाता है। उसके दिमाग में सारी कहानी घूम जाती है। एक गहरा जाल-सा बिछा है। उसने देखा, उसमें भुसरी फंसी है। भुसरी के प्रति उसके मन में हमदर्दी जागी, 'बेचारी! जाने क्या हाल होगा? खरगोश-सी उसकी नन्हीं-नन्हीं आंखें, किसी जादूगर ने जैसे उन्हें बांध ली हैं।' उसके मन में पीड़ा होने लगी, 'वह तलफ रही होगी, मछली की

---

१. ब्याह २. औरत

तरह ! बेचारी कुम्हड़े की बौला, वह हंसती थी क्या इसलिए नहीं कि उसे मेरा सहारा था ! मैंने उसका सहारा छीन लिया । पर····।' वह सोचता है, 'मैं कर ही क्या सकता था ! भुसरी मेरी कौन है ? मैं तो महुआ से पिरेम करता हूं । बेचारी महुआ ! मुझसे जो पल भर दूर नहीं रह पाती । मेरे एक इशारे पर अपने गले में फन्दा लगा सकती है ।'

वह जाने क्या-क्या सोचता है । न जाने किस-किस ढंग से सोचता है । इस सोचने में एक बड़ी बात उसके मन में आ जाती है, वह है पंचायत की । भुसरी का तापे चुप न बैठेगा । वह इस गांव में आएगा । रात का सब किस्सा दुहराएगा तब···जो होगा सो तो होगा ही, महुआ क्या सोचेगी ? उस दिन वह कुछ कहना चाहती थी ।

उसके सिल्वी रह-रहकर खुलते और बन्द होते थे । कहना चाहते हुए भी वह कुछ न कह सकी । वह क्या सोचेगी ! सोचेगी—मैं भुसरी से पिरेम करने लगा हूं । उसे कैसे समझाऊंगा कि मैंने उसके सिवाय किसीसे पिरेम नहीं किया !

'हाय !····सु····ल···क, ओ····फ्····ओ···' सुलकसाए को किसीके कराहने की आवाज़ आई । कोई दर्द से चीख रहा है । उसे पुकार रहा है । उसके कान खड़े हो गए, यह तो भुसरी की आवाज़ है । वह खड़ा हो गया, क्या वह सचमुच तलफ रही है ! उस कसाई ने जमकर भी तो हाथ छोड़ा था । पेन्डुल करने चला था, पर बेभरोसे का । किसी लड़की को जबरन क्यों बांधना चाहता था ? कब तक बांधकर रख सकता है ! जंगल की चिरैया, आज यहां है, कब फुर्रर्र हो जाए, किस बहेलिए का तीर उसे घायल कर दे, कौन जानता है ! किसीको बांधना है तो मन के बंधन से बांधो । ऐसा बांधो कि वह बंधन तोड़ने की बात सोच न सके । सोचे तो सोचने में दर्द हो । किसी तरह तोड़कर जाए तो तलफने लगे और उसी समय खिचकर आ जाए ।····पर अब भुसरी का क्या होगा ?···· उसे लगा, भुसरी के पास ही उसका मोइदो[1] पड़ा चीख रहा है । उसने अपना बायां हाथ अपने कपाल पर दे मारा, 'यह मैंने क्या कर दिया ? भुसरी उसकी होकर रहेगी, उसे होना पड़ेगा । मैंने फिर यह सब क्यों किया ? मुझे नहीं करना चाहिए था ।···पर यह किसे बताऊं कि मैं उस समय नशे में चूर था ?

---

१. दूल्हा

मैं अपने आप पर कब्जा छोड़ चुका था ? महुआ की यह शराब ! आह, कभी तो नई जिन्दगी देती है और कभी···वह जिन्दगी छीन लेती है। कितना उत्साह था वहां ! इसने सारी खुशी में आग लगा दी। प्रेत की तरह मेरे सिर पर चढ़-कर···ओफ्····शराब····श···रा····व···श···रा··ब !' उसकी आंखों की दोनों पुतलियों में शराब की न जाने कितनी भट्ठियां झूलती नज़र आने लगीं। उनसे जैसे एक-एक कर अनगिनत बूंदें चू रही थीं—टप् टप् टप् टप्।

और हर बूंद गोल काले पत्थर की तरह उसके कलेजे में टकराती थीं। सब कुछ जैसे घूम रहा था। वह जैसे चक्के की कील पर खड़ा है। कहीं कुछ नहीं दीखता। सिर्फ हलका-सा अंधेला है और सारी दुनिया घूम-घूमकर आपस में टकरा रही है। सब कुछ चकनाचूर हो रहा है।

'देखा, अपने बेटे की करामात ! मैं कहती हूं एक दिन यह तुम्हारी इज्जत लेकर रहेगा। गांव वाले तुम्हें गायता मानना छोड़ देंगे, तब मानोगे।'

'नहीं सत्तो, ऐसा नहीं हो सकता। सुलकसाए मेरा बेटा है, मेरा बेटा !'

'यही तो मैं कह रही हूं। वह तुम्हारा बेटा है, मेरा नहीं।'

'सत्तो !'

'क्यों बिगड़ते हो राजा, मंगू ने खेल-खेल में जरिया में आग लगा दी थी तो तुमने सारी धरती को सिर पर उठा लिया था। अब क्यों चुप हो, सुलकसाए ने जब सारे गांव की इज्जत में आग लगा दी है।'

'सत्तो !'

'सत्तो, सत्तो, सत्तो, सत्तो ! सत्तो सच कहती है तो सिर फूटता है। कब तक गम खाकर रहोगे ! आजकल में वहां के मुखिया आएंगे तब पता लगेगा।'

'क्या पता लगेगा ?'

'अपने नामी बेटे का नाम हवा में उड़ता सुनोगे, तब मेरी छाती ठण्डी होगी। मेरा मंगू····!····सनकी, ओ सनकी !'

'इंगे, याय्ते[1] !'

'देख तो भला मंगू कहां गया ? कुन्हाल (एक गाली) घड़ी भर लोंन में नहीं रह सकता !'

---

१. हां मां

'देखती हूं।' एक लम्बी आवाज़ कर सनकी बाहर चली गई। हिरमे ने कहा, 'क्यों शोर मचाती है सत्तो ? जरा तो धीरज धर।'

'धीरज ही तो धरे हूं। उस दिन तुमने कित्ता मारा था मंगू को, देखती हूं अब सुलक का क्या करते हो ?'

'सत्तो !...बात भी बात जैसी की जाती है। सुलकसाए मेरी बराबरी का है। घोटुल का सिरदार है। गांव भर के जवानों का मुखिया है।'

'यही तो बात है राजा, घोटुल का सिरदार, जवानों का मुखिया, और खुद काम में घटिया। मैं उसे सिरदारी से निकलवा कर रहूंगी। मंगू..., ओ मंगू, नहीं आया अभी तक माइलोटा....!'

'पेदा,[1] ओ पेदा....!'

'कौन ?'

'मैं, महुआ।'

'आया पेकी,[2] आया।' हिरमे ने लंगोटी के छोर से अपनी आंखें पोंछीं और बाहर निकल आया, 'कह बेटी !'

'कुछ नहीं बाबा, यूं ही चली आई। सुलकसाए....!'

'हां महुआ, सुलक लौट आया है।' कपाल पर हाथ धरकर वह वहीं बैठ रहा, 'जाने उसे क्या हो गया है !'

'क्यों बाबा ?'

'रात भर रोता रहा। सोया नहीं।'

'सोया नहीं ! क्यों ?'

'तू तो सब जानती है महुआ....!'

'कुछ नहीं जानती बाबा, सच कहती हूं, मैं कुछ नहीं जानती।' उसने उत्सुकता से पूछा। हिरमे का हाथ पकड़कर बोली, 'क्या हुआ उसे ? ताप तो नहीं आया ? मैं कहती थी, न जा...पर...!'

'जाना तो वह भी नहीं चाहता था महुआ, दो दिन से मुझे ताप आ रहा था तो मैंने ही उसे भेज दिया। क्या मालूम था...!'

'हुआ क्या बाबा ?'

---

१. गांव का मुखिया २. जवान लड़की

'तू सचमुच कुछ नहीं जानती ?' हिरमे ने उसकी आंखों की ओर देखते हुए पूछा।

वह बोली, 'बड़े महादेव की कसम बाबा···वह कहां है ?'

'अभी यहीं था, पीछे परछी में !'

महुआ उस ओर जाने लगी तो सत्ताय ने रोक दिया, बोली, 'तू बात न जान तो अच्छा है महुआ, जानकर तेरा भी सिर चढ़ जाएगा। ···सुलकसाए ! कित्ता बड़ा नाम है ! घोटुल का सिरदार··· !'

'सत्ताय !' हिरमे चिल्लाया।

'तुम मेरा मुंह बन्द करते हो, गांव भर का मुंह कैसे बन्द करोगे ! जी चाहता है चीख-चीखकर गांव भर में खुद मुनादी पीट दूं, पर औरत जो हूं, मरद किया है मैंने अपनी मरजी से। अब पेड़गा-पेड़गियों को लेकर कहां जाऊं ?' —सताय रोने लगी। उसके रोने की आवाज़ सुनकर आसपास खेलते बच्चे आ गए।

'याय्ते, याय्ते ···!' उसने अपने सारे लड़कों को झिड़क दिया, 'कीड़े जैसे बिलबिलाते हैं। बरियापेन की आंखें फूटी थीं ? लड़के दिए तो ऐसे खसम से जिसे फूटी आंखों नहीं सुहाते। जब औरत की जरूरत थी तो पैर पर लोटता था। कहता था, मेरी जीवाल[1] बड़ादेव देखे; तुझे आंखों की पुतलियों में बसाकर रखूंगा···तुझे देखता हूं तो अपने आपको भी भूल जाता हूं····सच कहता हूं सत्तो, तू रहे तो आकाश पर नाचूं··· ! एक दिन तो नरवा के तीर मेरे पैर पर अपना सिर तक रख दिया था····।'

हिरमे गुस्से में लाल हो रहा था। सत्ताय की बातों ने उसका धीरज छीन लिया था। वह उठा। बाहर एक डंडा पड़ा था। उसे उठाकर सत्ताय पर टूट पड़ा—सट् सट् सट् ! सत्ताय गला फाड़-फाड़कर चिल्लाने लगी। महुआ ने यह देखा तो पीछे की बारी से भाग गई। बेड़ा[2] पार कर अंडा के झाड़ के पास जब पहुंची तो उसने सुलकसाए को आता देखा। सुलकसाए नीचे सिर झुकाए चला आ रहा था। उसे पता नहीं था कि महुआ सामने खड़ी है। जब वह महुआ के बिलकुल पास आ गया तो एकदम चौंक गया। महुआ ने उसके सिर के बाल

---

१. प्रेमिका २. खेत

पकड़ लिए, 'भूत लगे हैं क्या रे ?'

सुलकसाए आंखें फाड़े उसकी ओर देखता रहा। कुछ बोला नहीं। उसकी आंखें भारी थीं। ऊपर की पलकें फूलकर लाल हो गई थीं। नाक की नोंक में भी लाली थी। महुआ ने उसके बाल छोड़ दिए, बोली, 'कब आया ?'

सुलकसाए नीचे सिर झुकाकर खड़ा रहा, कुछ बोला नहीं।

'बोल सुलक, आज बोलता क्यों नहीं ?'

'क्या बोलूं महुआ !' उसके मुंह से आवाज़ मुश्किल से निकली।

'तुझे हो क्या गया है ? बिहाव में किसीने कुछ कर तो नहीं दिया ?'

'शायद....' सुलक कह न पाया।

'शायद.... क्या ? जाने वहां क्या कर आया ? किसके लोंन में तूने आग लगा दी, तेरे लोंन में अलग हंगामा मचा है।'

सुलकसाए ने सिर ऊपर उठाया, बोला, 'मेरे लोंन में !'

'हां रे, तेरे लोंन में ! तेरी याय्ते है न; वह सौतेली याय्ते सत्ताय, तेरे तापे से झगड़ रही थी। कहती थी लड़का तुम्हारा है। कित्ता अच्छा नाम कमा रहा है !'

'बस, बस महुआ, अब मैं नहीं सुनना चाहता।'

'अरे सुन तो, तेरे तापे ने उसकी खूब ठुकाई की। उसे डंडे से पीट रहा था तो मैं पीछे से भाग निकली। तेरा तापे तेरे लिए रोता था सुलक।'

'मेरे लिए !'

'हां रे, तेरे लिए ! पर, यह तो बता तूने किया क्या है ? सब कुछ तेरे नाम से हो रहा था....तेरी याय्ते...!'

'बस, महुआ उसे याय्ते मत कह, मेरी याय्ते ! काश, आज वह यहां होती म....हु....आ....!—कहते-कहते सुलकसाए का मन भर आया, उसकी आंखें नम हो गईं, 'फिर मिलूंगा महुआ' और वह अपने लोंन की ओर दौड़ गया। महुआ वहां खड़ी-खड़ी उसे देखती रही। यह सब क्या हो रहा है, उसकी समझ में नहीं आया।

५

गायों के खुरों को भेदती पोरद की किरणें सामने की पहाड़ी में सो गईं। धरती की आवारा धूल आसमान में समा गई और तभी घोटुल के फाटक से चर चूं ऊं ऊं, चररर चूंऊंऊं की आवाज़ आई। जमादार, वेलोसा और दुलोसा ने खरहरा लेकर सारे घोटुल को साफ किया। बीच में लकड़ियां जमा कीं और चकमक से एक तीली जलाकर आग जला दी। आग की मध्यम लाल जोत सारे घोटुल में फैल गई।

जैसे-जैसे शाम ढली और अंधेरा बढ़ा, घोटुल की आग तेज़ होती गई। एक के बाद एक गांव के चेलिक और मोटियारी बगल में गीकी दाबे आने लगे। सब आकर अपनी गीकी परछी में रख देते और बाहर मैदान में बैठ जाते।

सुलकसाए की हालत खराब थी। वह राजामहल के पीछे की परछी में अकेला बैठा था। उसे लग रहा था, जैसे सारा संसार उसपर हंस रहा है। सब उसका विरोध कर रहे हैं। वह अकेला है, बस अकेला। महुआ की बात जब वह सोचता है तो एक गहरी दर्दभरी टीस उसके मुंह से निकल पड़ती है। उसे जैसे किसीने घायल कर दिया है। वह अपने किए पर पछताता है। जो कुछ हो गया, उसपर सोचता है। महुआ क्या सोचेगी ? क्या उसे सब कुछ पता चल गया है ? नहीं, पता लगा होता तो वह इतनी भोली क्यों बनती ! नहीं, वह सब जानती है, फिर भी उसे जलाने के लिए न जानने का ढोंग रचती है ···और न भी जाने तो जान लेगी। झालरसिंह सब बता देगा। वह न बताएगा तो उस गांव के लोग यहां आएंगे ही। बात छिप नहीं सकती····तब, तब महुआ क्या सोचेगी ? वह पूरे विश्वास के साथ प्यार करती है। उसका विश्वास छला जाएगा। वह प्यार को एक ढोंग समझेगी। उसने कभी कोई बात छिपाकर नहीं रखी। महुआ !···उसे याद आ गई उस दिन की बात, जब तेज़ सर्दी पड़ रही थी और सर्द हवा चल रही थी। महुआ, तेन्दू बीनकर जंगल से लौट रही थी कि रास्ते में एक आदमी मिल गया। उसे भी इसी गांव से जाना था। सांझ हो गई थी। उसने कहा था, 'अकेली जा रही हो, ठहरो।'

महुआ रुक गई थी, 'क्या है ?'

'सुना नहीं, इस जंगल में एक नरभक्षी सोरी[१] आया है। कल नरायनपुर के एक आदमी को यहीं से उठाकर ले गया।'

'ले गया होगा!' महुआ ने बात चुटकी में उड़ा दी थी।

'बड़ी दिलेर औरत है! डर नहीं लगता?'

'देख, तू कौन है, मैं नहीं जानती, मुझसे व्यर्थ छेड़खानी न कर।' महुआ तमक उठी थी।

'छेड़खानी नहीं करता पेड़गी, मुझे ही तो डर लग रहा है। सारा डोंगुर[२] पार कर गया, कोई नहीं मिला। तू मिली तो धीरज आया। एक से दो भले। सर्री[३] बात करते कट जाएगी। क्या नाम है तेरा?'

'महुआ'—उसने उपेक्षा से जवाब दिया था और चलती रही थी।

'महुआ!' उसने कहा था, 'वाह महुआ, इसी नाम की तो मेरी भी पेड़गी है, बस तेरी जैसी।'

महुआ के पैर अपने आप अड़ गए थे। उसने लौटकर देखा था। एक मरियल-सा आदमी! अधेड़ था वह। पीठ में तरकस कसे था और मुंह से चिलम का धुआं उगल रहा था।

'तेरी पेड़गी!'

'हां, महुआ, तू डरती काहे को है! अपने बीर[४] जैसा समझ मुझे।'

महुआ को भरोसा हो गया था। वह उसके साथ-साथ चलने लगी थी। उसने पूछा, 'कित्ता बड़ा सोरी?'

'बहुत बड़ा, अभी तक इत्ता बड़ा नहीं देखा!'

'तूने देखा था?'

'हां···हां····नहीं, नहीं, मुझे नरायनपुर के एक आदमी···वह, रतन, जानती है न उसे····?'

महुआ ने सिर हिलाकर कहा था, 'नहीं।'

'चल अच्छा है, न जान तो भला। रतन नाम था उसका, उसीको सोरी उठा ले गया। कहते हैं, वह खूब लड़ा था उससे, पर जीत न सका। सोरी ने घायल कर दिया और फिर उसका गला फाड़कर सारा खून पी गया।'

---

१. बाघ या शेर २. जंगल ३. रास्ता ४. भाई

'खून ! बस, बस, रहने दे।' महुश्रा को यह किस्सा सुनकर शायद दुःख हुश्रा था, बोली, 'बड़ा खराब हुश्रा। सोरी ने श्रच्छा नहीं किया।'

'सोरी श्रच्छा कब करता है री महुश्रा !' बोलते-बोलते वह रुक गया था। उसने श्रपने कान खड़े कर चारों श्रोर नज़र दौड़ाई थी। बोला, 'नहीं सुन रही ?'

'क्या ?'

'श्रां····ऊं···ऊं···ऊं····ऽऽऽऽ—कैसा गुर्रा रहा है !'

महुश्रा ने श्रपने कान खड़े किए पर ऐसे कुछ शब्द उसे सुनाई नहीं दिए थे, बोली, 'मुझे नहीं सुन पड़ता।'

तभी शायद सूखे पत्तों के खड़खड़ाने की कहीं से श्रावाज़ हुई थी। वह बोला, 'वह देख, श्राकी[1] खड़खड़ा रहे हैं न ! श्रौर····श्ररी महुश्रा ! वह देख ढडुश्रा[2] भी तो कूद रहे हैं। हे नरायनदेव····!'

महुश्रा ने श्रांखों की पलकें बन्द कर ली थीं। जब उसने धीमे से पलकें उठाई थीं तो उसके सामने श्रंधेरा जैसा छा गया था। पैर के नीचे से उसे ज़मीन सरकती मालूम हुई थी। वह उस श्रादमी से जाकर लिपट गई थी श्रौर कांपने लगी थी। उसने उसे ज़ोर से समेटकर श्रपनी छाती से लगा लिया था। महुश्रा बराबर कांपती जा रही थी।

उस श्रादमी ने कहा था, 'चल महुश्रा, वह ईतुममरा के झाड़[3] हैं न, उनकी श्राड़ में बिलम लें।'

महुश्रा कुछ न बोल सकी। वह सचमुच डर गई थी। महुश्रा को उसी तरह छाती से लगाए वह ईतुममरा के झाड़ों तक ले गया था श्रौर उसकी एक शाखा पर बैठ गया था। उसने महुश्रा को छोड़ा तो वह श्रौर कांपने लगी थी। उसने फिर उसे चिपका लिया था। जब कुछ देर हो गई तो महुश्रा बोली, 'देख, शायद वह कहीं श्रौर चला गया। चल, श्रब चलें।' वह कुछ बोला नहीं। वह महुश्रा को घूर रहा था। उसकी पीठ पर हाथ फेर रहा था। बोला, 'हां, शायद चला गया। पर जाने दे उसे······।'

महुश्रा ने श्रपने बंधन छुड़ाने की कोशिश की तो वह बोला, 'क्या नाम है !

---

१. सूखे पत्ते २. काले मुंह के बन्दर ३. कुरलू का झाड़

क्या देह है तेरी ! म···हु···ग्रा ! देखकर जीभ में पानी ग्राता है। एक बूंद मिल जाए तो डोंगुर में सरग उतर ग्राए !'

महुग्रा ने सुना तो सन्न रह गई। बोली, 'क्या कहता है रे बंमटा[1]; मैं तो तेरी पेड़गी जैसी·······।'

'ग्ररी वाह !' एक ग्रजब ग्रंदाज़ से उसने कहा था, 'मेरी भी क्या कोई पेड़गी है ! ग्रभी ग्रपनी उमर ही क्या हुई है ! तेरी जैसी कोई पेकी खुश हो जाए तब तो तापे बनूं।'

महुग्रा एक धक्का दे उठकर खड़ी हो गई थी ग्रौर तमककर उसकी ग्रोर देखने लगी थी। उसने खड़े होकर चिल्लाया, 'सोरी, सोरी, सोरी वह ग्राया।'

'ग्राने दे रे'—महुग्रा ने दांत पीसे थे, 'तुझ जैसे घटेवा[2] से उस सोरी के मुंह में जाना भला है। तू ग्रादमी है न ! ग्रादमी में जब जानवर के गुन ग्राते हैं तो वह जानवर भी नहीं रह जाता।' उस ग्रादमी ने उसके दोनों बाजू पकड़कर एक झटके से उसे ग्रपनी ग्रोर खींचा था ग्रौर ग्रपने सिल्वी[3] उसके गालों पर रखना ही चाहता था कि महुग्रा ज़ोर से चिल्लाई थी। उसकी चिल्लाहट किसी दूसरे राहगीर ने सुनी थी ग्रौर जब वह उसे बचाने दौड़ा तो वह डोंगुर में न जाने कहां खो गया था।

गांव ग्राते ही महुग्रा सबसे पहले सुलकसाए से मिली थी। उसकी छाती से लिपटकर वह खूब रोई थी। यह सारी कहानी बिना मन में मैल रखे वह सुलकसाए से कह गई थी।

सुलकसाए को जब यह किस्सा याद ग्राया तो उसके रोंगटे खड़े हो गए। महुग्रा ने उसके साथ, पिरेम में कित्ती ईमानदारी बरती है ! कुछ छिपाकर कभी नहीं रखा। यदि उसके मन में मैल होता, तो वह यह सारा किस्सा क्यों बताती !

उसने ग्रपने सामने महुग्रा को खड़ा देखा। उसे लगा जैसे वह दूध में धुली खड़ी है। चांदनी जैसी वह साफ है। बगुले के सफेद पर जैसी वह चमक रही है—'मैंने उससे यह बात छिपाकर ग्रच्छा नहीं किया। मुझे सब कुछ बता देना

---

१. एक तरह की गाली, २. गाली, नरबच्चा ३. ग्रोंठ

चाहिए था। उस दिन की लांदा ने मुझे कित्ता गिरा दिया ! मैंने जानवर को भी लजा दिया। मैंने एक जोड़े का सुख छीन लिया। उनकी रंगीन जिन्दगी में आग लगा दी और अपने सुख में अपने हाथ से आग लगा ली।' सुलकसाए ने भावावेश में अपना सिर राजामहल की लाल ईंटों से पीट लिया। वहां दर्द हुआ। उसने हाथ रखा तो देखा खून निकल आया है। उस खून को उसने अपनी हथेलियों से पोंछा और फिर जीभ से चाटने लगा।

'महुआ से तूने छल किया है रे सुलक, इसकी यही सजा तुझे मिलनी चाहिए' —उसे लगा कि वह अपना सिर ईंट से पीटे और इस तरह अपना सारा सिर फोड़ डाले, पर वह दुबारा सिर न पीट सका। जो दर्द अभी घाव में हो रहा था, उसकी पीड़ा ने दूसरी चोट खाने की हिम्मत उससे छीन ली थी। वह उठकर खड़ा हो गया और राजामहल की परछी से नीचे उतरकर घोटुल की ओर चल पड़ा।

पूना गीकी जोड़ी जोड़ी गीकी
सिंगार न गीकी ते दोए
बदेना गीकी ते दोए
जलिया गीकी ते दोए
बरा बरा झालरसिंह गीकी तहेलाय।[1]

ढोल, मांदर और टिमकी के साथ घोटुल से निकलते समवेत स्वर हवा में दूर-दूर तक गूंज रहे थे। सुलकसाए के कान में जब वे पड़े तो वह खड़ा हो गया। उसके सिल्वी सब कुछ भूलकर खुलने और बन्द होने लगे। पैर अपने आप थिरकने लगे। वह वहीं खड़ा-खड़ा उचाट भरने लगा :

महुआ गीकी ते दोए,
बरा बरा सुलकसाए गीकी तहेलाय।

उसने ताकत समेटी और घोटुल की ओर दौड़ गया। बात की बात में वह

१. दो नई चटाइयां ले आओ। सिंगार लड़की की चटाई अभी तक क्यों नहीं उठाई गई ? बदेना और जलिया की चटाई क्यों नहीं उठाई गईं ? आओ झालरसिंह, हम चटाई उठाकर रख दें।

घोटुल के फरके तक पहुंच गया । उसे घोटुल के सदस्यों ने देखा तो एनदाना छोड़-कर सब चिल्ला उठे, 'सि···र····दा·····र, रे रे रे रे ऽ।'

महुआ शायद भीतर बैठी थी । सुनकर बाहर निकल आई ।

'नाचो, नाचते क्यों नहीं ! तुम लोगों ने अपने पैर क्यों रोक दिए ?' सिर-दार ने कहा ।

जलिया ने अपने शरीर के अंग-अंग को समेटा । इस सिमटन में शरारत भरी थी । बोली, 'सिरदार, तुझे देखकर हमने पैर रोक दिए । सोचा, तेरे साथ भुसरी भी होगी, फिर·······।'

'जालिया आ आ आ आ,'—सिलिंगदार पूरी ताकत के साथ गले में जोर देकर चिल्लाया । पूरे घोटुल में खामोशी छा गई, पर जलिया बराबर हंसती रही ।

सिरदार खड़ा-खड़ा उसकी हंसी देखता रहा । जलिया पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा । उसने सिरदार का हाथ पकड़कर जोर से खींचा और बोली, 'काहे को आंख दिखाता है रे ! हम तो तुझे देखकर खुशी से पागल हो गए और तू है जो आग उगलता है । तू हमारा सिरदार है न, वरना········ ।'

झालरसिंह ने आकर उसका हाथ छुड़ा दिया और आंख निकालते हुए बोला, 'ख···ब···र···दा···र !' जलिया ने हाथ तो छोड़ दिया पर फिर दांत बाहर निकाल दिए । बनावटी हंसी से उसने जो हंसना शुरू किया तो घोटुल की मोटियारियों ने भी उसका साथ दिया और सब सचमुच हंसने लगीं । झालर-सिंह ने सुलकसाए को कट्टुल पर बैठा दिया, बोला, 'सब पागल हो गई हैं, सुलक ! तेरी सर्री बड़ी देर से हेरती थीं । तू क्या मिला, इनकी बन गई ।'

सुलकसाए नीचे सिर किए बैठा था । उसने कोई जवाब नहीं दिया ।

महुआ सबसे अलग थी । उनकी हंसी में वह अपने को शामिल न कर सकी ।

थोड़ी देर के बाद सारी मोटियारियां अपने आप चुप हो गईं और पूरे घोटुल में खामोशी छा गई ।

महुआ बोली, 'क्यों रे सुलक, बात क्या है ? तू तो ऐसा कभी नहीं रहा !'

झालरसिंह ने सुलकसाए को धक्का दिया, 'ओ सपूत, बताता क्यों नहीं ? अपनी करनी कब तक छिपाए रखेगा ? तू सोचता है बात जरा-सी है, आई और

टल गई ? परगना मांझी[1] तक बात पहुंच गई है । सिरदार, बस चाहे जब बुलावा आ जाए ।'

महुआ ने झालर की ओर देखा, बोली, 'क्या हुआ झालर ? यह तो नेतानार से आकर न जाने कैसा हो गया है ! किसीने सोध तो नहीं दिया ?'

'नहीं महुआ, नहीं....,' सुलकसाए ने अपने कान में हाथ लगाकर चिढ़ते हुए कहा, 'तुम सब लोग सब कुछ जानते हो फिर भी मुझे जलाते हो......।'

'नहीं जानती सुलक, तेरी कसम नहीं जानती'—महुआ ने कहा तो सुलकसाए ने आंखें फाड़कर उसकी ओर देखा। वह देखता रहा। वह शायद महुआ की आंखों के सहारे उसके मन की सचाई को पढ़ना चाहता था ! उसे लगा कि महुआ सचमुच भोली है, वह कुछ नहीं जानती । और जब यह विचार उसके मन में आया तो उसे और दुःख हुआ । एक जगह असलियत छिपी है, न खुलती तो ? ...उसे डर भी तो इसी जगह का था। गांव भर की फिकर उसने छोड़ दी थी। जो हो चुका सो हो चुका, पर महुआ....! वह उससे पिरेम करती थी न। उसका पिरेम छला जाएगा। वह पिरेम से पिरेम करना छोड़ देगी। पिरेम कच्चे धागे की तरह होता है, जरा से झटके से टूट जाता है। वह छिवला की डाल की तरह नाजुक है। इसीसे जब उसे मालूम हुआ कि महुआ वास्तव में भोली है, उसे सचमुच कुछ पता नहीं लगा है, तो उसके कलेजे में भारी पीड़ा उठ बैठी। एक भयंकर तूफान आया और वह एकाएक उठकर घोटुल के बाहर हो गया और गेंवड़े की तरफ दौड़ गया। घोटुल के सारे सदस्य आश्चर्य से देखते रहे, देखते रहे, तब तक देखते रहे जब तक वह दिखाई देता रहा।

महुआ चक्कर में थी। यह सब क्या है ! सुलक को क्या हो गया है ! उसने जब झालरसिंह से पूछा तो झालर ने सारा किस्सा सुनाना आरम्भ कर दिया। घोटुल के चेलिक और मोटियारी बीच में जलती आग को घेरकर बैठ गए और झालरसिंह के मुंह से नेतानार का सारा किस्सा सुनने लगे। किस्सा खतम हुआ तो महुआ बोली, 'बस, इत्ती-सी बात !'

'हां महुआ, इत्ती-सी बात है, तिल का ताड़ हो गया है ।'

सुलक के दुःख को महुआ न देखती तो शायद सुनकर उसे धक्का भी लगता,

---

१. एक क्षेत्र का मुखिया

पर अब उलटे सुलकसाए के प्रति उसके मन में हमदर्दी जागी, बोली, 'जरूर वह लांदा में धुत रहा होगा !'

'हां महुआ, बात तो यही थी, पर....।'

'पर क्या ? मैं उसके तापे से कहूंगी, उसका कोई कुछ न कर सकेगा।'

'उसका तो सचमुच कुछ न होगा, पर है तो यह गांव की इज्जत का सवाल। परगना-मांझी पंचायत भराएगा और उसमें गांव की तरफ से गायता को माफी मांगनी होगी।'

'नहीं झालर, माफी मैं मांगूंगी अपने सुलकसाए की तरफ से।'

जलिया ने हंस दिया। बोली, 'चलो अच्छा ही हुआ। अभी एक पागल था, अब दोनों पागल हो गए। अरी पगली, तू सुलकसाए की कौन होती है ? तू माफी मांगेगी, क्यों ?'

रात काफी हो गई थी। ऊपर का सारा आकाश काला था और उसकी छाती में अनगिनत तारे अंगारों की तरह चमक रहे थे। घोटुल के सारे सदस्य परछी में चले गए और अपनी-अपनी गीकी से बंध गए। महुआ का मन और भारी हो गया था। वह चिन्ता में थी—सुलक रात में कहां चला गया ? कहीं कुछ कर न बैठे ? और यह सोचते-सोचते उसे जलियारो की बात याद आ गई, 'अरी पगली, तू सुलक की कौन होती है ? तू माफी मांगेगी, क्यों ?'

उसने मन में एक बार कहा, 'मैं सुलक की सब कुछ होती हूं, उसकी सच्ची साइगुती हूं।' पर तुरन्त मन ने फिर उत्तर दिया, 'यह एक भ्रम है, बहलावा है। सचमुच मैं उसकी कोई नहीं हूं। उसकी तरफ से माफी मांगने का मुझे अधिकार ही क्या है ?' इसी बीच न जाने कब की बातें उसे याद आ गईं। एक दिन उसने सुलकसाए से कहा था, 'हम दोनों पेन्डुल कर लें सुलक !' तो उसने उत्तर दिया था, 'नहीं महुआ, बिहाव में बन्धन है। यही समझ कि मैं तेरा हूं और तू मेरी है, जिन्दगी भर एक-दूसरे के रहेंगे, एक-दूसरे से बंधे रहेंगे, पर फिर भी एकदम निर्बन्ध।' अब उसके मन में शंका जागी—'सुलकसाए बंधन से क्यों डरता है ? क्या इसके पीछे उसकी दुर्भावना नहीं है ? वह पुरुष है, वह पुरुष जो अपने पौरुष को निर्बन्ध रखना चाहता है। लेकिन क्या इसमें छल की भावना नहीं है ? किसी भी दिन वह धोखा दे सकता है। महुआ के मस्तिष्क में चिन्ता के बादल

और भी घने हो उठे। उसे लगा कि सुलकसाए ढोंग रचाने की बातें करता है, वह उसे धोखा देना चाहता है। उसने यह भी अनुभव किया कि इसका बीज बोया जा चुका है—नेतानार में, भु···स····री, भु···स•••री····भु···स···री !'

महुआ के सामने भुसरी का एक हलका नक्शा उतर आया। उसमें उसने अपने आपको जलता पाया। उसे लगा जैसे सुलकसाए एक बड़ी कुयेर[1] की तरह है। उससे एक भारी लहर उठी है। उस लहर ने महुआ को कुयेर से निकालकर बाहर फेंक दिया है और अब वह आगे बढ़कर भुसरी को समेटना चाहती है।

कारा पाण्डुम का त्यौहार ! गांव भर घोटुल के सामने मैदान में जमा हुआ। आज की रात सारे गोंड़ों ने घोटुल में काटी थी। घोटुल के चेलिक और मोटियारी इसीसे परेशान थे। उनकी आज़ादी छीन ली गई थी। बरस भर में यही दिन होता है जब सब यहां आते हैं, इसलिए कि चेलिक और मोटियारी सारी रात हंसी-खुशी में बिताएं। किसीको चिन्ता न रहे और रात में वे आपस में न मिल सकें। यह रात गांव भर के लिए परीक्षा की होती है। गांव के हर आदमी और औरत को दूर रहना पड़ता है। ब्याहे जोड़े फिसल न जाएं, इसीसे सब घोटुल में आ जाते हैं। एक खासी भीड़ जमा हो जाती है। सारी रात इन लोगों ने नाच-गाकर काटी थी।

मुर्गे ने बांग दी और पूरब के पोरोभूम का चेहरा चमक उठा। सारे लोग नार[2] की देवी के पास गए। गायता ने पूजा की, हवन-आरती उतारी और फिर मुर्गे-मुर्गियों, बकरे और भैंसों की बलि दी गई। सारा मैदान खून से लाल हो गया। सबसे पहली बलि धरती मैया को दी गई, फिर गांव के पुरखों को एक-एक कर याद किया गया और उन्हें बलि दी गई। जितना खून वहां जमा होता, गांव वालों को उतनी ही खुशी होती। पुरखे जब निपट गए तो एक तन्दुरुस्त भैंसा लाया गया। वह पहले से ही पीपल के झाड़ के नीचे बंधा था। उसकी गायता ने पूजा की और पेरमा ने टंगिया ताकत भर उसके गले में दे मारी। भैंसा ज़मीन में लोटने लगा तो औरतों ने ताली पीट दी। अंभोली इस समय

१. नदी २. गांव

औरतों के दल के पास खड़ा था। उसने बूढ़ी उदलिया की चिहुंटी काटी तो वह उचट पड़ी, 'रे बंमटा, अंधा है क्या ?'

'नहीं दादी, सोच रहा था—अंधी पास खड़ी है, क्या पहचानेगी !'

'क्या कहा…!'

'कुछ नहीं, उसकी बात कर रहा था, वह भूरी।'

'भूरी ? क्या किया है उसने ?' बुढ़िया उदलिया गुस्से में आने की कोशिश कर रही थी, पर वहां खड़े लोग हंस देते थे और तब उसके सिल्वी भी तिरछे हो जाते थे। सन के रेशे जैसे उसके बाल थे। आंखें धंसी थीं। पुतलियों की सफेदी बाहर निकली पड़ती थी। उसकी देह की चमड़ी सिकुड़ी थी और उसमें परतें ही परतें दिखाई दे रही थीं, ठीक उस तरह जैसे पूर उतरने पर नदी के किनारे दिखाई देते हैं। हाथ में वह डंडा लिए थी और पैरों से कांप रही थी। उसने भूरी का नाम सुना तो डंडा जमीन पर पीटा। भूरी उसकी लड़की है। जब वह कवांरी थी तभी उसका पेट रह गया था, और जिसका पेट था उसने उसे लेने से इन्कार कर दिया था। आन गांव के एक चालीस बरस के आदमी ने उसका हाथ पकड़ा। उसे वहां जाना पड़ा। उस आदमी के लड़की थी, उसीके बराबर। गांव की औरतें भूरी को चिढ़ाने लगी थीं। कहती थीं, 'भूरी, तेरा तापे बुला रहा है। तेरा तापे आ रहा है।' वे मोइदो को तापे कहतीं। महीनों यह चला और नौ महीने के बाद एक लड़का देकर वह पागल हो गई। यह पगली आसपास के गांवों में चक्कर लगाती रहती है, और जहां जाती है, गांव के छोटे लड़के-लड़कियों की बन आती है। वे उसके पीछे लग जाते हैं। उसपर धूल और पत्थर फेंकते हैं। वह गाली देती है, वे ताली बजाते हैं।

इसी भूरी की जब अंभोली ने चर्चा की तो उदलिया बिगड़ गई। उसके बिगड़े मुंह को देखकर सारे लोग हंसने लगे। तभी कहीं से घूमती भूरी वहां आ पहुंची। गांव के बूढ़े तो देवी की पूजा-पाठ में लगे रहे, पर जवानों के लिए मनोरंजन का खासा मसाला मिल गया। अंभोली गांव भर में प्रसिद्ध है। बड़ा हंसोड़ है वह। उमर होगी पैंतीस-चालीस की। घर में अकेला है, न आगे कोई हंसने को और न पीछे कोई रोने को। सूरत में करईमुंडा का पत्थर है और शरीर की बनावट में नरवा की घाटी। कोई देखे तो अपने आप हंसने लगे। और जब

वह किसीको हंसता देखता है तो खुद भी इत्ता हंसता है कि सामने का आदमी हंसना भूल जाता है। गांव के लड़के उसे चिढ़ाने भिड़ते हैं तो एक मेला भर जाता है। वह भी इसका आनन्द लेता है। लड़कों को उठाकर अपने कंधे पर बैठा लेता है और किसी झाड़ की डाल में टांग आता है। ज़रा-से लड़के झाड़ की डाल पर टंगते हैं तो हंसते भी हैं और रोते भी। कोई धीरे-से उतर भी आता है तो कोई आम की तरह नीचे टपक भी पड़ता है। कोई रोता है, कोई हंसता है। पर अंभोली सिर्फ हंसता रहता है, बस ! लोग उसे आधा पागल समझते हैं, वह दुनिया भर को पागल समझता है। पर एक बात है, गांव का हर आदमी उसे मानता है, हर आदमी की हमदर्दी उसे मिली है।

अंभोली ने दौड़कर भूरी के हाथ पकड़ लिए और उसे चाई-माई जैसा चारों ओर घुमाने लगा। सबने ताली पीटी। कुछ वहीं खड़े-खड़े उचटने भी लगे। बुढ़िया की खीज का अन्त नहीं था। वह बार-बार चिल्लाती, 'रे बंमटा, रे बंमटा !' सुनकर भूरी ही उसीको जीभ दिखा देती। शायद उसे भी इस खेल में मज़ा आ रहा था। अंभोली ने घुमाते-घुमाते भूरी का हाथ छोड़ दिया तो वह ज़मीन पर गिर पड़ी। उसे शायद सिर में लग गई थी। वह अपने दाएं हाथ से सिर सहला रही थी। दो-चार मिनट उसने हाथ फेरा और फिर ताली पीटकर वहीं उचटने लगी :

केरा लाटा मंगनाय रे
खेलू खेलू काय लेकी मन,
चिम्मनाय रे।[1]

अंभोली ने भी उसका साथ दिया और दोनों ताली पीटते, गाते-नाचते रहे। यह खेल शायद काफी देर चलता, पर गायता ने जब पूजा कर ली तो एक आवाज़ लगा दी। सब देवी की ओर देखने लगे। हनगुण्डा ने अंभोली को डांटा और हाथ पकड़कर उसे गायता के पास लाकर खड़ा कर दिया। भूरी ने अपनी चढ़ी आंखों से एक बार सबकी ओर देखा और उत्तर की ओर दौड़ लगाती चली गई।

देवी की पूजा खतम हो गई थी। सारे चेलिकों ने अपनी-अपनी टंगिया

१. यह एक गोंडी खेल-गीत है; अर्थ है—लड़के-लड़कियां आओ, हम खेलें।

में देवी की हल्दी लगाई और जंगल में घुस गए। मोटियारी और अन्य औरतें गांव की ओर लौट आईं। गांव भर के चेलिकों ने दीपा[1] के लिए झाड़ों की डगालें काटीं।

सुलकसाए भी इनमें था और झालरसिंह भी। ये दोनों पास-पास डालें काट रहे थे। झालर बोला, 'सुलक, तू तो पागल हो रहा है रे। अरे भाई, जो हो गया सो हो गया, पर क्यों सिर पर भूत लिए फिरता है?'

'तू भूत कहता है झालर, मेरे मन को पढ़ने की कोशिश कर! वहां दवांर[2] लगी है। कल घोटुल से भागा था तो नरवा के तीर रात भर बैठा रहा। सब तरफ ठंडी थी, पर मेरे मन को शांति न मिली।'

'आखिर क्यों?'

सुलकसाए ने अपनी टंगिया नीचे रख दी और कपाल का ईपुर[3] पोंछकर ज़मीन पर बैठ रहा, 'परगना-मांझी के पास शिकायत हो गई है-झालरसिंह, मेरे पीछे गांव भर की इज्जत जाएगी।'

'क्या कहता है रे, यह आज का किस्सा है क्या?'—झालर भी उसके पास बैठ गया था।

'मेरा मन नहीं मानता झालरसिंह, वह विद्रोह करना चाहता है। मैंने उस दिन जो किया शराब के नशे में किया था। दोष तो उसका है न, फिर···।'

झालरसिंह हंसा, 'तो तू चाहता है कि सजा शराब को दी जाए? अरे, वह तो हमारी जिन्दगी है, उसे सजा देना अपनी जिन्दगी को तोड़ना होगा।'

सुलकसाए चुप रहा। उसके कपाल पर फिर ईपुर आ गया था। उसने अपनी बंडी से उसे पोंछा और एक लम्बी सांस ली, 'तुझे कैसे समझाऊं झालर, तू मेरे मन को नहीं समझ पा रहा। गलती मैंने की है न, मुझे सजा मिलनी चाहिए। मेरी ओर से गांव का मुखिया माफी मांगेगा! हमारे गांव की इज्जत कहां रहेगी!'

'अरे पागल, नेतानार का मुखिया हमारे मुखिया से तीन बार माफी मांग चुका है।'

---

१. शिफ्ट कल्टीवेशन का एक ढंग
२. जंगल में अपने आप लगने वाली तेज़ आग ३. पसीना

'वह तो जानता हूं, इसीका तो डर है। आज हमारा बड़प्पन टूट रहा है।' सुलकसाए को शायद दर्द हो रहा था।

'यह तो हमारे गांवों की आपसी बातें हैं सुलक, इतनी-सी बातों को ऐसे नहीं सोचा जाता। दोनों गांवों के रहने वाले हम सब एक हैं, फिर भेद-भाव क्या! वे आएंगे, हमारा मुखिया हाथ जोड़कर माफी मांग लेगा, सब गले मिल जाएंगे। फिर हमीं उनका स्वागत करेंगे, खाएंगे, खेलेंगे, हंसेंगे।'

'झालर!' सुलकसाए ज़ोर से चिल्लाया, 'मैं नहीं सुनना चाहता। यह कभी नहीं होगा। मैं नहीं होने दूंगा। एक तो भुसरी को जबरन दूसरे के गले बांधा गया, फिर मुझे बुलाकर मेरा अपमान किया गया। तब भी उनका मन न भरा, अब वे सारे गांव का अपमान करेंगे...और सोच, महुआ क्या कहेगी? क्या सोचेगी?'

'अच्छा भाई, तेरी सही'—झालरसिंह ने दोनों हाथ जोड़ लिए। उसने आजू-बाजू नज़र डाली, सारे चेलिक जंगल काटने में लगे थे।

किद्दूरी पुदे, किद्दूरी पुदे।
किद्दूरी पुदे, किद्दूरी पुदे।

पचलू ने तभी आवाज़ लगाई। जंगल का कटना बन्द हो गया। सब अपनी-अपनी झाड़ियां खींच-खींचकर मैदान में ले आए। सुलकसाए और झालरसिंह भी उठ बैठे और अपनी-अपनी झाड़ियों-सहित मैदान में आ गए।

चेलिकों ने पांव में कटवक[1] और हाथों में हरपुंज[2] पहन लिए। कटे हुए झाड़ों में आग लगा दी गई। तब तक सारे चेलिक बैठे या तो चिलम पीते रहे या गपशप करते रहे। सुलकसाए सबसे दूर था। वह न चिलम पी रहा था और न गपशप करने में उसे दिलचस्पी थी। अंभोली उसके पास ज़रूर पहुंच गया था। बोला, 'यार, एक बात कहूं?' सुलक ने आंख उठाकर एक बार उसकी ओर देखा और बिना कुछ कहे बैठ रहा। अंभोली ने उसके कंधे को धकियाया, 'अबे भतीजे, सुनता है?' वह सुनकर भी अनसुना बना रहा तो चचा अंभोली ने उसकी ठुड्डी ऊपर उठाई, 'बेटा बिन्दा, अभी तक महुआ के पीछे पागल था, अब भुसरी भी आ गई...!'

---

१. लकड़ी के जूते २. सांभर के चमड़े का हाथ में पहनने का एक सामान

'अंभोलीऽऽ'—सुलक ज़ोर से चिल्लाया। अंभोली ज़ोर से हंसता हुआ वहां से भाग गया। सुलक सामने जलती आग देखता रहा। शायद उसके मन में भी आग लगी थी! ऐसी आग जिसका अन्त नहीं। सामने की हरी झाड़ियां लड़-खड़ाने लगी थीं, पर सुलकसाए के मन में लगी आग में किसी तरह का परिवर्तन नहीं था। गांव में ऐसे किस्से रोज़ होते हैं। ज़रा-सी बात को इतना तूल दिया जाए तो इनका रहना मुश्किल हो जाए। जंगल की कठोरता इनकी ज़िन्दगी में भी है, हत्या भी करते हैं तो हंसते हुए और उसी तरह हंसते-हंसते अपना पाप कबूल कर लेते हैं। पर सुलकसाए एक अजीब युवक है, जैसे वह यहां के हवा-पानी में नहीं जन्मा। मन का भावुक, बात का पूरा, काम का पक्का और मिज़ाज का गरम। जो उसे सूझे, सो करे। किसीके बहकावे और मनावे में नहीं आता। कितनों को महुआ के साथ उसका रहना नहीं खटका! डूमा महुआ को चाहता है। और वह ही क्यों! उसे हर कोई चाहता है। वह है ही ऐसी। जो एक बार देखे सो देखना भूल जाए। डूमा ने महुआ के विरुद्ध कितने षड्यन्त्र रचे, उसके बारे में कितना झूठ और कितना सच सुलकसाए से कहा, पर वाह रे, वह सब कुछ नियार की तरह पी गया, हवा की तरह खा गया। आखिर सब परेशान हो गए थे और अब कभी कुछ कहने की कोई हिम्मत नहीं करता था। भूरी जब पागल नहीं हुई थी, तब सुलकसाए से घुलघुलकर बातें करती थी। उमर में काफी बड़ी थी, फिर भी उससे पिरेम करना चाहती थी। सुलक ने भूलकर भी उसकी तरफ नहीं निहारा। घोटुल में हमेशा ऐसे समय आते हैं जब अनेक मोटियारियों से उसे मिलना पड़ता है। वह सबसे मिलता है, खुलकर मिलता है; पर महुआ को जो जगह वह दे चुका, उसमें अडिग है। उससे कभी नहीं हिला, कभी नहीं डुला।

सामने की आग बुझ चुकी थी। डालों से गहरा काला धुआं निकल रहा था और ऊपर आसमान में समाता जा रहा था। गांव से कुछ औरतें आ गई थीं। वे अपने साथ नुकांग[1] लाई थीं। वे अधजले थे। उन्होंने सारे चेलिकों में नुकांग बांटे और रिवाज के अनुसार प्रत्येक को वे खाने पड़े। खाकर सब मैदान में कूद पड़े। अधजली डगालें बाहर फेंक दी गईं और सब मिलकर घोसना[2] से सारी

---

१. चावल २. राख बगराने का एक औज़ार

राख बराबर मैदान में फैलाने लगे। हलका-हलका पानी राख पर सींचा गया। यह काम मोटियारियों का था। महुआ भी उनमें शामिल थी। सब मिलकर उत्साह से काम कर रही थीं। इसी ज़मीन में सब मिलकर बरस भर के खाने के लिए अनाज उगाएंगे। जो यहां उग आए, वही बहुत है। सब मिलकर बांट लेते हैं। जितने दिन चले सो ठीक, फिर मेटा[1] के चार, तेन्दू, महुआ और आम कहां गए हैं! कांदा की जड़ें खोजने के लिए फिर उन्हें जंगलों की खाक छाननी पड़ती है।

दीपा तैयार हो गया तो हल लाए गए। सामने मोटियारियों को बैल की जगह फांदा गया और चेलिकों ने हल चलाए—

विरपोंड़ी पन्डो रोमो रोमो
कोरक पहची वायकम सांगों
मिया वाय वाय पचतोरम सांगो
कोरक हाह वायकम सांगो
मिया वाय वाय हायतोरम सांगों
हुर्री तासी वायकम सांगो
मिया वाय वाय हुर्री तसतोरम सांगो।[2]

गाने के सुर एक साथ निकल रहे थे और 'विरपोंड़ी पन्डो रोमो रोमो' की टेक बार-बार उस मैदान से उठकर आकाश से टकराती और लौटकर चारों तरफ गूंज उठती थी। इस पाटा[3] के साथ ही एक अटपटी-सी आवाज़ भी आ रही थी। अंभोली जिस हल को चला रहा था, उसमें धोखे से महुआ थी। फिर क्या था,

---

१. जंगल

२. विरपोंड़ी के जंगल में रोमो की पहाड़ी है।
हम वहां झाड़ की डगालें काटने आएंगे।
तुम्हारे आने के पहले, हम डगालें काट डालेंगे।
हम डगालों को मैदान में फैलाने के लिए आएंगे।
तुम्हारे आने के पहले, हम डगालें मैदान में फैला देंगे।
हम डगालों में आग लगाने आएंगे।
तुम्हारे आने के पहले, हम उनमें आग लगा देंगे।

३. गीत

उसकी बन आई, वह गीत छोड़कर चिल्लाता :

'विरपोंड़ी पन्डो महुआ ऽऽऽ।'

ये स्वर अलग सुनाई देते, इसलिए गाने वालों का ध्यान उस ओर अनायास ही चला जाता। वे देखते तो एक बार तिरछी आंखों से मुसकरा देते और फिर अपने काम में भिड़ जाते :

विरपोंड़ी पन्डो रोमो रोपो।

महुआ को अंभोली की यह हरकत अच्छी न लगती। वह अपनी बाजू में फंदी साइगुती की ओर देखती। वह भी धीरे-से मुसकरा देती और हलके डंडे को और तेज़ी से आगे खींचने लगती। महुआ जब पीछे देखती तो अंभोली अपना डंडा ऊपर उठाता और आकाश की ओर मुंह कर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाता :

'विरपोंड़ी पन्डो, महुआ ऽऽऽ महुआ।'

घंटे भर में हंसी-खुशी से सारा दीपा बो दिया गया। राख में अनाज के छोटे-छोटे दाने डाल दिए गए। ऊपर से हलका-हलका पानी सींच दिया गया। बस, थोड़े दिन बीज यहीं आराम करेंगे। पहला पानी आएगा, बीजों में प्यार के अंकुर अपने आप फूट पड़ेंगे। इन्हीं बीजों से फिर आशा के पुंगार खिलेंगे। काम खत्म हो गया। सब नॉर की ओर चल पड़े। महुआ ने देखा, सुलकसाए का चेहरा उतरा है। वह उदास है और नीचे मुंह किए चला जा रहा है, जैसे कुछ चिन्ता में है। ऐसा कभी नहीं हुआ था। सुलकसाए अकेला जाए, मुश्किल था। उसके साथ हमेशा महुआ रहती थी। दोनों खूब हंसते थे। दोनों के सफेद दांत जब एक साथ खुलते और बन्द होते थे, तो जैसे गढ़ बंगाल की सड़कों पर बिजली कौंध जाती थी। उसकी चकाचौंध में न जाने कितनी आंखें अंधी होकर रास्ता ढूंढने लगती थीं। महुआ का मन भी उसे देखकर भारी हो गया। वह दौड़ गई और सुलकसाए की बराबरी से चलने लगी। थोड़ी दूर दोनों साथ गए पर सुलक ने लौटकर भी न देखा। महुआ को यह अच्छा न लगा। आखिर वह औरत थी, मानिनी थी। औरत, जो पुरुष पर शासन करना चाहती है, उसपर अपना अधिकार समझती है और यूं भी कहा जाए कि जो पुरुष को अपना चाकर समझती है—चाहती है, वह बिगड़े तो पुरुष उसे मनाए, उसकी खुशामद करे, उसके गले में हाथ फेरे, उसकी पीठ सहलाए, उसके नाक-नक्शे के सौंदर्य को निहारे, उसकी सराहना करे। औरत काव्यमयी भाषा सुनने की आदी

होती है। वह जब पुरुष के कंठ से अपनी प्रसंशा में गीत निकलते सुनती है तो फूली नहीं समाती। प्रेम के किस्से उसे बेहद पसन्द होते हैं। कोई प्रेम का महाकाव्य लेकर बैठ जाए तो शायद वही सुनाता-सुनाता थक जाए, औरत को कभी थकावट नहीं आएगी। किस्से की हर लकीर उसे ताज़गी देती है। शायद इसीलिए पुरुष किस्से कम सुनाता है, किस्से बनाता अधिक है।

महुआ में औरत के सारे गुण पूरी तरह मौजूद हैं। न जाने कितनी बार सुलकसाए ने कहानी कहते रात बिताई है! कहानी कहते-कहते वहीं सो गया है, पर उसकी बाजू में पड़ी महुआ स्वप्न ही देखती रही है। नींद उसे नहीं आई। आज अपने पिरेमी को इस नये रंग में देखकर उसका मन ऐंठ गया। वह सोचने लगी—यह सब भुसरी के कारण है। सुलकसाए को उससे प्यार हो गया है।

उसने कहा, 'क्यों रे सुलक, भुसरी याद आ रही है क्या?'

'म...हु...आ!'—सुलकसाए के पैर अड़ गए और उसने आंखें फाड़कर महुआ को देखा। महुआ इससे प्रभावित नहीं हुई। वह हंसने लगी। उसने भी सुलकसाए की लाल-लाल आंखों को निहारा। उसका हाथ पकड़कर बोली, 'ज्यादा घूरेगा तो आंखें फट जाएंगी।'

सुलकसाए ने गुस्से से हाथ छुड़ा लिया।

'देख सुलक, तुझे मनाने मैं नहीं आई, तू भुसरी से पिरेम करने लगा है, यह मैं....!'

'नहीं महुआ, नहीं...' सुलक ने महुआ के दोनों बाजुओं को ज़ोर से पकड़ लिया, 'मुझे गलत मत समझ महुआ, मेरे मन की बिथा तू नहीं जानती। भुसरी से मेरा कोई सम्बन्ध.......!'

'रहने दे,' महुआ बोली, 'तू क्या समझता है, मैं निरी बच्ची हूं! जिस दिन से नेतानार से लौटा है, अपना तन और मन वहीं बेच आया है। मरद की जात है न, चोरी छिपाना मुश्किल है। मैं क्या, गांव भर यह जानता है। तेरी यह हरकत किसीसे छिपी नहीं। हर कोई कहता है—भुसरी ने कोई जादू कर दिया है तुझपर.......।'

'सब गलत कहते हैं, महुआ! मुझपर कोई जादू नहीं कर सकता। तू भरोसा रख।'

महुआ ने अपने बाजुओं को छुड़ाने की कोशिश की पर छुड़ा न सकी,

बोली, 'जो देख रही हूं उसे न मानूं ? आंखें रहते अंधी बन जाऊं ? भरोसा कैसे करूं सुलक, तू ही बता···और देख, जब मैंने कहा था पेन्डुल करले तब······।'

'पेन्डुल, पेन्डुल !' सुलक ने महुआ की बाजुएं छोड़ दीं और दोनों हथेलियों को अपने कान पर रख लिया।

'चिढ़ गया न पेन्डुल का नाम सुनकर ?' महुआ ने फिर एक बाण मारा। इससे सुलकसाए का कलेजा जैसे बिंध गया। उसके चेहरे पर अजीब-सी लकीरें बनीं, जिन्हें पढ़ना मुश्किल था। वहां जैसे बवंडर छाया था। कोई चीज़ साफ नहीं थी। उसके लच्छेदार काले बाल झुककर माथे पर आ गए थे और हवा में धीरे-धीरे लहरा रहे थे। गालों पर जैसे धूल की परत जमी थी, उसका गेहुंआ चेहरा धुआंरा हो गया था। वह बोला, 'सब मेरे दुश्मन हो गए हैं महुआ, तू भी हो गई है। आखिर तुम लोग मुझे समझने की कोशिश क्यों नहीं करते ?'

'तुझे क्या समझें रे, भला पागल को भी कोई समझकर मूर्ख बनेगा !'

पीछे से झालरसिंह ने एक हलका-सा धक्का दिया, 'तू जब समझाना चाहे तो हम समझें न, मुसीबत तो यह है कि तू ही खुद नहीं समझता। पागल हो गया है और कुछ नहीं। चाहता है तेरे पीछे हम सब पागल हो जाएं।'

'पागल ही सही,' सुलक ने कहा, 'तो तुम सब मुझे छोड़ते क्यों नहीं ? मैं पागल हूं, पागल ही सही·······!' वह आगे बढ़ गया। महुआ और झालरसिंह वहीं खड़े एक दूसरे की ओर देखते रहे। झालर ने कहा, 'महुआ, चलो इसे एक बार ले चलकर सिरहा को ज़रूर दिखा दें।' और इसके साथ ही दोनों खिलखिलाकर हंस पड़े। उनकी हंसी जानवरों के खुरों से निकलती धूल में खो गई।

६

बंसवट, महुआ, गुलर और शाल के पेड़ों से घिरी पगडंडी ! ऊपर काला आसमान और नीचे अंधेरे से घिरी धरती। रास्ता खोजना भी कठिन। कहीं पगडंडी कांस के फूल-सी चमक उठती है तो कहीं खुद अपना ही रास्ता खोजने लगती है। सांय-सांय और सब तरफ सन्नाटा !

टरंक टरंक ऽ ऽ तेंर तेंर ऽ ऽ।

हेलमा सिकुड़ गया। हबका डोंगा से जाकर लिपटा तो उसने सन की डालों को हवा में तीन-चार बार तैराया। आग भड़क उठी। आसपास का भाग एकाएक चमका। जो और साथी थे सभी ने अपने चारों तरफ देखा। कान खड़े किए। डंडा और टंगिया संभाले। कुछ न दिखा, न सुनाई दिया तो सब एक साथ हंस पड़े।

टरंक टरंक ऽ ऽ तेंर तेंर ऽ ऽ।

हंसी की आवाज़ सुनकर यह आवाज़ फिर आई।

'बाबा' हेलमा कांप रहा था। हबका बूढ़ा है। जंगलों में रहते पचास साल हो गए, खुद जंगली बन गया है। न जाने कितने जंगली जानवरों से लड़ा होगा। न जाने कितने घाव उसके शरीर में हैं। जंगल ही उसकी ज़िन्दगी है। वह दिन को भी जंगलों से गुज़रा है और सारी रात भी अकेला चला है। शेर भी सामने आ जाए तो ताल ठोंककर अड़ जाए। कहते हैं, शेर की आंख में जादू होता है। एक बार जिस आदमी की आंख उससे मिल जाए तो आदमी बौरा जाता है। शेर की आंख का जादू उसपर छा जाता है और वह न तो भाग सकता है और न पीछे हट सकता है। खुद शेर के मुंह में चला जाता है। यह बात ठीक हो सकती है, पर हबका के लिए नहीं। न जाने कितनी बार उसने शेर से आंखें मिलाई हैं। उसके दांत उखाड़े हैं।

हबका की पीठ में २ इंच गहरा और ६ इंच लम्बा एक घाव है। यह घाव नहीं उसकी वीरता की निशानी है। तब वह जवान था। रात को लौट रहा था। गर्मी के दिन और चौथ की रात। चांद भी शरमाता और झाड़ियों की छाया में उसकी शर्मीली हंसी भी खो जाती।

गटर गटर ऽ ऽ गट्ट गट्ट ऽ ऽ।

उसने खड़े होकर कानों को सावधान किया। कंधे पर फरसा था और तरकस में तीर बन्द थे। उसने तरकस से एक तीर निकाला और अंधेरे में ही उस ओर दे मारा जहां से यह आवाज़ आ रही थी।

घुर्र्र् ऽ ऽ ऽ···। आवाज़ सुनकर वह पल भर को सहम गया—ओफ, यह

तो अकड़ाल[1] है; शेर का भी बाप। झाड़ पर चढ़ने पर भी न छोड़े। पर वह घबराया नहीं। उसने दूसरा तीर छोड़ा। वह अंधेरे में खो गया। अकड़ाल नरवा के तीर पानी पी रहा था। पहला तीर खाकर अपने शिकार की ओर क्रोध से दौड़ा। हबका ने सुना, पीछे से सूखे पत्तों के सरकने की आवाज आ रही है। उसने दिशा बदली। आवाज़ बन्द। उसने आवाज़ देकर ललकारा—'अ⋯क⋯ड़ा⋯आ ऽ आ ल।' कोई आवाज़ नहीं! थोड़ी देर वह खड़ा रहा और फिर आगे बढ़ गया। रास्ते भर उसे पत्तों के सरकने की आवाज आती रही पर जैसे ही वह रुकता, आवाज़ भी रुक जाती। लगभग दो मील चलने के बाद अकड़ाल ने एकाएक उसपर धावा कर दिया। तब तक शायद हबका खतरे से निश्चिन्त हो चुका था। अकड़ाल इतनी दूर तक उसका पीछा करेगा, यह वह नहीं जानता था। अकड़ाल ने उसे नीचे दबा लिया था और वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा था—'दौड़ो ऽ ऽ ऽ दौड़ो ऽ ऽ ऽ!'

उसकी आवाज़ झाईं बनकर पत्थरों से टकरा जाती और उसीके पास लौट आती। तब हबका अपने जीने की आशा छोड़ चुका था। मरना है तो वीरों की तरह क्यों न मरा जाए! उसने अपनी सारी ताकत समेटी और अकड़ाल को, जो उसकी पीठ पर लदा पंजे से घाव कर रहा था, नीचे से एक धक्का दिया। वह नीचे जा गिरा। हबका हवा से भी तेज़ गति के साथ उठा और अब दोनों आमने-सामने थे। हबका ने उसके दोनों पंजे पकड़ लिए थे। दोनों अपनी-अपनी ताकत आज़मा रहे थे। महुआ की झाड़ पास ही थी। हबका उसे खींचकर धीरे-धीरे वहीं ले गया। यही जगह थी जहां अकड़ाल ने उसपर पीछे से धावा किया था और यहीं उसके तीर-कमान तथा भाला पड़े थे।

दोनों में घंटों लड़ाई चली और अन्त में पैरों की अंगुलियों से भाले को उठाकर हबका ने अकड़ाल की पीठ पर ऐसा घुसेड़ा कि वह ज़ोर-ज़ोर से दहाड़ मारता ढेर हो गया। हबका भी अपनी ताकत खो चुका था। पीठ पर भारी घाव हो गया था और खून की धार बह रही थी। उस जगह अकड़ाल भी चीख रहा था और उसका शिकारी भी दर्द से चिल्ला रहा था। यह क्रम तब टूटा जब वहां से दो-तीन बैलगाड़ियां निकलीं। गाड़ीवानों ने देखा तो दंग रह गए।

---

१. जंगली सूअर

हबका के भाले से ही उन्होंने अकड़ाल का पूरी तरह काम तमाम किया और हबका को नेतानार पहुंचाया। महीनों की दवा-दारू के बाद हबका अच्छा हो गया और गांव भर में वीरता के लिए गौरव के साथ गाया जाने लगा। पीठ का निशान उसके इसी गौरव की कहानी है।

हेलमा को कांपते देखकर उसे इसीलिए गुस्सा आ गया। उसने उसे धकिया-कर दूर कर दिया, 'जवान है रे, कांपता है बूढ़ों जैसा !'

टरंग टरंग ऽऽ टेंर ऽऽ टेंर ऽऽ।

'आवाज़ नहीं सुन रहे दादाल !' हेलमा की आवाज़ कांप रही थी। इनके साथ जो साथी थे वे भी चौकन्ने होकर इस आवाज़ का मरम जानने में लगे थे। एक ने कहा, 'चीता है, पानी पीकर आ रहा होगा। दूसरा बोला, 'नहीं रे, भालू होगा।' तीसरा हंस दिया। बड़े ताव से बोला, 'न चीता है, न भालू, सुनो तो भला—'टरंक टरंक ऽऽऽ' सांभर है रे, सांभर।'

हबका अब तक चुपचाप खड़ा था। वह हलके-हलके हंस रहा था परन्तु उसकी हंसी अंधेरे में कौन देख पाता। हेलमा अब भी कांप रहा था। इतने साथियों के रहते भी उसमें डर कम नहीं हुआ था। इससे यह अन्दाज़ लगाया जा सकता है कि वह अकेला होता तो उसकी क्या हालत होती। सब वहीं खड़े थे और अपनी-अपनी बात कह रहे थे पर सबका यह विचार पक्का था कि वह कोई बड़ा जंगली जानवर है। उनमें से दो-एक ने तो अपने तीर-कमान भी तान लिए थे।

हबका ने कहा, 'चलो रेऽऽऽरे।'

'नहीं दादाल' एक बोला, 'यह भालू है। पीछे से धावा करता है। तुम तो जानते हो।'

'हां ऽऽऽ' ज़ोर से हबका ने कहा, 'जंगल में रहते हो, जंगल की आवाज़ नहीं पहचानते ? अरे मूर्खो, तुम्हें तो जानवरों की क्या पेड़-पौधों तक की आवाज़ पहचानना चाहिए। सुनो—'टरंक-टरंक'। तभी एक जंगली मुर्गी उनके सामने से निकल गई। हबका दिल खोलकर हंसा। उसकी हंसी सारे जंगल में गूंज उठी। उसने हेलमा की पीठ पर एक ज़ोर का हाथ मारा। वह नीचे गिर जाता यदि हबका उसकी गरदन पकड़कर उसे संभाल न लेता। सारा दल हंसता-हंसता आगे बढ़ गया।

रात का अंधेरा बढ़ता जा रहा था। हबका हाथ में सन के सूखे डंठल और

झाड़ की सूखी डगालें लिए हवा में बार-बार हलराता रहता था। हवा की लहरों में आग भड़क उठती और इसीके सहारे उन्हें रास्ता मिलता। रास्ते की थकान और अकेलापन उतारने के लिए वे कभी पाटा भी गाने लगते :

हो ऽ ऽ ऽ रे ऽ, हेलो हेलो हेला,
रे रे रेलो रे, रेला ऽ ऽ।

आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे। वे धीरे-धीरे नीचे उतरनें लगे और दूर चमकता मंगल ऊपर आकाश में आ गया। अपनी थकान उतारने के लिए सब बैठ रहे। पास में गहरा लम्बा खड्डा था। शायद नरबा था वह, दूसरों को पानी पिलाने वाला आज खुद प्यासा था। उसके आसपास गहरी और घनी झाड़ियां थीं जो औंधी मुंह नीचे लटकी थीं। इनसे सहज आभास मिल जाता था कि कभी यहां से पानी ज़रूर बहता रहा है। पत्थर की चट्टानों पर बैठा यह दल बातें कर रहा था। हेलमा शायद स्वभाव से डरपोक था, बोला, 'दादाल, कोई कहानी कहो।' दूसरे साथियों ने उसकी बात का समर्थन किया।

हबका सबका दादाल था। उनकी बात कैसे टालता! कहने लगा, 'पुरानी कहानी है। तब तुममें से कोई पैदा नहीं हुआ था। तुम क्या, तब मैं भी वह नहीं था जो आज हूं। मतलब यह कि मैं नहीं जन्मा था। उस समय किसी और जनम में रहा होऊं। आदमी मर जाता है। उसकी आतमा नहीं मरती। एक चोला बदल लेती है, दूसरे में चली जाती है। आतमा अमर है। इसीलिए कहता हूं कि मैं तो जिन्दा था, पर जो आज हूं वह नहीं था। क्या था, नहीं जानता, और यह भी अच्छा है कि नहीं जानता। जान लूं तो क्या जाने दुःख हो या सुख हो....।'

'दादाल', हेलमा बोला, 'जीव, आतमा और आदमी, यह सब क्या है? हमें यह सब नहीं सुनना। तुम तो कहानी कहने वाले थे न?'

'हां, कहानी ही तो कह रहा था। तो सुनो, बड़ी पुरानी बात है। मेरे दादा ने मुझे बताई थी। शायद उनके दादा ने उन्हें बताया हो! वह भी कहते थे कि मैंने सुना है। यानी किसने देखा, कोई नहीं जानता।

'एक बार कुछ आदमी आए। उनके साथ एक बड़ी पल्टन थी, बहुत बड़ी। वे बोले, 'हम तुमसे लड़ने आए हैं। तुम अपनी सेना जमा करो।' गोड़ों ने एक दूसरे की ओर देखा फिर सबने एक साथ आवाज लगाई, 'हो ऽ ऽ हो ऽ ऽ।'

एक बार, दो बार, तीन बार। जंगलों से शेर, चीता, सांभर, हाथी, रीछ सब निकल-निकलकर आने लगे। एक बड़ी सेना वहां इकट्ठी हो गई।

'बस, फिर क्या था। दोनों दलों में लड़ाई शुरू हो गई। आदमियों ने अपनी मशीनों से एक-एक कर सबको खतम करना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे सब मर गए। अकेला एक गोंड़ बचा। वह डर गया था, पर तुम जानते हो दुनिया में सबसे समझदार गोंड़ होता है। बोला, 'मैं अकेला रह गया हूं। मुझे मारकर क्या करोगे ? मैं तुम्हारा क्या बिगाड़ सकता हूं ? मुझे जाने दो।'

'आदमियों ने आपस में कुछ बातचीत की, सब एक साथ हंसे। फिर उनमें से एक बोला, 'जाओ, फिर हमारे सामने मत आना।' वह चला गया। उसने अपने मन में कहा—हम कब तुम्हारे सामने आए हैं बाबू, ललकारा तो तुमने है हमें। वह अकेला था। मुंह न खोल सका। वह घर चला गया और उदास रहने लगा। पहली बार उसकी हार हुई थी। वह सोचने लगा—इन आदमियों का क्या ठिकाना, फिर कभी आ जाएं ! वह एक कुम्हार के यहां गया। वहां से छोटी-छोटी डबुलियां ले आया। उसने उन डबुलियों में छोटे-छोटे कीड़े भरे। कीड़े भरकर उनका मुंह बन्द कर दिया। एक बैलगाड़ी में उन डबुलियों को रखकर वह अकेला शहर की ओर चल पड़ा। जहां से वे आदमी आए थे, वहां वह पहुंच गया। उसने देखा, बड़ी-बड़ी सड़कें हैं। भूत-प्रेत दिन-दहाड़े सड़कों पर घूमते हैं। अजीब आवाज होती है। अजीब ढंग से वहां के लोग रहते हैं। सड़क के एक चौराहे पर खड़े होकर उसने ललकारा, 'अरे आदमियो, अब आओ; मैं अकेला तुमसे लड़ने आया हूं।' सुना तो आदमी इकट्ठे होने लगे। एक भीड़ वहां जमा हो गई। पर किसीके हाथ हथियार नहीं थे। सब निहत्थे थे। सब खूब हंस रहे थे। उनमें से एक ने कहा, 'अकेला है बेचारा !'

' 'हां, पागल जान पड़ता है।'

' 'चलो जाने दो बेचारे को।'

'उसने फिर ललकारा, 'नहीं, मैं तुमसे लड़ने आया हूं। तुमने हम जंगलवासियों को बेमतलब ललकारा था ?'

'सारे लोग जोर से हंस पड़े, 'तो आ, हम बिना हथियार के लड़ने तैयार हैं।'

'वह बोला, 'तो करो धावा। पहले मैं तुम पर हाथ नहीं उठाऊंगा।'

'एक ने नीचे से एक पत्थर उठाया और उसकी ओर फेंका। वह पत्थर

उसकी छाती से जा टकराया। उसने पत्थर की मार झेल ली और हाथ से उठा-उठाकर डबुलियों को चारों ओर फेंकना शुरू किया। उनसे निकल-निकलकर कीड़े उन्हें काटने लगे। आदमियों में खलबली मच गई। वे घबड़ाकर भाग गए। वह अकेला गोंड़ उन सब लोगों को हराकर चला आया। सुना है कि उस शहर में सात दिन तक कीड़े बराबर उड़ते रहे। हजारों आदमियों की उन्होंने जान ली।'

'फिर, फिर क्या हुआ दादाल !' एक ने उत्सुकता से पूछा।

'ये आदमी बड़े चालाक हैं बेटा। एक दिन कुछ लोग मिलकर हमारे पास आए। उन्होंने हमारी तरफ दोस्ती का हाथ बढ़ाया। जमीन से मिट्टी उठाकर उन्होंने मुंह में रखी और मित्र बनने की कसम खाई। हमें भरोसा हो गया। कोई हमारे घर आए और मित्र होने की बात कहे, धरती माता की कसम खाए, फिर हम क्यों न उसपर भरोसा करें।······ये आदमी उस दिन से हमारे मित्र बन गए। पर····परन्तु मित्र बनकर इन्होंने हमारा गला काट लिया। इनने हमारे जंगल हमसे छीन लिए। कहने लगे, 'जंगल में इन-इन झाड़ों का तो तुम उपयोग करो, इन-इनका नहीं कर सकते। इन्हें नहीं काट सकते। ये तुम्हारे नहीं हैं।' उन लोगों ने हमारे जंगल हमसे छीन लिए और अब······।'

कहानी कहते-कहते हबका डोंगा रुक गया। सामने से 'टुंकुर टुंग, टुंकुर टुंग' की हलकी-हलकी आवाज़ आ रही थी और मद्धिम-सा प्रकाश दिख रहा था। सब खड़े हो गए और उस ओर देखने लगे। आवाज़ पास आ रही थी और साथ ही प्रकाश भी। सामने राउघाट की पहाड़ी थी। ऊंचाई पर होने से कुछ और आवाज़ें भी सुनाई दे रही थीं—'चरर् चूं चरर् चूं'। हबका बोला, 'बैलगाड़ियां आ रही हैं।'

सबने कान लगाए—'हां रे ऽ ऽ ऽ।'

हेलमा ने तो ताली पीट दी, 'हां दादा, बैलगाड़ी हैं।'

बात की बात में उतार से पहियों के लुढ़कने और लगातार एक साथ घंटियों के बजने की आवाज़ आने लगी। उतार के नीचे समतल गाड़ादान था। गाड़ियों की एक लम्बी कतार उसी पर चल रही थी। इन गाड़ियों के बैल भी रास्ता पहचानते हैं। घंटी की आवाज सुनकर वे बराबर एक दूसरे का पीछा करते रहते हैं। गाड़ियां एक डोरी से धीरे-धीरे खिसकती रहती हैं और गाड़ीवान

नींद में खुर्राटे भरते रहते हैं। उन्हें कोई चिन्ता नहीं रहती। फदी गाड़ी के बैलों से जंगली जानवर भी डरते हैं। रास्ता काटकर भाग जाते हैं। कहीं रास्ते पर अड़कर धोखे से खड़े हो जाएं तो बैलगाड़ी को इस तरह हिलाते हैं कि सोने वाला जाग पड़ता है। पहली गाड़ी का यह गाड़ीवान एक हकार भरता है। सारे लोग जाग जाते हैं और जब तक वे इकट्ठे हों, जानवर सर्री छोड़कर भाग जाता है। वहां अड़ा रहता है वह जिसकी मौत आई हो। रात भर ये गाड़ियां चलती हैं। जानवर इन्हें चलाते हैं। आदमी को पता तब लगता है जब जंगलों में 'तिरतिरबेरा' का हल्ला पक्षी मचाने लगते हैं या किसी गांव के गेंवड़े में पहट ढीलने की आवाज़ या रहट चलने का शोर सुनाई पड़ता है।

बैलगाड़ी, उसमें फंदे समझदार बैल, और निश्चिन्त सोते आदमी! एक कतार उनके सामने से गुज़रने लगी।

हेलमा बोला, 'दादाल, इन्हें रोको न।' हबका चुप रहा।

उसके कुछ साथियों ने हेलमा का साथ दिया, 'हां दादाल, पिंडरियों में मन-मन भर पत्थर भर गए हैं। कितना चला जाए!'

हबका ने अपने साथियों की ओर देखा। लालटेन की हलकी रोशनी में उन सबका चेहरा धुएं जैसा दिख रहा था। काफी चले हैं ये। हबका भी थका था। वह तो सबमें बूढ़ा था परन्तु चलने की उसकी आदत थी। वह कोसों लगातार चला है। उसके साथियों में तीन अधेड़ उमर के थे और दो-तीन जवान। पर हबका कहता है, 'तब के जवान महुआ के फूल थे, अब के जवान सेमल की घेंटी हैं।' स्वयं हबका कोसों मीलों की घाटियां चढ़ा है और जितना चढ़ता गया है उतना ही वह खुश नज़र आता रहा है। घाटियों के गर्व को चकनाचूर करने में उसे खुशी होती थी, पर आज......।

हबका ने आगे बढ़कर एक बैलगाड़ी में फंदे बैल के सींगों को पकड़ लिया और मुंह से पुचकारा। गाड़ी खड़ी हो गई। उसके खड़े होते ही पीछे की सारी गाड़ियां भी खड़ी हो गईं। आगे गाड़ियां बराबर चली जा रही थीं। गाड़ियों के खड़े होते ही एक के बाद एक गाड़ीवान उठ बैठे, 'क्या हुआ ऽऽ? कौन है?'

जिस गाड़ी के पास हबका खड़ा था, उस गाड़ी का गाड़ीवान एक लड़का था, बस कोई १० बरस का। उठकर उसने अपनी अंगुलियों को आंखों में घुसेड़ा। पलकें दो-चार बार मूंदीं और बन्द कीं। फिर एकाएक चिल्ला पड़ा,

'डाकू, डाकू ऽऽ, चोर, चोर !' सारे गाड़ीवान डण्डा ले-लेकर नीचे उतर आए। हबका और उसके साथी घबरा गए। वे एक दूसरे की ओर देखने लगे।

हबका चिल्लाया, 'डाकू नहीं, तुम्हारे दोस्त, दोस्त !' हबका ने बड़ी फुर्ती दिखाई। गाड़ी के नीचे बंधी कन्दील हाथ से खींचकर निकाल ली और ऊपर उठाते हुए बोला, 'डाकू नहीं भाई, और न चोर हैं। हम तुम्हारे साथी हैं। गोंड़ हैं नेतानार के।'

'गोंड़, नेतानार के ?' एक ने पूछा।

'हां भाई !' हबका बोला।

'तो गाड़ी तुम लोगों ने क्यों रोकी ?'

हेलमा ने कहा, 'पैदल चलते-चलते थक गए हैं भाई, सहारा चाहते हैं। नरकोम[1] ही हमें उतार देना।'

'ठीक है।' एक दूसरे गाड़ीवान ने तपाक से कहा, 'कितने पैसे दोगे ?'

'पैसे !'—सब आपस में एक दूसरे को देखने लगे।

हबका बोला, 'भाई, पैसे हाते तो काहे को पैदल चलते अब तक !'

'हरामखोर, गाड़ी में बैठेंगे।' एक तीसरा गाड़ीवान ऐंठता हुआ बोला।

हबका ने फिर अपनी समझदारी दिखाई, 'देखो भाई, घाटे में रहोगे। तुम ठहरे परदेसी, नहीं जानते कि इस जंगल में एक नरभक्षी सोरी आया है। अभी-अभी यहां से निकला है और इसी तरफ गया है, जिधर तुम जा रहे हो। हम लोग तो उसीके डर से यहां ठहर गए, वरना...।'

'सोरी !' गाड़ीवान आपस में बातचीत करने लगे।

'अरे हां रे, राउघाट के उस पार किसी सोरी के दहाड़ने की आवाज आ रही थी'—एक गाड़ीवान बोला।

'मैंने भी सुनी थी रे !' एक दूसरा गाड़ीवान बोला।

सुनकर सारे गाड़ीवानों में सनसनी मच गई।

पहला बोला, 'अच्छा चलो भाई, ढोना बैलों को है, हमारा क्या है !... और तुमसे पैसे ? अरे वह तो मजाक था।'

हबका और उसके साथी एक-एक गाड़ी में बैठ गए। बैलों की पूंछ पकड़-

---

१. सबेरे

कर गाड़ीवानों ने हांका और वे फिर मशीन की तरह चल पड़े—चूं चरर् चरर् चूं, टुंकुर टुंक, टुंकुर टुंक।

जिस गाड़ी में हबका बैठा था, उसमें गाड़ीवान के सिवाय एक अबेड़ उमर का एक दूसरा आदमी और था। वह उस गाड़ी में सोता आ रहा था। गाड़ी खाली थी। सारी गाड़ियां ही खाली थीं। उनमें नीचे पैरा बिछा था। उसी-पर गाड़ीवान सो रहे थे। हबका को देखकर वह उठकर बैठ गया। गाड़ी के अन्दर अंधेरा था इसलिए किसीको पहचाना नहीं जा सकता था। हबका ने गाड़ीवान से पूछा, 'ये कौन हैं ?'

गाड़ीवान ने जवाब न देकर पूछा, 'और तू कौन ?'

'मैं हबकामासा, नेतानार का मांझी !'

'कहां जा रहा है ?'

'गढ़ बंगाल।'

'क्यों ?'

'सो न पूछ भाई। एक लम्बी कहानी है, पर यह तो बता तू कौन ?'—हबका बोला।

गाड़ीवान चुप रहा। उसने कान में खुसी चुंगी निकाली। अंधेरे में ही उसने चुंगी में धुइंगा[1] भरी। बोला, 'हबका, चुंगी पियोगे ?'

'इन्गे।'[2]

गाड़ीवान ने चुंगी हबका के हाथ पकड़ाई, चकमक निकाली। खच्च खब्बर खच्च ऽ ऽ आवाज़ हुई और रूई में आग लग गई। चुंगी के मुंह पर रूई रखते हुए वह बोला, 'हां, खींचो भाई।'

दोनों हाथों की अंगुलियों के बीच चुंगी दबाकर, ओंठ और गालों के सहारे हवा भीतर-बाहर कर उसने एक लम्बा कश खींचा। चुंगी की धुइंगा ने आग पकड़ ली। धुआं छोड़ते हुए उसने चिलम ज्योंही उस आदमी की ओर बढ़ाई कि दंग रह गया, 'कौन ? तू करतमी !'

करतमी ने चिलम अपने ओंठ पर धर ली थी। आंखें ऊपर उठाकर उसने

---

१. तम्बाकू २. हां

अजीब ढंग से हबका की ओर देखा। एक ज़ोर का कश खींचते हुए उसने धुआं बाहर निकाला। फिर विचित्र ढंग से बोला, 'हां रे हबका···चल अच्छा हुआ, तुझसे फिर मुलाकात हो गई।'

'आजकल कहां रहता है रे?'

'धरती पर!'

'अरे छोकरे'—हबकामासा बोला, 'बात बनाना भी सीख गया है! कल का लोंडा····।'

गाड़ीवान ने कहा, 'हां दादाल, आज के छोकरे ऐसे ही होते हैं।'

'क्या! छोकरा····!' करतमी ने आवाज़ तेज़ करते कहा तो गाड़ीवान सहसा दमक गया, 'नहीं भाई, तुझे थोड़े कहा है।'

हबकामासा बोला, 'अरे भाई गाड़ीवान, तुम नहीं जानते, यह तो हमारे गांव का छोकरा है करतमी, गायता के यहां भगेला[1] रहा है। तब से जानता हूं जब नंगा फिरता था।'

'यही तो मुसीबत है गाड़ीवान,'—'करतमी बोला, 'वरना अब तक उस गांव भर के आदमियों को मुट्ठी में दबाकर पीस देता।'

हबका ने सुना तो उसे गुस्सा आ गया। उसने चुंगी बाहर फेंक दी, बोला, 'मुफ्त में ऐंठता है, बेटा! हबका बूढ़ा हो गया है, पर उसकी बांहों की ताकत अभी नहीं गई।'

गाड़ीवान ने हंस दिया, बोला, 'क्या दादा, तुम भी भिड़ते हो लड़के से!'

हबका ने भी हंस दिया। करतमी की पीठ पर हाथ रखते हुए बोला, 'बेटा है न हमारा, पिरेम और ताड़ना दोनों देने पड़ते हैं।'

उसने उसकी ठुड्डी ऊपर उठाई, बोला, 'गांव पर खार खाए बैठा है, क्यों?' करतमी ने हबका का हाथ अलग कर दिया, बोला, 'देख चौधरी!'

गाड़ीवान ने लौटकर देखा।

'इस बुड्ढे को तू देखता है न! बड़ा पहलवान है। न जाने कितने अकड़ाल और सोरी जिन्दा चबा गया है!'

'क्या बात करता है रे?'

---

१. कर्ज़ पटाने के लिए जो आदमी अपने साहूकार के यहां नौकरी करे उसे 'भगेला' कहते हैं। गोंड़ों में भगेला रखने की प्रथा है।

'हां ऽ ऽ ऽ चौधरी,' करतमी ने हबका की उपेक्षा करते हुए कहा, 'नेतानार में मैं भी रहा हूं और यह बूढ़ा ठीक कहता है कि मुझे तबसे जानता है जब मैं नंगा रहता था। पर शायद यह, वो दिन नहीं जानता जब मैं भगेला था!'

'क्यों न जानूं वो दिन ! नार से भाग गया और किस्सा कहता है। आज भी नेतानार पहुंच तो भगेला बने।' हबका ने कहा।

'अब तो नेतानार जरूर पहुंचूंगा दादा और देखूंगा कौन क्या करता है!' उसने गाड़ीवान से कहा, 'चौधरी, और चुंगी निकाल।'

हबका के कान में एक चुंगी खुसी थी। उसने निकालकर करतमी की ओर बढ़ा दी। करतमी ने उसे चौधरी को दे दी। चौधरी ने फिर धुइंगा भरी और चकमक से आग लगाई। करतमी ने कश खींचा, धुआं बाहर फेंका। बोला, 'मैं भगेला था चौधरी, नेतानार के गायता के घर। और मेरे पहले मेरा तापे भी वहीं भगेला था। उसके पहले शायद उसका तापे भी भगेला रहा है! कहते हैं, परआजा ने दो कोरी[1] रुपये उधार लिए रहे हैं। उनके ब्याज के बदले मेरे आजा को भगेला बनना पड़ा। दिन भर छाती मारकर काम करता था उसका। बाहर की मजूरी भी करने नहीं जाने देता था और खाने क्या मिलता था, जानता है तू…?' चुंगी की दूसरी कश खींचते करतमी बोला, 'न जान चौधरी तो ही अच्छा है। बेचारा पचास साल में मर गया। तब मेरा तापे भगेला बना, कर्जा जो चढ़ा था! वह भी इसी तरह चल बसा और तब मेरी बारी आई। बचपन से रहा उस लोंन में तो ऐसा मेल हो गया कि मैंने कभी यह नहीं समझा कि मैं भगेला हूं। पर मेरे साथ गायता का बिबहार बहुत कड़ुवा बना रहा। यह तो मैंने उस दिन जाना जिस दिन भुसरी ने बताया।'

'भुसरी ! यह कौन ?' गाड़ीवान ने उत्सुकता से पूछा।

'अरे वही छोकरी, गायता की,' करतमी ने कहा—'देखने में गौ है पर भीतर है अकड़ाल से भी तेज। बचपन से उसके साथ रहा हूं। जंगल-पहाड़ साथ जाते थे। बड़ी प्यारी-प्यारी बातें करती थी वहां, इसलिए रात को जब उसका बाप मुझपर आग बरसाता तो सब चुपचाप सुन लेता। सबेरे का रास्ता हेरते-हेरते सारी रात जागते बिता देता। जंगलों में हम लोग प्यार भरी बातें करते तो वह

१. एक कोरी में बीस रुपये होते हैं।

कहती, 'तुझसे बिहाव करने का जी होता है करतमी ।'

'मैं कह देता, 'तो क्या मेरा भी जी नहीं होता होगा ! पर मुसीबत यह है कि मैं भगेला हूं । तेरा तापे तो साहूकार है न !'

' 'कहां का साहूकार ! कोई कभी था, अब तो वह नहीं है ।'

' 'यह कहने की बात है भुसरी । मानेगा कौन !'

' तब वह चुटकी बजा देती और कहती, 'चिन्ता न कर, तापे से कहूंगी तुझे मेरा भगेला बना दे ।'

'मैं खुश हो जाता । भुसरी का भगेला बनना मुझे मंजूर था । पिरेम बड़ा विचित्र होता है दादाल, पिरेम में आदमी जो न कर जाए सो थोड़ा ।'

'चुप रह बेशरम कहीं का !' हबका ने उसे डांट दिया ।

करतमी बोला, 'बुढ़ापा है न, प्यार की बातें चुभती होंगी, कांटों-सी !'

'क्या कहता है रे ? आज के जवानों से ज्यादा अच्छा हूं । मैंने जो पिरेम किए हैं, तुम छोकरे क्या करोगे ! तू तो जानता है न, पूरी दस औरतें रखी थीं मैंने और फिर कोई मिल जाए····, क्यों चौधरी !'

चौधरी चुंगी पी रहा था । हंसते हुए बोला, 'हां हबका !'

'हां क्या ?'—करतमी ने ज़ोर से आवाज़ की, 'तू दस औरतें रखकर ग्यारहवीं औरत रखने के सपने देख सकता है, और मैं···भुसरी से भी पेन्डुल नहीं कर सकता था ?'

'हां रे, भगेला जो था ।' हबका ने कहा तो करतमी ने उसकी पीठ पर अपना हाथ दे मारा । फिर क्या था, हबका बौखला गया । उसने झपटकर करतमी के दोनों हाथ पकड़ लिए और नीचे गरदन दबा दी ।—'क्या समझता है, बुढ़ा गया हूं···!'

चौधरी कांप उठा । उसने हबका का हाथ खींचा, 'हबका ! हबका यह क्या कर रहा है !'

'जवान को जवानी दे रहा हूं ।'

चौधरी भिड़ गया और अन्त में दोनों को उसने अलग किया । हबका गुस्से में था, बोला, 'नार का है, वरना आज जीता न छोड़ता ।'

करतमी हार गया था । उसने अपनी झेंप मिटाने के लिए कहा, 'दादा को जल्दी गुस्सा आ जाता है । मैं बचपन से जानता हूं । मैंने पीठ पर क्या हाथ

रखा तू उचट गया।' उसने हबका के गालों पर हाथ फेरा और धीरे से एक चूमा ले लिया। बूढ़ा हबका बात की बात में बदल गया। किसी गरम लोहे को जैसे किसीने एकदम ठंडे पानी में डाल दिया। उसने करतमी को दोनों बाजुओं में समेटकर छाती से लगा लिया, 'माफ कर बेटा, बूढ़ा हो गया हूं तो गुस्सा जल्दी आ जाता है। मैं जानता हूं, गायता ने तेरे साथ अच्छा नहीं किया। भुसरी को उसने तुझसे छीना और उसके लिए एक लमसेना[1] रख दिया। मैंने भी तेरे विपक्ष में फैसला किया पर मैं क्या करता बेटा, पंचतोर जो था। गांव के कानून हैं। बड़े-बूढ़े उन्हें बना गए हैं। पंचतोर तो देवता की आसिनी पर बैठता है, और तू यह सब जानता है। मुझे तो न्याय करना था और न्याय यही है कि 'भगेला' अपने साहूकार की बेटी को नहीं ब्याह सकता। भगेला को भला समाज में कौन पूछता है!'

'हां दादा!' करतमी ने कहा।

'पर बेटा, अच्छा हुआ भुसरी तेरे पल्ले नहीं पड़ी।'

'सो क्यों? वह ठीक तो है न?' करतमी ने उतावले होकर पूछा।

'ठीक तो है पर···पर उस लमसेना से भी उसकी नहीं पटी। उसके साथ भुसरी का जबरन पेन्डुल किया तो पेन्डुल के दिन खून होते-होते बचा। उसीके लिए तो हम जा रहे हैं।'

'कहां?'

'गढ़ बंगाल।'

'वहां क्या है?'

'सुलकसाए···।'

'कौन सुलकसाए! घोटुल का सिरदार?'

'हां रे, वही।'

'बड़े देव रच्छा करें उसकी। बड़ा दिलेर आदमी है दादा; दूर-दूर तक उसके किस्से पहुंचे हैं। सरकारी अफसर तक उसकी तारीफ करते हैं।'

---

१. 'लमसेना' रखना भी एक प्रथा है। सम्पन्न लड़की का पिता किसी लड़के को अपने घर लाकर रख लेता है और जब उसकी सेवा से खुश हो जाता है तो उसके साथ अपनी लड़की का ब्याह कर देता है। जब तक ब्याह नहीं होता, तब तक वह लड़का 'लमसेना' कहलाता है।

'अफसर.......वह कैसे ?' हबका ने पूछा तो चौधरी बोला, 'तुम नहीं जानते, करतमी आजकल चपरासी हो गया है।'

'क्या, चपरासी ! क्या है यह ?'

'अरे, अब उसका क्या कहना ! अंतागढ़ में रहता है। रियासत के अफसर के साथ घूमता है। गोरे आते हैं तो उनके पास तक जा पहुंचता है और क्या रौब गांठता है दादा, सारी 'पबलोक' उसे देखकर घबड़ाती है। कोई जरा-सी गड़बड़ करे कि वह उन्हें कोड़े लगाता है।'

हबका करतमी से चिपक गया, 'क्यों बेटा ?'

'हां दादा, और करता क्या ? भगेला था, जिन्दगी भर वही बना रहता इसीलिए एक रात भाग गया। भुसरी से कहा, साथ भाग चलें, पर वह चुडैल....!'

'गोली मार भुसरी को, मरदों के बीच औरत की बात क्या करना ! चल, अच्छा हुआ।' उसने करतमी को खूब चूमा, 'मुझे माफ कर दे बेटा, मैं नहीं जानता था तू इतना गुनी हो गया है।'

'नहीं दादा, सब तुम्हारा आसीर्बाद है। गढ़ बंगाल काहे को जा रहे हो ?'

'वही भुसरी का किस्सा है, पेन्डुल के दिन सुलकसाए...खैर जाने दे वह बात, तू कहां जा रहा है ?'

'मैं भी गढ़ बंगाल जा रहा हूं दादा, माल-महकमा का अफीसर कल वहां आने वाला है। सुलकसाए के पास ठहरूंगा, मेरा बड़ा अच्छा साइगुती है। क्या दिलेर है वह !'

'हां रे, तो चल अच्छा हुआ, सर्री भर का साथ हो गया।'

'नहीं दादा, अभी तो नारायनपुर में ठहर जाऊंगा।'

दोनों रास्ते भर फिर बातें करते गए। आसमान के तारे एक-एक कर नीचे में समुद्र में डूबने लगे और जब पोडव की सुनहरी किरणों ने धरती को चूमा तो गाड़ियां गेहूं के खेतों के बीच से निकल रही थीं। हरे-हरे खेतों पर जैसे किसीने सोना बरसा दिया था। गेहूं की बालियां हवा में झूम रही थीं। चने और मसूर के नन्हें-नन्हें झाड़ों पर हलकी-हलकी ओस थी और उनपर पड़ती किरणें सतरंगी चूनर-सी चमक उठती थीं। नीलकंठ के झुण्ड के झुण्ड पलाश की झाड़ों में आकर बैठते और फिर फर्रर से उड़ जाते।

यह नारायनपुर का गेंवड़ा था। मरद और औरतों के झुंड के झुंड दिखाई दे

रहे थे। कोई खेत में तो कोई खेत की मेड़ पर। गाड़ियां उसी तरह खिसकती जा रही थीं। अब सारे गाड़ीवान जागकर मेंड़ी पर बैठ गए थे और अपने-अपने बैलों को हांक रहे थे। आगे जाने पर एक बगीचा मिला, जहां रहट चल रही थी—टट्र खेएं एं एं एं, टर्र्रखें, चूं ऊं ऊं ऊं चर्र्र्र।

आगे वाले गाड़ीवान ने यहीं गाड़ी रोक दी। सारी गाड़ियां रुक गईं और गाड़ियों पर बैठे सब लोग उतरकर नीचे आ गए। अंधेरी रात के साथी दिन के उजाले में एक दूसरे से मिले। प्रायः सबने एक दूसरे को परिचित पाया। जो अपरिचित थे, उन्होंने जान-पहचान की।

हबका ने सबसे करतमी को मिलाया। हेलमा ने उसे देखा तो देखता रहा। ये दोनों साथी थे। नेतानार के सारे आदमियों ने करतमी की पीठ थपथपाई। कुछ ने उसे ऊपर उठा लिया। उसके भाग सराहे। करतमी ने गाड़ी से चमड़े का एक पट्टा निकाला। यह उसकी चपरास थी। पेंट पहनकर चपरास कसी और एक गर्व भरी नज़र सारे लोगों पर डालकर वह चला गया।

७

नेतानार के मांझी के आने की खबर गढ़ बंगाल पहुंच गई थी। गायता उनके ठहरने और स्वागत का इन्तज़ाम करने में लग गया था और उसकी पैठू[1] सत्ताय सारे गांव में आग बरसा रही थी। नार के हर लोंन और हर गली-कूचे में उसने अगनी बौखलाहट छोड़ी। नरकीपहर में पहले ही वह आज जाग गई थी और उसके कडुवे गले तथा गांव के मुर्गों के कूकड़ूकूं करने की आवाज़ एक साथ सुलकसाए ने सुनी थी। तभी वह कांप गया था। यह सारा दिन कैसे कटेगा? लोंन में आग बरसने लगी थी, 'कीड़े जैसे जनमते हैं सत्यानासी। तुम काहे को जिन्दा हो!'

पट् पट् पट् पट् ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ।

ऊं ऽ ऽ ऽ ऊं ऽ ऽ ऽ ऊं ऽ ऽ ऽ।

---

१. रखैल

मरी ई ई ई रे ···बा···प····रे।

ऐं ऽ ऽ ऽ ऽ ऐं ऽ ऽ ऽ ऽ ऐं।

पट् पट् पट् पट् ऽ ऽ ऽ ऽ।

सत्ताय एक-एक कर अपने लड़के और लड़कियों को पीट रही थी और ज़ोर-ज़ोर से गाली देती थी, 'हरामजादे, वैसे ही निकलेंगे जैसा ठूंठ सुलक निकला। बांस जैसे बढ़ेंगे और उसी तरह झुककर हरामजादे कुल का नाम डुबा देंगे। आखिर बाप तो वही है ऽ ऽ।'

सुलकसाए ने दाएं करवट ली, फिर बाएं, फिर दाएं। औंधा सोया। सीधा सोया। कान में कपड़ा ठूंसा पर सत्ताय तो सब कुछ उसे ही सुनाने के लिए चिल्ला रही थी। न रहा गया तो उठकर झोंपड़ी से बाहर हो गया। बाहर जाते देखा तो सत्ताय की बौखलाहट ने और ज़ोर पकड़ा, 'अरे, बंमटा, कहां भाग रहा है? बेशरम, शरम की भी हद होती है। डूब मर कहीं!'

सुलकसाए ने न कुछ जवाब दिया और न लौटकर देखा। उसके कान में सत्ताय के शब्द जरूर गूंजते रहे, 'डूब मर कहीं।' उसने सोचा—सारा गांव किनारा काट रहा है! और काटे क्यों नहीं! आदमी की इज्जत तो घर से बनती है। जब घर में ही ठिकाना नहीं!···उसने एक दुःखभरी सांस ली और सांस की उतार के साथ ही उसे अपनी मां की याद आ गई। वह प्यारी मां, जो हज़ार गलतियां करने पर भी छाती से चिपकाती थी। एक बार, हां तब वह छोटा था। खेत की गंजी में उसने खेल-खेल में आग लगा दी थी। सारी फसल जलकर राख हो गई थी। पूरा बरस कैसे गुज़रेगा? वही आम, महुआ, चार और मक्का चबाने होंगे या फिर फाकामस्ती। हिरमे क्रोध से जल रहा था। उसने बांस की कमची से सुलकसाए की खूब मरम्मत की थी और सुलक रो-रोकर अपनी मां को पुकार रहा था। मां मुंदरी ने सुना तो सब कुछ छोड़कर दौड़ी आई थी। उसने हिरमे के हाथ से डंडा छीन लिया था। छीना-झपटी में उसके हाथ में फांस गड़ गई थी और खून निकल आया था। पर उसकी फिकर मुंदरी ने नहीं की थी। उसने सुलक को अपनी गोद में समेट लिया था। छाती से चिपकाकर वह खूब रोई थी और उसका रोना देखकर सुलकसाए अपना रोना भूल गया था। इतनी मार खाकर भी उसे दर्द नहीं हुआ था और वह मुंदरी की छाती से लिपटकर खुर्राटे भरने लगा था। मां की

गोद में सुलक ने दुनिया के सारे दुःख जलते देखे थे। वह गोद जिसके सामने अपार सम्पदा भी फीकी है। कुबेर का वैभव जहां धूल है। स्वर्ग और अमृत का जहां कोई मोल नहीं। परियों के पालने से भी ज़्यादा मां की गोद के हिचकोलों में सुख है। लिंगो ने ठीक कहा है, सुलकसाए का मन उलझ गया—मुझे मां की छाती से लगा दे, मेरा मुंह उसके स्तन में दे दे और पीछे से तू मेरा मांस निकालता जा, मुझे दर्द नहीं होगा। मेरा खून कम नहीं होगा।—सुलकसाए के सिर ने ज़ोर से चक्कर खाया। उसे लगा कि उसे गश आने ही वाला है। वह वहीं बैठ रहा।—मां, मेरी प्यारी मां! उसका मन पपीहे की तरह तड़पने लगा। मां से बढ़कर दुनिया में कोई नहीं है। काश, आज वह होती!····तब क्या हिरमे इस तरह चुप रहता!

सुलकसाए वहां से उठा और नाले की ओर बढ़ गया। उसके मन में एक भीषण तूफान उठ गया। विद्रोह का ववंडर खड़ा हो गया। उसे लगा कि इस गांव में उसका अपना अब कोई नहीं है। उसे भाग जाना चाहिए। सत्ताय के कड़ुवे शब्द उसके कान में रह-रहकर गूंज जाते थे। वह सोचता—सत्ताय ठीक कहती है। मुझे मर जाना चाहिए। आदमी वही है जो गर्व से जिए। जिसे कोई आंख उठाकर भी न देख सके। बेइज्जत होकर रहने और दीनता से किसी की ओर हमदर्दी पाने के लिए देखने से मरना भला है।····और यह सोचते ही उसके पैरों में जैसे गति आ गई। उसने आकाश की ओर आंख उठाकर देखा। सूरज ने उसे जलाकर नीला कर दिया था।···ओफ!···एक आह उसके मुंह से निकली और दौड़ने के लिए जैसे ही उसने बायां पैर उठाया कि सामने से आती महुआ ने उसे पुकारा, 'सु····ल···क···!' सुलकसाए के होश उड़ गए। वह अपने आप गड़ गया। उसने आंखें बन्द कर लीं। अपनी दोनों हथेलियों को उसने कान पर रख लिया। महुआ भी अब अलवा-जलवा बकेगी। उसे नीचा दिखाएगी। वह न जाने क्या-क्या कहेगी, कितने कांटे चुभाएगी!—उसका मन ढोल की तरह धड़कने लगा। जिसने उसे प्रेम किया, उसे ही उसने छला। यह पाप नहीं तो क्या है?····और जब आदमी को उसकी प्रेमिका ही धिक्कारने लगती है तो वह ज़िन्दा नहीं रहना चाहता। वह चाहता है कि उसकी प्रेमिका उसे बहुत बड़ा समझे। इसीलिए बिहाव के बाद अक्सर आदमी की सहनशक्ति कम हो जाती है। बचपन में जिसने अपनी मां की मार

को भी मार नहीं माना, वह अपनी प्रेमिका की हलकी-सी कड़वी बात को भी सुनने के लिए तैयार नहीं रहता।

महुआ ने पास आकर सुलकसाए के दोनों हाथ पकड़ लिए और उन्हें कान के नीचे लाते हुए बोली, 'सुलक, तुझे क्या हो गया है ? गलती आदमी से होती है न, फिर उसे इतना तूल···!'

'हंस ले महुआ, तू भी हंस ले। फिर हंसने को कब मिलेगा !' सुलकसाए ने खीझते हुए कहा।

'नहीं सुलक, मेरे साइगुती, मैं नहीं हंस रही। और तू सोचता है कि मैं हंसती हूं तो ले रो देती हूं।'—महुआ ने सुलक के हाथ छोड़ दिए और वह सचमुच रोने लगी। उसकी आंखों से मोतियों जैसे आंसू निकलने लगे। सुलक ने वे आंसू देखे तो पिघल गया। औरत के आंसू जितनी जल्दी निकल आते हैं, उतना ही तेज़ असर भी करते हैं। सुलकसाए ने अपनी पगड़ी के छोर से उस की आंखें पोंछीं और उसका हाथ पकड़कर नाले की ओर चल पड़ा। सुलक के आंसू पोंछते ही महुआ का चेहरा लाल पुंगार की तरह खिल उठा। सूरज की किरणों में वह एकाएक चमक उठा।

'सुलक !'

'हां, महुआ।'

'तू पागल हो गया है ?'

'हां, महुआ।'

'आज नेतानार से मांझी आने वाला है।'

'हां, महुआ।'

'तू क्या कहेगा, तूने सोचा है ?' महुआ ने लौटकर सुलकसाए की ओर देखा।

'नहीं महुआ, न सोचा है न सोचने की जरूरत समझता हूं।'

'क्यों ?'

'तब तक जिन्दा भी रहूंगा !'

महुआ ने तेज़ी से चिऊंटी ली और आंखें फाड़कर सुलकसाए के हर अंग को घूरने लगी। उसने अपनी अंगुलियों से उसकी आंखों की पलकों को देखा। उसे भय था कहीं सुलक ने ज़हर तो नहीं खा लिया।

'क्या देखती है महुआ ? जहर खाकर मैं नहीं मरने वाला; पर तब तक जिन्दा भी नहीं रहूंगा ।'

नरवा की घाटी पर एक गड्ढा था। उसमें पड़े पत्थरों पर दोनों बैठ गए। महुआ ने सुलक की पीठ पर हाथ फेरा, पर आज उसकी प्यारी-प्यारी और नरम हथेलियों का भी असर नहीं हुआ। कभी महुआ के छूते ही सुलक सिमिट जाता था। वह छूती थी तो वह लाजवन्ती की तरह छोटा हो जाता और शुक्र की तरह चमक उठता। उसके स्पर्श में वह अपने को मिटा देता था। जैसे सागर में सीप और सीप में मोती समा जाता है, सुलक भी महुआ के प्यार में पूरी तरह समा जाता था। पर जब आदमी को गहरी चोट लगती है, जब चिड़िया के अंडे से निकले ताज़े बच्चे की तरह उसके लिपलिपे और नरम कलेजे में कोई गहरा कांटा चुभ जाता है तो वह प्यार भूल जाता है। कांच की तरह टूटने वाले मन के दर्पण में एक गहरी अपारदर्शक परत छा जाती है। और तब अंधा प्यार बिलकुल निर्जीव और बेजान हो जाता है। आज सुलकसाए की यही हालत थी। महुआ की उपस्थिति का भी जैसे उसे भान नहीं था। उसके मन और मस्तिष्क में एक भारी पर्दा लटक रहा था। उसका विवेक उससे छूट चुका था और उसके स्थान पर कोरी विश्रृंखल भावना ने घर कर लिया था।

महुआ उसे समझा रही थी, 'मरद होकर मरने की बात सोचता है! मरद का मन तो पत्थर होता है रे, जो टकराए सो चकनाचूर हो जाए पर उसमें जरा-सी भी सिकन नहीं आती। तू कैसा मरद है!'

सुलकसाए कुछ सोचता तो जवाब देता। वह तो अपने चारों ओर देख रहा था। कभी इस ओर अंगुली दिखाता तो कभी उस ओर। कभी अपने आप कहता—पीपल अच्छा रहेगा, बड़ अच्छा रहेगा।

महुआ सचमुच घबरा रही थी। सुलकसाए पागल हो गया है, इसमें शक करने की गुंजाइश उसके पास नहीं थी। उसने सामने घाटी पर झालरसिंह को ऊपर चढ़ते देखा तो आवाज़ लगा दी, 'बीर, ओ बीर!'

झालरसिंह ने अपने पैर उस ओर मोड़ दिए। आकर देखा तो सुलकसाए को देखता ही रहा, 'क्या बात है रे, अब भी भुसरी सता रही है क्या ?'

'हि श् श् ऽ ऽऽ' महुआ बोली—'मजाक मत कर, हालत अच्छी नहीं है।'

'सिरहा को बुलाऊं ?'

सुलकसाए उठकर खड़ा हो गया और आगे बढ़ने के लिए जैसे ही उसने कदम बढ़ाए कि झालरसिंह ने पकड़ लिया, 'कहां जा रहा है ?'

'वहां···वहां मरने।'

'मरने !' झालरसिंह बोला, 'तब तो तू जा सकता है। बताकर मरने वाला मैंने तो आज तक नहीं देखा। अच्छा है, मर गया तो देखने को मिल जाएगा।'

सुलकसाए ने हाथ छुड़ा लिए और बिना कुछ कहे एक बार महुआ की ओर देखा और नीचे नाले की ओर उतरने लगा। महुआ ने देखा—उसकी आंखों में एक अजीब रंग तैर रहा है। वे उसे बड़ी दयनीय मालूम हुईं। बोली, 'झालर, मजाक मत कर, देख···!'

'क्यों डरती है री, चुल्लू भर पानी में कोई डूबा है ! नरवा में धरा क्या है ?'

'नहीं झालर, इज्जतमन्द आदमी के लिए चुल्लू भर पानी बहुत है।'

'तो क्या तेरा सुलक ही इज्जत वाला है !' झालर ने गुस्सा दिखाया।

महुआ ने हाथ जोड़े, 'चिरोरी करती हूं, मजाक न कर।'

झालरसिंह नीचे उतर गया। उसने सुलकसाए की दोनों बांहें जोर से पकड़कर झकझोर दीं, 'सुलक, तू हमारा सिरदार है और खुद गलत रास्ते पर चलता है। मरद होकर मरने की बात सोचता है। अरे, मरद वह है जो पहाड़ से टकराकर भी हंसता रहे। पहाड़ को रास्ता छोड़ना पड़े, पर मरद न हटे। मरने की बात औरत सोचती है। जो अपने को बेबस समझे। तू तो हमें वीरता का पाठ पढ़ाता है रे, मरकर भूत बनेगा और इन्हीं ऊबड़-खाबड़ पहाड़-नालों की खाक छानता फिरेगा, जानता है न !····ज़रा-सी बात और उसे अमरबेल बनाता है।'

'यह जरा-सी बात है ?' सुलक अब कुछ सचेत था। उसकी आंखों का रंग बदल गया था।

'तेरी आदत खराब है सुलक। मरद का विवेक बड़ा होता है और औरत की भावना। आज तू औरत बन गया है। देख तेरी महुआ तुझे सीख दे रही है। शरम खा। बेमतलब की बातें सोचना बन्द कर और चल।'

'चल ऽ ऽ ऽ'—सुलकसाए ने सिर लटका लिया और अपने पैर मोड़ दिए। दोनों घाटी चढ़ चुके थे तो महुआ के चेहरे पर लाली आ गई थी। तीनों गांव की ओर चले जा रहे थे।

सुलक ने कहा, 'पर झालर, मैं गायता को माफी मांगते नहीं देख सकता। ...और सत्ताय....।' वह फिर अड़ गया, 'मैं घर नहीं जाऊंगा झालर, मेरा दिमाग फिर बिगड़ जाएगा।'

'तो चल मेरे घर चल,' झालरसिंह बोला—'और सोच तो भला, इसमें बड़ी बात क्या है ! यह तो समाज का एक नियम है। उसे निबाहने सब करना पड़ता है। तू हबकामासा को नहीं जानता। बड़ा दिलेर आदमी है। बड़ा सीधा और सरल। बातचीत के बाद तो वही तुझे सीने से लगाएगा। वह आदमी की परख जानता है। समाज के नियम हैं, इसलिए वह भी बंधा है। वरना........।'

'नहीं झालरसिंह, नहीं, न जाने क्यों मेरा मन इसके लिए तैयार नहीं है!'

'तेरे तैयार होनें न होने से क्या होता है सुलक ! यह काम तो हमारा गायता करेगा।'

'करेगा, पर मैं उसे अपनी आंखों से न तो देखना चाहता हूं और न कानों से सुनना चाहता हूं। मैं खुद नहीं जानता क्यों ? पर...मैं इस गांव में नहीं रह सकूंगा।'

'तो कहां जाएगा ?' महुआ ने चिन्ता प्रकट की।

'वह भी नहीं जानता।'

'चलो भजन करें भीमुलपेन का।'

महुआ दोनों की ओर देख रही थी। वह भी क्या कहे ! जिसमें समझ हो या जो समझना चाहे उसे समझाया जाए; जो अपनी टेक पर टिका है उसका कोई क्या करे !

झालरसिंह दोनों को छोड़ यह कहकर चला गया। 'घंटे बाद मिलूंगा सुलक, देख भागना नहीं।'

अब तक पेरमा का घर आ चुका था। महुआ रुक गई, बोली, 'जरा-सा काम है यहां। मेरी कसम जो गांव से भागे। बुरा मुझे मानना था तेरी करनी पर, पर यहां तो उलटा हो रहा है। मेरी तरफ से चिन्ता न कर। महुआ तेरी है और तेरी ही रहेगी। जो तेरा विरोध करेगा, वह उसकी आंख नोच लेगी। जा आराम कर, दिमाग को थोड़ी देर खाली रख, अपने आप रास्ता मिल जाएगा।' महुआ ने पेरमा के घर की ओर अपने कदम मोड़ दिए, 'देख सुलक, फिर कहती हूं, मेरी कसम जो गांव से भागे।'

सुलकसाए ने अपनी छोटी और दयनीय आंखों से महुआ की ओर देखा। अनजाने दो बूंदें उनकी कोरों से लुढ़क गईं और एक लम्बी सांस उसके मुंह से निकल पड़ी।

महुआ फरका के भीतर हो गई तो सुलकसाए ने फिर पीठ की ओर अपने कदम मोड़ दिए। आठ-दस डग चलकर उसने पूरब की ओर जाती पगडण्डी का सहारा ले लिया।

८

तभी दो आदमियों ने गांव में प्रवेश किया। एक आलीशान कपड़े पहने और सिर में टोप लगाए था। दूसरा एक से रंग की दरेस में था। कमर में चमड़े की चपरास थी और सिर में खाकी, लाल रंग की तिरछी अनोखी टोपी। दोनों पैदल थे। दोनों गांव में चले आए पर कहीं कोई न मिला। सारा गांव खाली था।

'करतमी !'

'हुज़ूर !'

'यह क्या है ? पूरे का पूरा गांव खाली है ?'

'हां हुज़ूर !'

'हां क्या ?' अफसर ने डांट बताई।

'यहां यही होता है हुज़ूर। सारी रियासत के बहुत-से गांव दिन में ख़ाली पड़े रहते हैं। यहां के मर्द और औरतें जंगल चले जाते हैं।'

'जंगल क्यों ? वहां क्या करते हैं ?'

'पेट के लिए चारा तलाशते हैं, हुज़ूर। यहां खाने का ठिकाना कहां है ! थोड़ा-सा मक्का पैदा होता है। कुछ कुदई और कुटकी। पर इनसे चार-छः माह से ज्यादा पेट नहीं चल सकता। इसलिए हम सब जंगल जाते हैं।'

'हम सब ?'

'हां हुज़ूर, नौकरी में आने के पहले यही तो मेरा हाल था। नेतानार से एक दिन घर छोड़कर भागा था और बस्तर चला गया था। कुछ दिन भटकने

के बाद यह जगह मिल गई। भगवान भला करे राजा रुद्रप्रतापदेव का। आप तो नये आए हैं सिरकार, यहां के बारे में नहीं जानते। यहां के आदमी जंगली हैं साहब, एकदम जंगली…।'

'हूं,' अफसर बोला, 'इसी गांव में ए० डी० साहब को चुड़ैल ने पटका था?'

'हां हुजूर,' चपरासी ने सामने अंगुली दिखाते हुए कहा, 'वह रहा राजा-महल, यही महल था जहां हुजूर को चुड़ैल ने पटका था।'

अफसर ने महल देखा और उसके चेहरे पर भय के चिह्न दिखे। उसके शरीर में एक हलकी सुरसुरी हुई। महल देखकर वह डर गया था।

'फिर?' अफसर ने प्रश्नवाचक मुद्रा में करतमी की ओर देखा।

वह बोला, 'यह है साहब थानागुड़ी। यहीं ठहर जाएं। शाम तक लोग आ जाएंगे।'

दोनों पीठ की ओर मुड़ गए। थानागुड़ी पहुंचकर करतमी ने कट्टुल बिछा दी। अफसर उसपर बैठ गया और लेटते हुए बोला, 'अजीब बात है, सारा गांव खाली है। सिर्फ छोटे-छोटे बच्चे घरों में बैठे हैं। इतने-से बच्चे और घर में अकेले रह जाते हैं? न घर के दरवाज़े बन्द और न ताला लगे, आश्चर्य है!'

'आश्चर्य की बात नहीं सरकार, बस्तर के ज्यादा गांव इसी तरह के मिलेंगे। हमारे घरों में है ही क्या, जो ताला लगाएं और असल बात तो यह है कि ताला लगाना न हमें आता है और न कभी किसीने सिखाया। चोरी-चपारी तो यहां कोई करता नहीं। पांच-छः बरस तक तो लड़के-लड़कियां घर में रह लेते हैं, उसके बाद वे भी जंगल चल देते हैं।'

अफसर ने बड़ा विस्मय प्रकट किया। उसने अपना कोट उतार दिया और दीवाल में टांग दिया। वह कट्टुल देखने लगा। बड़ी विचित्र ढंग से बिनी गई थी वह। छिवला की छालों से उसे कसा गया था परन्तु वह बड़ी नरम और आराम-देह थी। उसने वह झोंपड़ा देखा।

'यह क्या है रे?'

'हुजूर'—करतमी ने विनीत स्वर में कहा, 'यह घोटुल है हुजूर। हर गांव में यह होता है। जहां हम ठहरे हैं यह है थानागुड़ी यानी 'रस्ट होस'। परदेसी मिहमानों को यहां ठहराया जाता है।

अफसर ने घूम-फिरकर थानागुड़ी देखी। उसके मलगों को देखा। छत

देखी। दीवालें देखीं। दीवालों पर बने चित्र देखे। बड़े अजीब थे वे। उसी तरह के चित्र उसने घोटुल की दीवाल में देखे। घोटुल के बीच छत को छूता एक मोटा मलगा था। उसमें भी बहुत-से चित्र बने थे। कहीं घोड़े पर सवार आदमी, कहीं हाथी पर सवार। कहीं कोई सेना जैसा दृश्य। कहीं ढेर से मरद-औरत। उसने बारीकी से सब देखा।

'यह सब क्या है रे ?'

'चित्तर हैं हुजूर।'

'वह तो देख रहा हूं।' अफसर ने डांटकर कहा तो करतमी दहक गया।

'हां ऽ ऽ ऽ, हु····जू····हां ऽ ऽ ऽ ऽ।'

'हां ऽ ऽ ऽ क्या ? यह सब क्या है ?'

'यह तो मैं खुद नहीं जानता सरकार।'

'गोंड़ है न ?'

'हां हुज़ूर।'

'तू····।'

'हां सरकार, मैं भी घोटुल में रहा हूं। अपने गांव के घोटुल में मैंने भी चित्र बनाए हैं, अपने हाथ से···और भुसरी···भु···स····री।'—वह रुक गया।

'भु···स····री, यह कौन ?'—अफसर ने उसकी ओर देखा तो वह शरमा गया। अंगूठे से ज़मीन कुरेदता बोला, 'भुसरी हुज़ूर, नेतानार की खूबसूरत मोटियारी। मुझसे···मुझसे बहुत प्यार करती थी साहब'—उसने एक लम्बी सांस ली और अफसर की ओर देखा। देखकर शरमा गया। शरम के मारे वह बाहर चला गया।

'करतमी !' अफसर ने पुकारा।

'हां सरकार।' आवाज़ देकर तेज़ी से वह भीतर आ गया।

'क···र····त···मी !'

'हुज़ूर।'

'मैंने कुछ पूछा था तुझसे ?'

'हां, सरकार।'

'हां, हां, हां, यह सब क्या है ?'

'सरकार अपने घोटुल में मैंने और भुसरी ने मिलकर बहुत-से चित्तर बनाए

थे पर हम नहीं जानते क्या बना रहे हैं। हमारे बाप-दादों ने ऐसे चित्तर बनाए हैं। हम भी उनकी नकल करते हैं। घोटुल में होड़ लगती है—कौन सबसे अच्छा चित्तर बनाता है। इसी होड़ाहोड़ी में हम आड़ी-तिरछी लकीरें खींचते रहते हैं हुज़ूर, बस।'

अफसर ने सारा घोटुल घूम-घूमकर देखा। उसकी एक-एक बात जानी। करतमी की हर बात में उसने रस लिया और हर बात की गहराई तक गया। करतमी जितना जानता था, अपने अफसर को उसने सब बताया।

अफसर ने अपना 'टिफिन' बुलाया और खाना खाकर लेट रहा।

'करतमी!'

'हुज़ूर।'

'शाम को सबको बुलाना है, समझे?'

'जी हुज़ूर।'

'क्या कहेगा?'

'यही सरकार, कि आप आए हैं।'

'बेवकूफ!' अफसर बोला, 'कहना, अंतागढ़ से तहसीलदार साहब आए हैं। सबको बुलाया है। शाम तक नारायनपुर से कोटवार भी आ जाएगा।'

'जी हुज़ूर' बड़ी ललक से वह बोला, जैसे सब समझ गया है और चला गया।

गांव की गलियों में घूमता वह गायता के घर पहुंच गया। गायता के घर के बाहर चार बच्चे खड़े थे। अन्दर उसने देखा उनकी आवा भी थी। वह भीतर चला गया। सत्ताय ने दो-तीन बार उसे देखा। एक अजनबी को बेधड़क भीतर आते देखकर वह पीछे हटी पर जब करतमी ने उसीकी भाषा में अपना परिचय दिया और बताया कि वह भी गोंड़ है, नेतानार रहता है, तो सत्ताय का डर चला गया। देहली पर करतमी बैठ गया और सत्ताय से बातें करने लगा। बातों ही बातों में नेतानार का ज़िकर चला और सुलकसाए की बात निकल आई। वह सुलक को खूब जानता है। कई गांवों में दोनों साथ नाचे हैं। सारा किस्सा सुनकर उसे दुःख हुआ, बोला, 'सुलकसाए साधारण आदमी नहीं है आवा, वह बड़ा समझदार है।'

'उसकी समझदारी अब सारा गांव देखेगा न करतमी।'

'ऐसा मत कह आवा। तू भुसरी को नहीं जानती। मैं तो उसी गांव में जनमा हूं। बचपन से उसे जानता हूं। घोटुल में साथ रही है और जब मेरा तापे मर गया तो मैं उसीके यहां भगेला बनकर रहता रहा।.... बड़ी चालाक लड़की है। मुझसे पिरेम करती थी और जब तापे ने उसके लिए लमसेना रखा तो चीं तक न कर सकी.... ।'

'चल हट यहां से,' सत्ताय बोली, 'पिरेम का मारा है, निगोड़ा। अलवा-जलवा बकता है!'

करतमी चुप रहा। सत्ताय भीतर गई और एक दोने में थोड़ी लांदा ले आई, 'ले पीले।' लांदा उसने करतमी के सामने रख दी।

करतमी उठाकर गटगटा गया। पेट पर उसने हाथ फेरा और उठकर खड़ा हो गया।

हिरमे से कह देना मुलवे[1] गांव भर को बुलाया है, तेसीदार ने। और हां, सुलकसाए, वह कहां गया?'

'फिर रहा होगा बंमटा। सबेरे से उठकर गया है तो सूरत नहीं दिखाई। महुआ के साथ बैठा होगा नरवा के तीर या कहीं जरिया की छाया में सत्यानासी।'

करतमी ने आगे कुछ न पूछा। वह समझ गया कि सत्ताय और सुलकसाए की नहीं पटती। बात करने से क्या मतलब! वहां से निकला तो सिरहा के यहां गया, फिर पेरमा के यहां। फिर हतगुण्डा के यहां। कोई नहीं था। सब बाहर गए थे। चुपचाप वह लौट आया। तब अफसर कट्टुल में लेटा था।

'करतमी!'—उसने बुलाया और बोला, 'जगह मजेदार दिखती है। आज नाच-गाना.... ।'

'होगा हुजूर, बिना कहे होगा। घोटुल में रोज यही होता है। आप देखते-देखते थक जाएंगे पर वे नाचते-नाचते नहीं थकेंगे।'

'अच्छा!' अफसर ने आश्चर्य से कहा, 'ये लोग कहीं नौकरी नहीं करते?'

'कहां मिलती है, साहब!'

'और मजूरी?'

---

१. शाम

'वह भी कहां धरी है ! नरायनपुर में कभी-कभी यहां के लोगों को कुछ काम मिल जाता है। अभी रियासत की गवनेट (गवर्नमेंट) ने एक कोंजीहोस नरायनपुर में बनवाया था तो दो-चार महीना काम मिला, दस-बीस लोगों को। पर जितने काम पर गए उनकी मुसीबत रही। उस गांव के दूसरे लोगों ने उनका 'बेकाट' किया।'

'सो क्यों ?' अफसर ने पूछा।

'पलीक ने विरोध किया कोंजीहोस का। इसके पहले यहां होस नहीं थे। जब से अडमिन साहब (एडमिनिस्ट्रेटर) आए हैं, पलीक चिंतित हो गई है।'

'इसमें चिन्ता की क्या बात है ! लोगों के जानवर आवारा फिरें और फसल का नुकसान करें, इसमें क्या फायदा है ?'

'पर पलीक कहती है हुजूर, कि सारी धरती उनकी है। ये जंगल उनके हैं। ये खेत उनके हैं। ये गांव उनके हैं। जानवर क्या करते हैं और क्या नहीं करते, इसकी चिन्ता गांव वालों को होनी चाहिए। गांव के गायता को होनी चाहिए। मांझी को होनी चाहिए। परगना-मांझी को होनी चाहिए। रियासत को इससे क्या करना है ?'

'क्यों नहीं करना !' डांटकर अफसर बोला, 'राजा काहे को होता है ? जनता में अमन-चैन के लिए न ?'

'हां हुजूर, पर यहां पलीक कहती है कि यहां अनचैन कहां नहीं है ! रियासत को टिक्कस चहिए न। जो दे सकते हैं, उनसे ले ले···· और सरकार, आप नहीं जानते, यहां के ये सब गरीब साल में एक बार राजा साहब को नजराना भेंट करते हैं।'

'अच्छा !' अफसर उठ गया था।

'हां साहब, दसेरा के दिन सब जगदलपुर जाते हैं और फिर वहां एक बड़ा भारी जलूस···· क्या मजमा जमता है सरकार, आप देखना तो कभी, देखा न होगा।'

'वह ठीक है करतमी, पर कांजीहाउस बनाने में जनता को क्या तकलीफ होगी, मैं नहीं समझ सका। जो आदमी जुर्म करता है उसे दण्ड मिलता । जो जानवर जुर्म करे उसे भी दण्ड मिलना चाहिए और उसके मालिक को भी।'

'हां, हुजूर,···न····हीं···!'

'तू क्या सोचता है ?'

'हां, हां श्रां श्रां श्रां, न·······हीं ई ई ई, सरकार !'

'हां, नहीं; क्या ?'

'हां, श्रां श्रां, सरकार मिलना चाहिए, उसने मुश्किल से अपने गले के नीचे थूक उतारा।

पोरद नीचे ढलने लगा था और आग जैसी तेज अर्री धीरे-धीरे पीली पड़कर ठंडी होती जा रही थी। गांव में लोगों का आना शुरू हो गया था। करतमी अफसर से छुट्टी लेकर गांव को खबर करने चला गया।

करतमी ने हर लोंन में जाकर मुलवी, थानागुड़ी में जमा होने की बात कह दी। छोट-सा गांव, समय कितना लगता है ! बात की बात में काम हो गया और लौटते जब गायता के घर गया तो उसने देखा उसके यहां बाहर बहुत-से लोग बैठे हैं। उनमें हबका भी था और हेलमा भी।

हबका ने करतमी को देखा तो उठकर खड़ा हो गया—'आ रे सरदार, तू तो अब सरकार बन गया है।'

करतमी फाटक खोलकर अन्दर चला गया। हबका ने उसे अपनी छाती से लगा लिया, 'भागवान है !'

'कहां दादा,' करतमी बोला—'मैं तो सारी पलीक का सेवक हूं।'

हबका ने गायता और सिरहा से उसका परिचय कराया और फिर उसकी बड़ाई करने लगा, 'अरे हिरमे, कल का छोकरा, सामने नंगा देखा है। और आज देखो, हमारा सरकार बन गया। बड़े भाग लेकर आया है !'

अपनी तारीफ किसे खराब लगी है ! करतमी के चेहरे में खिले फूलों जैसी ताजगी नज़र आने लगी थी। सब लोगों ने बड़े गौर से उसे देखा। उन सबके लिए वह बहुत बड़ा आदमी था। यह पद पाकर आज करतमी को गरब भी हो रहा था। हिरमे ने बटुए से धुइंगा निकालकर कान में खुसी चुंगी में भरी और हबका की ओर बढ़ा दी। हबका ने चकमक निकाली।

'खच्च खिच्च अ अ अ।' आग की चिनगारी कपास में लग गई। उसे धुइंगा पर रखकर चुंगी उसने मुंह में लगाई और कश खींचा। धुइंगा ने आग पकड़ ली थी। करतमी की ओर उसने चुंगी बढ़ा दी। करतमी ने झिझकते वह

संभाली। एक फूंक लेने के बाद उसने उसे और आगे बढ़ा दिया। बोला, 'दादाल, चरट में जो मजा है सो चुंगी में नहीं।'

'चरट क्या ?'...हिरमे ने पूछा।

करतमी ने झट पैंट के खीसे से एक चुरुट निकाली और हिरमे की ओर बढ़ा दी, 'यह है चरट। जरा पीकर तो देख। एक फूंक में वो मजा आता है, वो मजा आता है कि........।'

हिरमें ने उसे लौटा-पौटाकर देखा। दूसरे लोग भी देखने लगे। हबका बोला, 'इसे पीते कैसे हैं, सरकार ?'

'बस ऐसे ही जैसे चुंगी को।' उसने खीसे से माचिस निकाली और 'सट्ऽ सट्ट्ट्' तीली खींचकर चुरुट में आग लगा दी। मुंह से चिलम की तरह जोर से उसने कश खींचा और सब लोगों की तरफ शान से देखकर आसमान की ओर धुआं छोड़ दिया। हिंरमे ने चुरुट उसके हाथ से ले ली। चुंगी की तरह वह भी एक के बाद एक सब लोगों के पास घूमने लगी। जितने लोगों ने उसे पिया, सबने सराहना की और उससे भी ज़्यादा सराहना करतमी को मिली। इसी बीच आगे बात चली। हबका पहले आने वाला था पर वह देर से गढ़ बंगाल पहुंचा था। बोला, 'करतमी कहां तू, कहां हम ! सुना है तू तो बनियां के घोड़े में उड़ता आया है !'

'हां दादाऽऽ'—करतमी ने सकुचाते कहा, 'मैंने जाकर जैसे ही उसकी देहली में पैर पटका कि उसने अपने दोनों घोड़े सामने लाकर खड़े कर दिए।'

'सुना है, हवा में उड़ते हैं उसके घोड़े !'

'हां....आं ...आं'—हिचकते करतमी बोला, 'हवा में क्या उड़ते हैं दादा, वे तो पानी पर भी दौड़ते हैं।'

'सुना है कोई ऐरा-गैरा धोके से पीठ पर हाथ धर दे तो मुसीबत आ जाए।'

'हाथ क्या धरदे दादा, कोई पास भर तो चला जाए ! पर अपनी बात और है ! रियासत के एक से एक घोड़े को आड़े हाथ लिया है। मैंने जैसे हा घोड़ों की लगाम थामी कि वे नीचे गर्दन झुकाकर खड़े हो गए। मजाल है कि इंच भर सरक जाएं !'

इन लोगों के पीछे कहीं अंभोली बैठा था। अब तक न जाने क्यों धीरज

धरे सब सुन रहा था। अब उठकर खड़ा हो गया। बोला, 'झूठ बोलता है यह, नरवा की घाटी चढ़ते मैंने देखा है इसे। एकदम पैदल था यह।....और क्यों रे, तेरे साथ कौन था वह 'टेट वेट' लगाए ?'

करतमी के नीचे से ज़मीन सरक गई पर उसने अपने को संभाल लिया। अंभोली की ओर उसने गुस्से से देखा तो हिरमे ने बात रख ली—'बुरा न मान करतमी। यह पागल है, अंट-संट बकता रहता है।'

'हूं, पागल हूं क्यों न ?'—अंभोली बोला, 'घोड़े पानी में दौड़ते हैं ! क्या बात है !'—बड़े लटके से उसने कहा, 'अरे दादा, मैंने इसे अच्छी तरह देखा है, पैदल आ रहा था, पैदल।'

करतमी की बात पकड़ी गई थी। उसका चेहरा फक्क हो गया था। कई लोगों ने यह भांप लिया पर चुप रहे। अपनी बात छिपाने के लिए करतमी ने कहा, 'नहीं दादा, नाले तक घोड़े को हम लाए, फिर हमारे अफिसर ने उन्हें लौटा दिया। नरवा तक तो आ गए थे। थानागुड़ी थी ही कितनी दूर !'

'तो कौन कहता है तू झूठ बोलता है, करतमी। तू है आदमी बड़ा, घोड़े पर क्या हवा में भी उड़ सकता है। यह तो ठहरा पागल।' हबका एक छड़ी उठाकर अंभोली की ओर बढ़ा—'चल, भाग यहां से।'

अंभोली ने ज़ोर से हंस दिया—'घोड़े पानी पर दौड़ते हैं ! घोड़े पानी पर दौड़ते हैं !'—चिल्लाता वह भाग गया। करतमी उसे देखता रहा। उस समय तक देखता रहा जब तक वह दूर न भाग गया। उसके जाने पर करतमी को चैन आया।

थोड़ी देर सब चुप बैठे रहे। फिर करतमी भी उठकर खड़ा हो गया—'अच्छा दादा, चलता हूं। आज मुलवे अफिसर ने सबको थानागुड़ी में बुलाया है, यही कहने आया था।'

'अफिसर कौन ?' हिरमे ने पूछा।

'वही तैसीदार, अन्तागढ़ से आया है।'

'काहे को ?'—सबने एक साथ कहा, 'क्या नरका (रात) यहीं ठहरेगा ?'

'हां, यहीं ठहरेगा। कुछ काम से आया है। कहता है, यहां के दो आदमियों को कोई बड़ी चीज देना है।'

'बड़ी चीज !' सब आपस में खुसफुसाने लगे।

'हां रे····और देखो,' करतमी बोला—'आज घोटुल में अच्छा-सा एनदाना हो जाए।'

'हां, क्यों नहीं !' सिरहा ने कहा, 'सुलकसाए कहां है ? आज कहो उससे, अपने कमाल दिखाए।'

'सुलकसाए !' सत्ताय परछी से बोली—'दिन भर से गायब है नकटा। नरकोम (सवेरे) गया है तो अब तक पता नहीं। कोई डांट-डपट हो तो माने।'

'आ जाएगा, यहीं कहीं गया होगा !' हिरमे ने यों ही कह दिया।

सब लोग उठकर करतमी को भेजने फरके तक आए—'जुहार दाऊ !' सबने जुहार की। करतमी ने एक नये फैशन से जुहार का जवाब दिया और सीना निकालते चला गया।

तहसीलदार के आने और गांव के दो आदमियों को कुछ देने की बात पर यहां चर्चा शुरू हो गई। सब अपने-अपने ढंग से अन्दाज़ लगाने लगे।

हिरमे ने चिन्ता व्यक्त की। बोला, 'कुछ भी हो भाई, रियासत के किसी भी आदमी का आना खतरनाक है। एक गोरा आया था तो गांव भर में मुसीबत डाल गया, अब····।'

'अब क्या करोगे गायता, जो होना है होगा। पर रात को एनदाना····!' सिरहा बोला।

'हां भाई, करना तो पड़ेगा ही। सुलकसाए कहां गया ? उसे खोजो, सब हो जाएगा।'

हिरमे ने यहां-वहां देखते कहा, 'और आज हमारे गांव मिहमान भी तो आए हैं।'

'सुलकसाए, ओ सुलक !' फरका से महुआ ने आवाज़ लगाई।

'आजा बेटी, आजा।' हिरमे बोला, 'बड़े समय पर आई आज। थानागुड़ी में तैलसीदार ठहरा है। नरकी बढ़िया एनदाना हो जाए, सब जमा तो ले। सुलकसाए का तो अभी तक पता नहीं····।'

'सि हे हें ऽ ऽ ऽ'—महुआ ने ज़ोर की सांस खींची 'सुलक···सु···ल···क, सुलकसाए नहीं आ····या, अभी तक !'

'नहीं महुआ, तिरतिरबेरा का गया है।'

महुआ घबड़ा गई। उसका चेहरा उतर गया और आंखें चढ़ गईं।

'तुझे मालूम है नियार कहां गया ?' हिरमे ने पूछा।

'मुझे !···मा···लू···म ! नहीं···न····हीं, नहीं दादाल, नहीं मालूम।' महुआ मुश्किल से थूक लील पा रही थी, 'मुझे नहीं मालूम।' और वह एकदम लौट पड़ी। हिरमे बुलाता रहा। उसने लौटकर नहीं देखा। तेज़ी से पैर बढ़ाते वह झालरसिंह के यहां पहुंच गई। झालरसिंह बाहर खड़ा जलियारो से बातें कर रहा था।

'झालर !' महुआ ने भरभराए गले से कहा।

'महुआ, तू !···क्या बात है ?'

'क्या बताऊं झालर, वह तो कहीं नहीं है !'

'वह कौन, सुलकसाए ?'

महुआ ने हामी भरते हुए गर्दन हिला दी।

'क्या आदमी है वह, फिर कहीं बैठा होगा अकेला, और हवा से बातें कर रहा होगा।'

जलिया ने हंस दिया, 'हां महुआ, नेतानार क्या गया, मुसीबत ले आया है। देखा नहीं तूने, आज वहां का मांझी आया है, गायता के घर !'

महुआ ने इस बात का जवाब नहीं दिया। वह बेहद घबड़ाई थी। बोली, 'झालरसिंह, कहीं वह···!'

'नहीं महुआ, वह मर नहीं सकता।'

'ऐसा मत कह,' महुआ ने उसके मुंह पर हाथ रख दिया, 'मरने की बात ही क्यों सोची जाए !'

'हां महुआ, कोई आदमी बताकर आज तक नहीं मरा। कहीं अकेला जाकर बैठ गया होगा। चिन्ता न कर। नरकी अपने आप घोटुल में आ जाएगा।'

'आएगा क्यों नहीं,' जलिया ने अपनी आंखों की पुतलियां मटकाते कहा, 'महुआ के बिना रह सकता है !···काहे को सिर खपाती है। आज तो घोटुल में एनदाना है। बहुत बड़ा। बस तेरी तान छूटने की देर है 'रेला ऽ ऽ रे रेला ऽ ऽ ऽ' और वह हवा की लहरों से लिपटा चला न आए तो कहना।'

महुआ न शरमा सकी और न रो सकी। चुपचाप वहां से चली आई और

सुलकसाए के बारे में सोचने लगी। कभी उसने ऐसा नहीं किया था। आज तो नरकोम से उसका सिर भारी था। सोचने की ताकत वह खो चुकी थी। 'कहीं ईं ईं...' सोचते-सोचते उसके पैर अड़ गए। खड़े होकर उसने अनजाने ही पीछे देखा। वहां झमको थी। वह उसीकी ओर आ रही थी। उसे देखकर महुआ ने आगे कदम बढ़ा दिए। झमको ने आवाज़ दी पर वह न तो कुछ बोली और न उसने लौटकर देखा।

लिटो लिटो बांग परेला,
काबर काबर कोन टोरेला
काबर काबर जोलमा टोरेला
छई छई बोरी कोन बेचेला
छई छई बोरी मनई बेचेला
नकटी पैसा कोन झोकेला
नकटी पैसा जलाय झोकेला।[1]

थानागुड़ी के सामने मैदान में गांव के छोटे-छोटे लड़के और लड़कियां खेल रहे थे। सब मिलकर यह पाटा गाते और उसे बार-बार दुहराते। फिर सब भाग जाते। एक-दो लड़के उनके पीछे दौड़ते, 'लिटो लिटो बांग परेला।'

सब भाग जाते। कभी कुछ लड़के-लड़कियां खड़े होकर कहते, 'काबर काबर जोलमा टोरेला।' दूसरे लड़के जोलमा की ओर दौड़ने लगते।

फरके में खड़ा अफसर यह खेल बड़ी दिलचस्पी से देख रहा था। छोटे-छोटे नंगे और धूल में सने बच्चे कितनी लगन से खेल रहे थे! उनमें से किसीने ज़ोर से चिल्लाया, 'जोलमा!' सारे लड़कों ने जोलमा को पकड़ लिया। वह चोर ठहराई गई थी। उसे एक मुखिया लड़के के सामने लाया गया। वह लड़का अकड़कर एक पत्थर पर बैठ गया। उसे घेरकर तीन-चार और लड़के बैठ गए। उसने पूछा, 'तेरा नाम?'

---

१. भटे तैयार हैं। उन्हें, झुके-झुके कौन तोड़ रहा है? झुके-झुके जोलमा तोड़ रही है। उन्हें बाज़ार ले जाकर कौन बेचेगा? बाज़ार में मनई ले जाकर बेचेगा। यह खोटा पैसा किसने लिया? जलाय ने यह खोटा पैसा लिया है।

वह बोली, 'जोलमा !'

'तूने भटे चुराए हैं ?'

'नहीं !' उसने कहा, 'चुराए नहीं तोड़े हैं। बाड़ी में लगे थे तो तोड़ लिए, इसमें क्या चोरी है !'

'नहीं, यह चोरी है,' वह लड़का बोला। वह शायद पंचतोर का काम कर रहा था। उसने अपने पंचों से बात की। किसीने सिर मटकाकर हामी भरी तो किसीने नाहीं कर दी। थोड़ी देर वे आपस में कुछ धीरे-धीरे बातें करते रहे। अफसर यह सब बड़े गौर से देखता रहा।

पंचतोर लड़के ने जब अपने पंचों से सलाह-मशविरा कर लिया तो खड़े होकर बोला, 'जोलमा चोर है।'

'नहीं हुजूर, चोर नहीं हूं। लिंगो की बनाई धरती पर उगे भटे तोड़ना क्या चोरी है !'

'चुप रहो'—पंचतोर बोला। जोलमा चुप हो गई और सहमकर खड़ी रही। अफसर यह सारा अभिनय देख रहा था। जोलमा बड़ी खूबी से चोर का अभिनय कर रही थी।

पंचतोर ने आदेश के स्वर में कहा, 'नित मंद।'

लड़की ने तुरन्त आदेश का पालन किया और एक पैर से खड़ी हो गई।

'हमने तुम्हारा मामला सुना लड़की। यह तो ठीक है कि भटे लिंगो की जमीन पर लगे थे, पर जिसने उन्हें लगाए थे उस आदमी से तो पूछ लेना था। बिना पूछे कोई चीज तोड़ना चोरी है, इसलिए तुम्हें दोरीलो[1] की सजा दी जाती है।'

लड़की उसी तरह खड़ी रही। पंचतोर ने दूसरे खड़े लड़कों को इशारा किया। वे शायद पुलिस वालों का पार्ट अदा कर रहे थे। वे आगे बढ़े। उन्होंने जोलमा के दोनों पैरों के बीच डंडा फंसा दिया। जोलमा कमर के बल झुक गई और उसने तत्काल गाना शुरू कर दिया—'रे रेला रे रेला रेलो रेलो रे रेलो।'

अफसर उसका गाना कान लगाए सुनता रहा। बड़े राग के साथ उसी तरह

---

१. पैरों में डंडा फंसा दिया जाता है और लड़की जमीन की ओर उस समय तक झुकी रहती है जब तक दो गाने न हो जाएं। यही 'दोरीलो' की सजा है।

झुके लड़की ने एक साथ दो पाटा गाकर 'दोरीलो' की सज़ा पूरी की। पंचतोर ने उसे अपने सीने से लगा लिया और दूसरे लड़के ताली पीट-पीटकर हंसने लगे। हंसते-हंसते सारे लड़के दौड़कर अपने-अपने घरों की ओर चले गए। अफसर अब भी वहीं खड़ा था।

घोटुल का फरका खुला 'चर चूंऽऽ, चूं च र र र रऽ।' अफसर का ध्यान टूटा। एक पेड़गी थी वह। भरी-पूरी और जवान। रंग-बिरंगी गुरियों से गला सजाए। उसने झाड़ू लेकर सारा घोटुल झाड़ डाला। इसके बाद ही धीरे-धीरे गांव के और भी लड़के-लड़कियों का आना शुरू हो गया।

करतमी ने आकर अफसर से जुहार की। संझा हो गई थी और घोटुल में आग जला दी गई थी। अफसर भीतर थानागुड़ी में चला गया। करतमी ने घोटुल के चेलिक और मोटियारियों के विषय में सब कुछ अफसर से बताया। सुनकर उसे प्रसन्नता हुई। बोला, 'कितने सुखी लोग हैं ये! दिन भर रोटी की खोज में भटकते रहते हैं और रात को सब कुछ भूल जाते हैं।'

'हां सरकार।'

घोटुल की चहल-पहल अब अफसर को सुनाई देने लगी थी। धीरे-धीरे गांव के और लोग भी वहां आकर जमा होने लगे। गायता ने आकर सबसे पहले अफसर से जुहार की। अफसर ने उसे गौर से देखा। हट्टा-कट्टा अधेड़ उमर का आदमी था। वह शकल से बड़ा सीधा दिखता था। उसकी भोली सूरत में एक अद्भुत आकर्षण था। अफसर ने उसे बैठने का हुक्म दिया। वह वहीं बैठ गया। यहां-वहां की बातचीत हुईं। अफसर ने कहा, 'तुम्हींने ए० डी० साहब की जान बचाई थी?'

'ए····ड···कौन हुजूर?'

करतमी ने समझाया तो वह बोला, 'नहीं सरकार, हम क्या जान बचाएंगे किसीकी! बड़े देव सबकी रच्छा करते हैं। हम तो निमित्त मात्र हैं।····हुजूर की जान बच गई। बड़ी बात हुई सिरकार, वरना यह चुड़ैल····!'

हबका भी आ गया था। बाहर से उसने आवाज़ लगाई। यहां घोटुल में एनदाना की तैयारी पूरी हो चुकी थी। लांदा का मटका खोल दिया गया था और सारे चेलिक, मोटियारी और गांव के दूसरे लोग दौनों में लांदा ले-लेकर मनमाना पी रहे थे। गायता उठकर बाहर आ गया। उनके साथ अफसर भी

था। अफसर को घोटुल में एक कट्टुल पर बैठा दिया गया।

यहां-वहां देखने पर भी किसीको सुलकसाए नहीं दिखा। उसकी गैरहाजिरी में महुआ काम चला रही थी। उसके बारे में चेलिक और मोटियारियों ने आपस में चर्चा की पर कोई गम्भीरता से बातें नहीं कर सका। इतनी फुरसत किसे थी! एनदाना के लिए सबके पैर थिरक रहे थे और सबके गले खुलने के लिए अधीर थे। सबके चेहरे फूले थे। हेलमी भी इनमें आकर मिल गया था। पर महुआ उदास थी। मजबूरी थी, काम करना था, इसलिए वह काम कर रही थी। उसमें किसी तरह का उत्साह नजर नहीं आया। जलियारो ने मज़ाक किया, 'बड़ा अत्याचारी है! अपने पिरेम को भी नहीं पहचानता। क्यों महुआ?'

महुआ ने मुंह पलटा लिया।

उतुर फुतुर फुरिस फुरिस फुरिस।

महुआ ने कान लगाकर सुना। उसे फिर सुनाई दिया—उतुर फुतुरऽऽ....।

'जलिया!' वह बोली। जलिया ने उसके पास आकर उसके गालों में चिहूंटी ली, 'बोल।'

'वह सुन'—महुआ ने दूर सामने देखकर कहा, 'फड़की गा रही है उतुर फुतुर....।'

'फड़की और इत्ते समय!' जलिया ने ज़ोर से हंस दिया, 'मुझे तो कुछ सुनाई नहीं दे रहा।'

'वह सुन, सुन तो; उतुर फुतुर...।'

जलिया इतने ज़ोर से हंसी कि सारे घोटुल में उसकी आवाज़ गूंज गई। पेरमा ने डांट दिया, 'क्या है? जल्दी तैयार हो। नाचना है!'

सब चुप हो गए। जलिया भी दबे पैर महुआ से दूर खिसक गई।

मैदान में ढोलकिए उतर पड़े। टिमकी, मांदर, हकुमराई, ड्रम, निसान और बांसुरी वाले भी जमा हो गए। अंभोली ने तो उचट-उचटकर केंकरेंग[1] बजाना शुरू कर दिया। भूरी भी कहीं से आ गई थी। वह वादकों से थोड़ी दूर खड़ी होकर चिटकुल[2] बजाने लगी।

---

१. इस प्रकार का बाजा। यह बांस की लकड़ी का होता है और बांस को तराशकर बनाया जाता है।

२. यह भी बांस का बनता है और मुंह से बजाया जाता है।

घोटुल के चेलिक और मोटियारी एक-एक कर मैदान में आ गए। गांव के दूसरे लोग भी एनदाना के लिए तैयार थे। उनमें गांव के जवान थे और बूढ़े भी। स्वयं गायता हिरमे बीच में खड़ा था। हबका और हेलमा भी क्यों रुकते ? मतलब यह कि सारे का सारा गांव मैदान में था। औरतों ने अपना एक दल अलग बना लिया था और मर्दों ने अलग। बीच में वादक खड़े थे। उनके सिर में मोरपखा और लाल पगड़ी थी। कमर में कौड़ियों की करधनी पहने थे।

इस मजमें का नेतृत्व आज झालरसिंह कर रहा था। वह ज़मीन पर अपनी ही जगह उचट रहा था। औरतों के दल में उससे होड़ लगा रही थी जलियारो। महुआ भी वहां थी। और दिन यह काम महुआ करती थी। नाच में उससे कोई बाजी मार ले जाए, यह कभी नहीं हुआ। नाच के जब-जब मजमें जमते, महुआ के शरीर पर पर निकल आते थे। दूसरे गांवों में जाकर भी उसने अपने कमाल दिखाए हैं और होड़ाहोड़ी में सबको नीचा दिखाया है, पर आज उसके पैरों की ताकत जैसे किसीने खींच ली थी। सारी औरतें हंस रही थीं और अंधेरी रात में उनके दांत बिजली की तरह चमक रहे थे, पर महुआ का मन उमड़ते नाले की तरह व्याकुल था। सारी औरतें एक दूसरे की कमर को अपने हाथों से बांधे थीं। बूढ़ी झमको तक अपना बुढ़ापा भूल गई थी। उसकी बाजू में सत्ताय थी। झमको ने सत्ताय की कमर में अपनी अंगुलियां धीरे से गड़ा दीं तो सत्ताय कांख उठी— 'सिस्स्सीसीं ऽऽ'। उसने अपनी बाजू की सहेली के साथ यही किया और धीरे-धीरे एक साथ सारी औरतों ने जब यह दुहराया तो वह पूरा दल फनफनाते नाले की तरह उमड़ पड़ा। नागिन की तरह वह लहरा उठा और अंगड़ाइयां लेने लगा। इस दल के अंत में महुआ थी। बस, वही एक लड़की थी जिसपर कोई असर नहीं हो रहा था।

यहां मर्दों के दल में झालर ने खींचतान शुरू कर दी थी। उसे आज मौका मिला है, भला क्यों चूके ! सुलकसाए होता तो उसे कौन पूछता और अभी तक जितने ऐसे सामूहिक नाच हुए हैं, सबमें सुलक आगे रहा है। आज झालरसिंह शायद यह बता देना चाहता था कि वह भी कोई कम नचेड़ा नहीं है। इसीलिए उसने लांदा भी खूब ढाली थी। जब सब पीकर थक गए थे तब भी वह बराबर पीता जा रहा था।

अंभोली केंकरेंग और भूरी चिटकुल बराबर बजा रहे थे। बजाते-बजाते

उचाट भी भरते थे और अनजाने ही दोनों पास आ गए थे। जब बिलकुल पास आ गए तो दोनों ने एक दूसरे को देखा और बाजों को वहीं फेंककर एक दूसरे की कमर में हाथ डालकर दौड़ लगाई। वे वादकों के पास जैसे ही पहुंचे कि ढोलकिए के हाथ चाम पर और तेज़ हो गए। टिमकी वाले ने कमचियों से पिटाई शुरू कर दी और ड्रम वाला, जो अब तक शायद चाम की ऊपरी सतह को केवल सहला रहा था, ज़ोर-ज़ोर से पीटने लगा। ड्रम की आवाज़ दूर-दूर तक पहुंच गई। सामने नाले की खोहों से, पहाड़ियों की ढालों से और दूर खड़े राजामहल की पुरानी मटमैली ईंटों से टकराकर वह लौटकर आने लगी और पूरे मैदान में गूंज उठी। यह नर्तकों और गायकों के लिए एक चुनौती थी। सबके पैर एक साथ थिरक उठे। पयरी की मधुर झंकार ने उनमें मीठा स्वर मिला दिया:

चिछ्छ्म्म चिछ्छ्म्म चिछ्छ्म्म ऽ ऽ ऽ।

किसने पहले गला खोला, कोई नहीं जानता। सबके स्वर शायद साथ निकले थे:

तैंना नामुर ना मुर रे ना रे ना ना
तुभी नाका जोड़ा डोंगा, हामी नाकुन्दे खड़क सरकार चो।
रैयत के दंड पड़ली दरभा ठाना चो सड़क।
हो तैं ना ना मुर ऽ ऽ।
पकालु गोबर की पावली तरास हुनाके बोल्दे छेना।
सरकार चो।
दुल्हर कुती चो दुकान मड़ाला दुल्हा कुती चो घेना।
हो तैं ना ना मुर ऽ ऽ।
माय चो नाव हीपे हीपे, बेटी चो नाव हीपे हीपे
पान टोड़ुक जो हीपे, तुलसी डोंगरी चो हीपे
हो तैं ना ना मुर ऽ ऽ ऽ ऽ।[1]

पाटा अपनी-अपनी ताल और लय के साथ गूंजता जा रहा था और कट्टुल में बैठा अफसर जैसे हवा में उड़ रहा था। उसकी आंखों को नर्तकों के जादू ने जकड़ रखा था। वह बराबर एकटक उसी ओर देखने में मगन था। उसे शायद

१. इस गीत को मूलरूप से 'चैत परब' के समय गाते हैं।

पलक झांपना भी भारी पड़ रहा था। उसने यह भी नहीं देखा कि करतमी उसीकी बाजू में खड़ा अकेला नाच रहा है। करतमी नौकर आज हुआ है। कल तक तो उसकी ज़िन्दगी में भी यही रस था। फिर वह कैसे भूलता ! अफसर के कारण खुद मैदान में नहीं कूद सका था, पर एनदाना देखते-देखते शायद वह अपने को भूल चुका था। उसके पैरों में समाई अतीत की झंकार, पहाड़ी झरने की तरह निकल पड़ी थी। नाचते-कूदते वह अफसर के सामने तक आ गया, तो अफसर को एकदम हंसी आ गई। वह ज़ोर से अपने आप हंस पड़ा और उठकर खड़ा हो गया। उसके शरीर में एक अजीब गर्मी आ गई थी। यदि उसे थोड़ा भी नाच आता होता या इनकी ज़िन्दगी से ज़रा भी अभ्यस्त होता तो शायद खुद मैदान में कूद पड़ता। वैसे उसके पैरों में थिरकन बराबर देखी जा सकती थी। कट्टुल में बैठे रहना उसके लिए जैसे मुश्किल हो रहा था। वह दायां पैर ऊपर उठाता। उसे भी फिर ज़मीन पर दे मारता।

'क···र···त···मी।'—वह जोर से एकाएक चिल्लाया तो करतमी वहीं रुककर खड़ा हो गया। अफसर के हुकम ने बिजली की बटन का काम किया था। 'जा, यहां अकेला क्या करता है।'

करतमी ने एक बार अफसर के चेहरे को देखा। फिर हंसता हुआ हवा में उड़ गया और नर्तकों की भीड़ में समा गया।

ड्रमों ने एकाएक अपने स्वर बदल दिए थे। साथ ही ढोलकिए ने भी अपने पैरों को दूसरा रंग दे दिया था। इनके साथ ही मरद और औरतों की सांकल जैसी गुथी कड़ी टूट गई। सब बिखर गए और एक-एक मरद, एक-एक औरत को साथ लेकर अलग-अलग नाचने लगे। झालरसिंह के साथ जलियारो थी। अंभोली तो भूरी को जबरन खींच-खींचकर अपनी देह से सटा लेना चाहता था। भूरी बीच-बीच में किलकारी भर रही थी। हिरमे को सत्ताय ही मिली, पर सत्ताय किसी और के साथ नाचने के लिए शायद व्याकुल थी। उसके पैरों की गति और लय हिरमे के साथ मेल नहीं खा रहे थे। पर करती क्या, हिरमे की बाहुओं में उसकी देह जकड़ी थी। हबका ने सेनो[1] झमको का हाथ पकड़ रखा था। सन जैसे सफेद बाल वाली झमको आज जवान हो गई थी। उसके चेहरे

---

१. बूढ़ी

पर पानी की तंरगों जैसी पड़ी परतें फैलकर बिखर गई थीं और पूरा चेहरा गहरे पानी की सतह की तरह सपाट हो गया था। हेलमा इस मजमें में कायर और अनाड़ी साबित हुआ। वह किसी लड़की का हाथ पकड़ने में समर्थ न हो पाया। उसने कोशिश नहीं की, सो बात नहीं थी, पर जहां भी वह हाथ बढ़ाता झिड़क दिया जाता। न जाने क्यों ? अपनी इज़्ज़त बचाने के लिए इसीलिए वह अक्सर भीड़ में डूब जाने की चेष्टा करता रहता था।

घोटुल के सामने का समूचा मैदान नर्तकों के हिचकोलों से तैरता नज़र आ रहा था और मैदान के आखिरी कोने में खड़ा राजामहल यह सब तमाशा एकान्त भाव से चुपचाप देख रहा था। जिस तरह बांस बढ़ते-बढ़ते झुक जाता है, ऐसा लग रहा था यह राजामहल भी मैदान के सामने झुक गया है।

अफसर ने ऊपर आकाश की ओर देखा। अनगिनत तारे एक-एक कर घिसक रहे थे, जैसे किसी सीढ़ी से नीचे उतर रहे हों। दूर पहाड़ी की गोद में मानो गहरा सागर लहरा रहा था और तारे उसमें एक-एक करके कूदते जा रहे थे। अफसर को जम्हाई आई। वह उठकर खड़ा हो गया। उसने देखा, पूरा नर्तकदल उसी तरह नाच-गाने में मगन है। उनकी गति में कहीं शिथिलता नहीं है। उनकी लय में कहीं कंपकंपी नहीं सुनाई देती। करतमी भी नाच में भिड़ा था। अफसर ने उसे आवाज़ दी—एक बार, दो बार, तीन बार। लगातार कई बार आवाज़ देने के बाद शायद उसने सुना था। सुना तो नाच बन्द कर एकदम अफसर के सामने आकर खड़ा हो गया। अफसर ने उसके कान में कुछ कहा, तो वह 'इंगे' कहकर दौड़ता भागा। उसने झालरसिंह को जलियारो से छुड़ाया और उससे कुछ कहा। झालर ने तभी एक लम्बी आवाज़ लगाई, 'येंद माट'।[1] आवाज़ सुनते ही सारा मजमा एकदम पस्त पड़ गया।

सबके थिरकते पैर एकदम रुक गए। सारे वातावरण में गहरी खामोशी छा गई। हवा धीरे-धीरे बह रही थी। लगता था, नरवा के तीर से वह उठ रही है और इस मैदान में आकर बिखर जाती है। दूर पहाड़ों का काफला अंधेरे में खोया था और चारों तरफ से सांय-सांय की आवाज़ आ रही थी, मानो रात

---

१. बन्द करो

अपनी गोद में नदी, पहाड़, खेत-खलिहान, पेड़-पत्ते और पौधों को समेटे लोरी सुना रही है।

झालरसिंह ने अंगड़ाई ली और सबको अपनी मस्त निगाहों से निहारा। जलियारो उसके पास ही थी। बोला—'चल, अब नींद आ रही है। चल सो जाएं।' जलियारो ने भी अपनी आंखों से ऐसा इशारा किया जो मानो कह रहा था कि 'ये पुतलियां भी यही चाहती हैं।' उन दोनों ने घोटुल की ओर कदम बढ़ाए तो दूसरे चेलिक और मोटियारी भी बढ़ गए। गांव के गायता ने अफसर के सामने जाकर जुहार की और जाने लगा तो अफसर ने कहा, 'हिरमे, कल सवेरे मैं चला जाऊंगा। मुझे रियासत के राजा ने भेजा है। तुमने और सिरहा ने गोरे अफसर की जान बचाई थी इसलिए प्रसन्न होकर सरकार ने तुम्हें दो-दो एकड़ ज़मीन दी है। गांव की जो ज़मीन तुम्हें पसन्द आए चुन लो और कोटवार को खबर कर दो। यह रहा तुम्हारा पट्टा।' गायता ने अनजाने ही हाथ बढ़ा दिया और एक सफेद कागज़ ले लिया। सिरहा ने भी ऐसा ही कागज़ संभाला और सब अपने-अपने घर चले गए।

घोटुल से लौटकर लोग बिस्तर पर आंख भी नहीं लगा पाए थे कि मुर्गे ने बांग दे दी :

कुकड़ूं कूं ऽ कुकड़ूं कूं।

सब जाग गए। जागते ही हिरमे को सुलकसाए की याद आ गई। रात बीत गई पर वह घर नहीं आया। आज तक ऐसा नहीं हुआ था। सुलकसाए बिना बताए कभी गांव से बाहर नहीं गया। वह घोटुल का सिरदार है इसलिए घोटुल जाना ज़रूरी है। यदि लीडर ही गायब रहे तो सेना का क्या होगा! धर्म तो पहले नेता को पालना पड़ता है, तब उसके पीछे उसके सिपाही मानते हैं। न मानें तो वह मनवा सकता है। नेता ही धरम से खिसक जाए तो उसकी कौन सुनेगा! घोटुल का कानून है कि उसके हर सदस्य को रात वहीं गुजारनी चाहिए। रात को यदि कोई बाहर रहे तो उसके आचरण पर शक किया जाता है। घोटुल के सदस्य उसे सज़ा देते हैं। सुलकसाए ने अब तक कई लोगों को ऐसी सज़ाएं दी हैं। उसने कभी खुद ऐसा समय नहीं आने दिया और इस बात पर उसने अपने नेता होने का धरम पूरी तरह निबाहा है। हिरमे उसे अच्छी

तरह जानता था। उस दिन सत्ताय जो अलवा-जलवा बक रही थी, वह भी उसने सुना था। इसलिए उसकी चिन्ता बढ़ गई। वह यह भी जानता था कि सुलक ज़रूरत से ज़्यादा भावुक है। जब कभी वह भावना के फेर में पड़ जाता है, न जाने कहां तक सोच बैठता है और न जाने क्या-क्या कर बैठता है। आखिर वह हिरमे का ही लड़का था। सत्ताय सौतेली मां है। उसके लिए वह पराया हो सकता है, पर हिरमे का तो उसमें खून है।

सुलकसाए के बारे में वह सोचता रहा। अनेक प्रकार के विचार उसके मन में आए—कहीं वह गांव छोड़कर भाग न गया हो,···कहीं···उसने अपनी हत्या···, नहीं, नहीं, वह ऐसा नहीं कर सकता···सुलक कमजोर नहीं है। मन का पक्का है। आत्महत्या करना कमजोर आदमियों का काम है, जिनमें न बल होता है और न बुद्धि। सुलक में इनमें से किसी चीज की कमी नहीं है, फिर··· फिर कहां है, वह ? सोचते-सोचते वह महुआ के यहां चला गया। महुआ घर में नहीं थी। सिरहा ने बताया कि महुआ तो नरकोम से ही व्याकुल है। वह अपने आप रोती है और सिसकियां भरती है। अभी-अभी कहीं चली गई है। सिरहा ने भी चिन्ता प्रकट की। वह भी बचपन से सुलकसाए को जानता है। आज तक ऐसा समय कभी उसने नहीं देखा। हिरमे के दुःख में उसने अपने को शामिल कर लिया और दोनों झालरसिंह के यहां पहुंचे। महुआ भी वहीं थी। वे दोनों बैठे बातें कर रहे थे और दोनों के चेहरे उतरे थे। हिरमे तो झालरसिंह को देखकर रो पड़ा, 'कहां गया मेरा सुलक, बेटा कहां गया वह ?'

झालरसिंह ने धीरज बंधाया और कल का सारा किस्सा सुना दिया। महुआ ने भी पेरमा के घर तक की कहानी बताई। सुनकर सबके होश उड़ गए। क्या जाने, वह कुछ कर न बैठा हो ? सुलक कल अपने वश में नहीं था। उसकी चेतना, बुद्धि के जाले में बुरी तरह उलझी थी। यह बुद्धि ही तो एक भ्रम है। जिसे अपने भंवर में फंसाती है, उसके मन और मस्तिष्क को मकड़े की तरह जकड़ लेती है। तब आदमी से पास केवल सूनी सांस रह जाती है। वही एक चीज़ बच रहती है, जिससे यह पता लगता है कि उसमें अभी प्राण शेष हैं। बुद्धि की उलझन में पड़कर सुलकसाए कहीं कुछ कर न बैठा हो ! चारों परेशान थे। हिरमे को नेतानार के हर आदमी पर क्रोध आ रहा था। उसे उस दिन की याद आ रही थी जिस दिन सुलक नेतानार गया था। न हिरमे को बुखार

आता, न सुनक वहां जाता और न यह सब होता ! सोचते-सोचते उसे हबका-मासा, हेलमी और नेतानार के उन आदमियों पर क्रोध आ गया जो यहां आए थे और उसके यहां ठहरे थे। कल तक उसने इन मिहमानों का जी खोलकर स्वागत किया था। उसे लगा कि वह हाथ में एक डंडा ले और सारे लोगों को खदेड़ दे।

आज पंचायत भी थी पर हिरमे, सिरहा, झालरसिंह और महुआ सब कुछ भूलकर सुलकसाए की चिन्ता में डूबे थे। झालर ने कहा, 'चलो दादा, आसपास देख लें, कहीं....!'

'चलो झालर, यहां बैठने से क्या काम होगा !'

सब चलने लगे तो सिरहा ने महुआ से कहा—'तू गायता के घर जा नियार। मिहमान आए हैं, उनकी भी तो चिन्ता करनी होगी। कुछ देर हो जाए तो उन्हें....।'

'हां दादाल, समझा लूंगी, तुम जाओ।' उसकी आंखों में आंसू थे। वह गायता के घर की ओर चली गई और बाकी गेंवड़े की ओर बढ़ गए।

महुआ ने जाकर हबका से सुलकसाए का सारा किस्सा सुना दिया। सुनकर उसे भी फिकर पड़ गई।

'लड़कपन कर बैठा वह,' हबका बोला—'जरा सी बात, राई का पहाड़ बना लिया उसने। अरे, हम तो सब जानते हैं, वह उस दिन खूब पिए था। आदमी शराब के नशे में क्या नहीं कर डालता ! और उसने सचमुच किया ही क्या है....!'

हबका की बातों ने महुआ के दर्द को और उभार दिया। सुलकसाए के प्रति उसके मन में जो पिरेम था, वह और भी जागृत हो गया। वह अपने आंसू न रोक सकी। सबके सामने कैसे रोए इसलिए भीतर चली गई और फफक-फफककर रोने लगी। सत्ताय ने उसे रोते देखा तो पहले तो उसके आंसू पोंछे और फिर सुलकसाए पर बरसने लगी, 'नासकटा, खुद गया तो गया, सबको मुसीबत में डाल गया। मरना था तो सबके सामने क्यों नहीं मरा !'

'आवाआआ' महुआ बोली—'ऐसे अशुभ शब्द अपने बेटे के लिए !'

'जैसी करनी, वैसा फल। इसमें मनाने न मनाने की बात क्या है !'

सत्ताय की यह बात महुआ की छाती में बबूल के कांटे की तरह चुभी।

उसके आंसू अपने आप अन्दर समा गए। बोली—'तेरा लड़का होता वह, तो ?'

'तो खुद ले जाकर कुएं में ढकेल देती। ऐसे लड़के से बांझ रहना भला है।' सत्ताय के चेहरे की स्वाभाविक क्रूरता और बढ़ गई थी।

'और उस दिन क्या हुआ था सत्तो,' महुआ ने दांत पीसते हुए कहा, 'जिस दिन तेरे गनरू ने नारायनपुर के बाजार में बनिया की दूकान से चोरी की थी। भूल गई, उस दिन सुलक न होता तो वह जहल जाता।...तू उसकी सौतेली मां है न, इसीलिए यह सोचती है। तूने उसे जाया होता तो अब तक सारे गांव में गुहार मारती फिरती।'

'म....हुआ ऽऽऽ'—सत्ताय जैसे चीख पड़ी हो, 'तू उससे पिरेम करती है और उसके पिरेम में बौरा गई है। बेशरम, माइलुटिया, सिट्टी[1]...चिपरी.... सलदरी[2] ...।'

वह लगातार गालियां देती जा रही थी। महुआ वहां से चली आई। हबका बाहर तैयार खड़ा था। बोला, 'गायता कहां गया ?'

'उसे ढूंढने, गेंवड़े की तरफ।'—एक छोटा-सा उत्तर देकर महुआ चली गई।

'चलो भाई, हम भी कहीं खोजें।' हबका अपने साथियों-सहित हाथ में डंडा लेकर सुलक की खोज में निकल पड़ा। महुआ अपने घर लौट आई और ज़मीन में अकेली पड़ी घंटों सिसकती रही। सिसकते-सिसकते उसे नींद ने आ घेरा और वह वहीं खुर्राटे भरने लगी।

छाया सीधी पड़ने लगी थी पर कहीं सुलक का पता न चला। एक ओर हिरमे, झालरसिंह और सिरहा उसकी खोज कर रहे थे तो दूसरी ओर हबका और उसके साथी। सबने नरवा का एक-एक कोना छान मारा। जरिया से लेकर बड़ तक की झाड़ देखी। एक-एक खोह में खोजा। एक-एक टोंगी को टटोला। हर आने-जाने वाले से पूछा पर उसका कहीं पता नहीं लगा। हिरमे की हालत खराब हो रही थी। उसके पैर लड़खड़ाने लगे थे। शरीर से ईपुर निकल रहा था और उसका खिला चेहरा झुलसकर सूख गया था। ढूंढते-ढूंढते जब सब

१. कुतिया २. हत्यारी

थक गए तो घर लौट आए।

हबका बोला, 'पागल हो गया है क्या ? जरा-सी तो बात थी हिरमे····।'

'तो उस बात को वहीं क्यों न निपटा दिया मांझी। तुम्हें तो हम सब मानते हैं ना। तुम्हारा भी तो उसपर अधिकार है।' हिरमे की आवाज़ बार-बार रुक जाती थी।

'तुम ठीक कहते हो गायता। पर···पर मेरी बेबसी भी तो समझो।'—हबका की इस सीधी बात का जवाब हिरमे ने दहाड़ मारते हुए दिया, 'ठीक है मांझी, तू अपनी बेबसी अपने पास रख और चला जा यहां से। उसकी लाश कहीं मिल जाए तो यहां भेज देना, जा।'

हबका ने हिरमे की इस विषभरी बात का भी बुरा नहीं माना। वह चुप बैठा रहा। हेलमा उठकर बार-बार खड़ा हो जाता था, पर उसका दूसरा साथी उसे बैठाल देता था। सिरहा सरककर हबका के पास आ गया, 'सुलक सारे गांव का हीरा है मांझी। कहीं, लिंगो न करे···उसे कुछ हो गया तो गांव भर के आंसू बरसेंगे और कितने बचेंगे···!'

'कोई नहीं मरेगा, रे सिरहा'—सत्ताय शायद यह सुन रही थी, 'ज्यादा हमदर्दी न जता। जान देना खेल नहीं है। मरते वे हैं जिन्हें अपनी आन प्यारी होती है। और सुलक ऐसा पानी वाला आदमी है नहीं, चिन्ता काहे की है!'

हिरमे चुप बैठा था। वह वैसे ही सुलक के लिए तड़प रहा था। सत्ताय की बातों से उसका ममत्व उबलते दूध की तरह छलक पड़ा। पास पड़े टिनपे को उठाकर वह सत्ताय की तरफ दौड़ा और उसकी पीठ पर टूट पड़ा—सट्ट सट्ट सट्ट सट्ट।

'मरी रे ए ए ए, मरी रे ए ए ए, दौड़ो-दौड़ो बचाओ।' वह चीख रही थी, चिल्ला रही थी, पर सब अपनी जगह से चिपके थे। कोई टस से मस न हुआ। हिरमे आंख मूंदकर उसे पीट रहा था। सिरहा ने देखा, हिरमे की आंखें आग की तरह जल रही हैं। उसने दौड़कर उसके हाथ से डंडा छीन लिया और उसे धकियाता नीचे ले आया। सब चुप थे। सत्ताय के रोने की आवाज़ सारे गांव में फैल गई थी और बहुत-से लोग बाहर तमाशा देखने जमा हो गए थे।

धूप ढलने लगी। सिरहा ने हिरमे को समझाया—मिहमान भूखे हैं। हिरमे

ने अपने आंसू रोके और मिहमानों के खाने का इन्तज़ाम किया। महुआ भी आ गई थी। परोसने में उसने बड़ा सहारा दिया। खाने के बाद पंचायत बैठी।

हबका ने कहा—'सुलक अभी बच्चा है, उस दिन उसने सब कुछ शराब के नशे में किया था, हम यह जानते हैं, पर समाज को भी तो कुछ बताना था इसलिए हम यहां आए हैं। हमने जान लिया कि सुलकसाए क्या है! आज वह यहां होता तो हम सब उस देवता से माफी मांगते।···पर····पर····पर धीरज धरो गायता, लिंगो सबकी रच्छा करता है। सुलकसाए का कोई बाल भी बांका नहीं कर पाएगा। दो-चार दिन में उसका मन साफ हो जाएगा और वह खुद चला आएगा।'

हिरमे बिना कुछ बोले बैठा रहा। उसकी ओर से सिरहा ने सबको धन्यवाद दिया और मैत्री की चिलम सुलगाई। हबका ने गुड़गुड़ाकर आकाश की ओर धुआं छोड़ दिया।

थोड़ी देर सब खामोश रहे फिर तहसीलदार के पट्टे की बात चली। झालरसिंह ने कहा, 'गायता और सिरहा को पट्टा मिला है, यह तो ठीक है, पर जानते हो इसमें क्या राज है?' झालरसिंह ने अपने मुंह पर ऐसी गम्भीरता दिखाई जैसे वह किसी भयंकर परिणाम से उन्हें सतर्क करना चाहता है। हिरमे भी अपना मुंह पोंछकर उसकी ओर देखने लगा था।

'क्या होगा?'—दो-चार लोगों ने एक साथ दुहराया।

'होगा क्या! यह जमीन किसकी है?'

'हमारी!' हेलमा ने ऊपर हाथ उठाकर जैसे नारा लगाया।

'हां, यह जमीन हमारी है। ये जंगल हमारे हैं। यह सारी धरती हमारी है। जिस लिंगो ने यह धरती बनाई है, उसीने हमें बनाया है। फिर दो-दो एकड़ जमीन देने वाला तैलसीदार कौन होता है?'—उसने गर्व से सबकी ओर देखा।

'यह तो ठीक कहता है'—सिरहा बोला, 'हमें दो एकड़ जमीन देकर सरकार यह बताना चाहती है कि हम सिर्फ दो एकड़ जमीन के मालिक हैं। बाकी जमीन हमारी नहीं है।'

'हां, कभी वह हमसे हमारे जंगल भी छीन लेगी।'

'पट्टा देकर सरकार गांव के दो आदमियों के बीच फूट पैदा करना चाहती है।'

'यह नहीं हो सकता।'

'हम दो एकड़ जमीन नहीं ले सकते।'

'यह सारी जमीन हमारी है।'

'हम इस पूरी धरती के मालिक हैं।'

'जहां चाहेंगे रहेंगे। जहां चाहेंगे खेती करेंगे। जो चाहेंगे करेंगे।'

'तो फिर इस पट्टे का क्या होगा ?' झालरसिंह बोला।

हिरमे ने कहा, 'यह पट्टा नहीं हमारे गले की फांसी है। हमारे गांव में फूट डालने के लिए एक चिनगारी है। एक भारी पाप है और लिंगो हमें कभी माफ नहीं करेगा।' उसने सरकारी पट्टे को फाड़ दिया और उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए। उसकी देखादेखी सिरहा ने भी यही किया। पट्टों को फाड़कर उन दोनों ने चैन की सांस ली।

हबका बोला, 'हम इसका पता लगाएंगे। यह हुक्म किसने दिया और क्यों दिया ?'

'हुक्म कौन देगा, राजा ने दिया होगा !' झालरसिंह बोला।

'नहीं, आजकल राजा के ऊपर गोरे बैठ गए हैं। सुना है राजा ने उन्हें राज चलाने के लिए बुला लिया है।' हिरमे ने कहा।

'तभी तो यह तैलसीदार आया था।'

'हां भाई।'

'पहले तो यहां कोई और आता था।'

'यह गोरों का आदमी है।'

'हम गोरों से जाकर मिलेंगे और उनसे कहेंगे कि वे हमारे यहां से भाग जाएं।'—हेलमा ने जोश दिखाया।

हबका ने उसकी पीठ पर हाथ मारा, 'जरा धीरेऽऽ।' हेलमा चुपचाप दबकर बैठ गया।

हबका ने कहा, 'हम अपने गांव में जाकर इसकी चर्चा करेंगे गायता। नरायनपुर के मांझी से भी बात करेंगे और फिर हम सब अन्तागढ़ के परगना-मांझी से मिलने चलेंगे। मुझे तो लगता है कि यह नई सरकार जरूर कोई चाल चल रही है।'

मांझी की यह बात सारे गांव ने मान ली। सबके मन में यह बात घर

कर गई कि इन पट्टों के पीछे कोई न कोई चाल है । इनके द्वारा सरकार उन्हें लूटना चाहती है । उनकी आजादी में खलल डालना चाहती है । जो अधिकार उन्हें उनके देवता लिंगो ने दिए हैं, वे अधिकार ये आदमी छीन रहे हैं ।

हवकामासा और उसके साथी तैयार हो गए । गढ़ बंगाल के सब लोगों ने उन्हें बिदा दी । सब एक दूसरे के गले लगे । सबने एक दूसरे को जुहार की। घोटुल के चेलिक और मोटियारियों ने नेतानार के घोटुल के उन सारे सदस्यों के नाम संदेश कहे जिन्हें वे जानते थे ।

गायता और सिरहा हबका और उसके साथियों को भेजने गेंवड़े तक आए। हबका ने उन दोनों को धीरज बंधाया । हिरमे को बहुत समझाया और कहा, 'हम भी सुलकसाए की खोज करेंगे हिरमे, और जब तक वह न मिलेगा चैन न लेंगे । हम गांव-गांव संदेश भेजेंगे । कहीं तो वह मिलेगा । तुम चिन्ता न करो, उसके बारे में बुरा मत सोचो । मेरा मन कहता है वह अच्छा है, उसे कुछ नहीं हुआ ।'

'तुम्हारी बात बड़े देव सच करें मांझी'—हिरमे की आंखें फिर छलछला आईं ।

'सच होंगी गायता, बिलकुल सच होंगी····और हम पट्टे के बारे में भी चर्चा करेंगे । जरूरत पड़ेगी तो तुम्हें खबर करेंगे ।'

'जरूर, करदेंगल[1] तुम्हारी रच्छा करें । तुम सब खुसी-खुसी घर पहुंच जाओ ।'

हिरमे और हबका, दो गांवों के दो सरदारों ने अंतिम बार जुहार की और दोनों ने आंसू भरी आंखों से एक दूसरे को बिदाई दी ।

९

समय निरंतर गतिशील है । धरती की धुरी अड़ सकती है और उसका घूमना रुक सकता है, परन्तु समय कभी नहीं रुका और न कभी रुक सकता है ।

---

१. जंगल का देवता

लगता है कल ही कारा पाण्डुम[1] का त्योहार मनाया गया है। आज इरपू पाण्डुम[2] आ गया। सारा गांव करदेंगल की पूजा के लिए तैयार हो गया। मातुल[3] के पास ही करदेंगल का निवास है। पेरमा मुर्गी और बकरी के बच्चों को संभालकर वहां पहुंच गया। भैंसा पहले ही बांध दिया गया था। गायता और सिरहा भी आ गए और इस तरह धीरे-धीरे सारा गांव जमा हो गया।

घोटुल के मोटियारी और चेलिक नये लिबास में थे। हर मोटियारी के गले में रंग-बिरंगी मालाएं थीं और बालों में पड़िया[4], उनके प्यार की अमर निशानी। हर मोटियारी इन्हें गर्व से लगाती है। जिसके जितने प्रेमी होते हैं, वह उतनी ही ज़्यादा पड़िया खोंसती है। उसकी सुन्दरता में चार चांद लग जाते हैं। गांव की प्रत्येक मोटियारी खूब सजी थी, पर महुआ ने कोई सिंगार नहीं किया। एक छोटी-सी पड़िया भर वह खोंसे थी पर बाल तब भी बिखरे थे। वह सबसे दूर खड़ी थी और उसकी नज़र नीचे ज़मीन पर अटकी थी।

गांव के चेलिक अपने आप उचट रहे थे। हर चेलिक ने अपनी पीठ पर तीर और तरकस बांध रखे थे। घुटने तक पैरों में छाल का एक विशेष कपड़ा वे बांधे थे। उनके गले डगरपोल[5] से चमक रहे थे और कानों में पीतल के कुण्डल झूल रहे थे। सबके शरीर में फुर्ती थी।

पेरमा ने करदेंगल की पूजा की। धूप दिया, दीप जलाया। एक-एक मुर्गी उठाकर उनकी गर्दन तोड़नी शुरू कर दी। दो-चार बकरों का खून चढ़ाया और फिर भैंसे की गर्दन में तेज़ धार का चमकता फरसा चला दिया—खच्च खच्च ऽऽऽ। वह ज़मीन पर लोटने लगा। मातुल को भैंसे के खून से नहलाया गया और इसके साथ ही मोटियारियों ने अपने गले खोल दिए :

दादा ले ! दादाले,
ओरी ओरी सिंगार।
बानी बानी पुंगार।

---

१. फरवरी में मनाया जाने वाला मड़िया त्योहार। इसके पूर्व घास-बांस आदि जंगली चीज़ों को नहीं काटा जाता।
२. मार्च में मनाया जाता है; महुआ के फूल बीनने का पहला उत्सव है।
३. गांव की देवी ४. लकड़ी की कंघियां
५. मर्दों के पहनने की गले की माला

गीत चलता रहा और पेरमा देवता को खुश करने के लिए पूजा में खो गया। सिरहा ने भी जंगल के देवताओं की याद की।

पूजा खतम हुई तो गायता ने झालरसिंह की कपाल पर सबसे पहला तिलक लगाया। महुआ ने देखा तो फूट पड़ी। उसने अपनी दोनों हथेलियों से चेहरा ढक लिया। सुलकसाए की याद उसे सहसा आ गई थी। एक महीना हो गया, उसका कोई पता नहीं। किसीने कोई खबर नहीं दी। आज वह होता तो यह टीका उसकी कपाल पर लगता। सुलकसाए महुआ की हर धड़कन में बसा था। उसने अपना सारा प्रेम उसके लिए उड़ेल दिया था। उसने एक हिचकी ली और हथेली अलग कर देखा—जलियारो, झालरसिंह के पास जाकर खड़ी हो गई थी। वह हंस रही था। झालरसिंह उसके गले में हाथ डाले था। दोनों धीरे-धीरे बातें कर रहे थे। महुआ यह न देख सकी। उसके मन में इन दोनों के प्रति क्रोध उमड़ा, पर बिना कुछ कहे वह वहां से चल दी। उसने देखा, सामने का छिवला नंगा खड़ा है। उसकी टहनियों में लाल-लाल फूल चमक रहे हैं। उसने आंख भरकर छिवले के इन फूलों को देखा। छिवला का भी झाड़ उसे अपना साइगुती जान पड़ा। उसने सोचा, इसका भी प्रेमी बिछुड़ गया है, तभी तो यह जल रहा है। थोड़ी देर उसे देखने के बाद वह अपने घर की ओर चल दी। उसे लगा कि उससे ज़्यादा सच्चा प्यार इस छिवले की झाड़ का है। वह कम से कम जलकर दुनिया को अपने मन की बात तो बता देता है। और वह, वह इतनी बेबस है कि दुनिया के सामने रो भी नहीं सकती। अपनी पीड़ा किसीसे कह भी नहीं सकती।

गायता ने झालरसिंह को तिलक लगाया तो उसकी भी आंखें भर आईं। उसने कांपते हाथों से एक-एक कर सारे चेलिकों को तिलक लगाया और चुपचाप वहां से चला गया। पेरमा और सिरहा उसका दुःख जानते थे। किसीने उसे नहीं रोका।

जवान चेलिकों ने सिरहा से विदा मांगी। गांव के दस चेलिक शिकार के लिए तैयार थे। हर साल यह समय आता है। हर गांव के हट्टे-कट्टे चेलिक शिकार के लिए निकलते हैं। वे जंगल-जंगल भटकते हैं और छोटे-से लेकर बड़े से बड़े जानवरों को मारते हैं। शिकार करने में उनमें एक होड़-सी लगती है। कभी-कभी एक ही जंगल में दो-चार घोटुल के शिकारीदल मिल जाते हैं। फिर

क्या है, सब मिलकर एक हो जाते हैं। जंगली जानवरों का दर्प चकनाचूर करने में भिड़ जाते हैं। फागुसेंगरा के इस मौसम में सारे जानवर घबड़ा जाते हैं और अपनी रक्षा करने भागते फिरते हैं।

सारे चेलिकों ने करदेंगल को जुहार की और पाटा गाते गेंवड़े से आगे बढ़ गए।

चीखल माटी करिया मामा,
करीगिर कारीगिर शिकारी शिकारी।[1]

यहां मातुल के पास खड़ी मोटियारियां अपने-अपने मन में चेलिकों की सफलता की कामना कर रही थीं। उनमें से हरएक का प्रेमी जंगल जा रहा था। वे देवता से मन ही मन मनौती मानतीं और गले से सुर छेड़तीं :

कैना का ग़ुलेल दाइ,
कैना का कोरी वो।
दाइ सुना सुना कैना का गुलेल।
वांस के तो गुलेल बाबू
सन सुतरी डोरिगा बापू.......।
हो, कैना का गुलेल दाइ।[2]

राउघाट की पहाड़ी पर वसन्त मेघपरी की तरह उतर आया था। सागौन के झाड़ उसके स्वागत में सिर ऊंचा किए खड़े थे। वे अपने कपड़े छोड़ चुके थे, ताकि बयार को हांकता बसन्त जब आए तब वे बिना किसी अवरोध के उसका स्वागत कर सकें। बसन्त तब उन्हें प्यार से गले लगाएगा और नये कपड़े देकर जाएगा। छोटे-छोटे झाड़ भी उसके स्वागत के लिए तैयार थे। पलाश ने तो सारे जंगल में आग लगा दी थी। वह दूर से हर आदमी भी आंख पकड़ लेता था, मानो सबसे चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा था कि मेरे पूरे शरीर में विरह

---

१. शिकारगीत है—चिकनी मिट्टी मामा के काले रंग की तरह है। शिकारियो, अपनी बन्दूक संभालो।

२. गुलेल काहे की बनी है मां, रस्सी काहे की बनी है? बांस की गुलेल है और सन की सुतरी की रस्सी है।

की आग लगी है। मेरा पिरेमी बसन्त आ रहा है और अपने सुखद स्पर्श से मेरी आग बुझा देगा। मैं उसका स्वागत करने खड़ा हूं। आम बौरा गया था। पागल होकर खुद प्रेम और तरुणाई के गीत गाता था। उसकी छाती पर बैठी कोयलिया 'कुहू कुहू कुहू कुहू कू कू कुहू' की रट लगाए थी। कुहू कूहू—यानी तू कौन है ? तू कौन है ? इस नये मिहमान को देखकर वह भी पागल थी। एकाएक यह कौन आ रहा है ! दबे पैर और धीरे-धीरे, जिसने आते ही सबको बिसरा दिया है, सबको दीवाना बना दिया है। जो अपनी नई तान और नये गान से धरती को जगा देता है।

झालरसिंह ने राउघाट की इन पहाड़ियों को देखा। नरवा और झरनों को देखा, जो दूसरों को पानी देते थे आज खुद पानी के लिए तरस रहे थे। वे शायद बसन्त को प्यास से तड़पाना चाहते हैं, क्योंकि प्यास ही तो प्रेम को जन्म देती है। उसमें प्यास न जगे तो शायद वह बिना प्रेम किए इन जंगलों से निकल जाए।

झालरसिंह ने अपने सब साथियों की ओर देखा। शिकालगीर ने कहा, 'जगह अच्छी है झालर, दो ओर नाला, बीच में अर्मा, शाल, इतुममरा[1] और महुआ की झाड़ों के बीच जरिया और करौंदा की झाड़ियां ! सामने लहराती पहाड़ी, घाटियों और खन्दकों से भरी। बीच का यह छोटा-सा मैदान, बिलकुल कटोरी बन गया है रे ! कहीं से कोई जानवर निकले, यहां आकर रहेगा। बस, यहीं एक फंदा लगा दें। देख, फिर कितने अकड़ाल[2], अर्जाल[3] और सोरी फंसते हैं।'

'ठीक है शिकालगीर, तेरा तो नाम ही बांका है,' गूमा बोला, 'पर देख मुझे तो एक अर्जाल चाहिए। जिन्दा पकड़ूंगा उसे और गांव ले जाऊंगा और वह जिम्मे, जो मुझसे अकड़ी रहती है न, इसके तमाशे देखकर पिरेम करने लगेगी। एक बार उसके मन में पिरेम भर जाग जाए, फिर देखना कैसा तड़पाता हूं उसे !'

'और मैं तो वर्कार[4] पकड़ूंगा। देखना फिर तेरे अर्जाल पर क्या धावा करती है, सोरी की मौसी है न !'

---

१. कुरलू का झाड़ २. जंगली सूअर ३. रीछ ४. जंगली बिल्ली

'और मैं, सांभर मारूंगा। उसका मीठा मांस हम सब खाएंगे और चमड़ा··· ।'

'छोड़ रे, चमड़े का क्या करेंगे, मैं तो ककरांझ[1] फंसाऊंगा जो दिन भर चिल्लाएगा—ती तु त् त् र ऽ ऽ ऽ, तीतु त् त् र् र्।'

'क्यों झगड़ते हो रे ? जिसे जो चाहिए सब मिलेगा।' झालरसिंह बोला, 'हम तो शिकार को निकले हैं न। फिर राउघाट की यह पहाड़ी ! यहां कमी किस बात की है !'

'हां ऽ ऽ ऽ' सब बोले।

'पर देखो,' झालर ने कहा, 'तुम्हें याद है, परकी साल हम यहीं आए थे। सुलकसाए ने कितना भारी सोरी मारा था !'

'हो ऽ ऽ ऽ ओ ऽ ऽ ऽ,' शिकालगीर ने कांपते कहा, 'न भाई, कहीं ऐसे सोरी से इस बरस मुठभेड़ हुई तो हमारी जान निकल जाएगी !'

'हां शिकालगीर,' गूमा बोला, 'सोरी था या मौत का पंजा। दहाड़ता आया और फन्दा पर से कूदकर सुलकसाए पर क्या झपटा था ! सच रे, मेरी तो आंखें बन्द हो गईं, पर वाह रे, सुलक··· इस साल कौन हमें बचाएगा ?'

झालरसिंह ने ज़मीन पर पैर पटका तो एक बड़ा-सा क़ांटा उसके तलुए में चुभ गया—'स्सी ई ई ई ई !' पैर उठाकर उसने कांटा निकाला तो खून बहने लगा।

'देखो रे, खून कर दिया।'

'किसने, सोरी ने ?' गूमा उसके पास आ गया।

'मजाक करता है,' झालर बोला, 'सोरी दिन में कहां रखा है। खून तो इस कांटे ने निकाला है। और क्यों रे, मुझे डर बताता है। सोरी को आने दे भला, देखना इस बार उसे क्या पछाड़ता हूं !'

झालरसिंह ने थोड़ी धूल उस घाव में भर दी। सब लोगों ने अपने तीर-तरकस उठाकर नीचे रख दिए और कटोरीनुमा मैदान में फन्दा बिछाने में लग गए। एक घंटे में मिहनत के बाद फन्दा लग गया। आम के झाड़ के नीचे झालरसिंह ने सबको इकट्ठा किया और सांझ होते ही कौन कहां छिपेगा, क्या

---

१. बड़ा तीतर

करेगा, सब समझाया। सबको अपना काम ठीक तरह से करने के लिए उसने सावधान किया। बोला, 'देखो, इस साल कोई ऐसा शिकार करो कि जब हम उसे लेकर अपने गांव पहुंचें तो सब देखकर दंग रह जाएं।'

सबने झालरसिंह को आश्वासन दिया कि वे अपनी तरफ से पूरी कोशिश करेंगे।

अरे तीना ना मुर नाना रे ना ना
ना मुर नाना हो हो
तीना ना मुर ओ नाना
ना मुर ना हो, तीना ना मुर
नाना हो ना मुर ना
हुर्रे हुर्रे हुर्रे
हुर्रे हुर्रे हुर्रे।

कई आवाज़ें पूरे जंगल में गूंज रही थीं। झालरसिंह ने कान खड़े किए और साथियों से कहा—सुनो भला, कोई गा रहा है :

तीना ना मुर नाना तीमुर ना हो ओ ओ।

और यह आवाज कैसी—हुर्रे हुर्रे हुर्रे ! सबने चारों तरफ देखा। दिखाई कुछ न दिया, पर आवाज़ पास आ रही थी। धीरे-धीरे वह काफी पास आ गई और गाना साफ सुनाई देने लगा :

हो भालू केतो डेरा रे हो
कहां ओकर डेरा,
हो भालू केतो डेरा रे हो ओ ओ।

झालरसिंह ने देखा, पच्छिम से करौंदों की झाड़ियों को चीरता एक दल चला आ रहा है। सब उसे देखने लगे। देखते-देखते दल बिलकुल पास आ गया। पास आते ही दोनों तरफ से एक ही आवाज़ निकली—हुर्रे हुर्रे हुर्रे ! सब एक दूसरे को जानते थे। सबने एक दूसरे से जुहार की। एक दूसरे को गले लगाया। यह दल बिंझली का था। दोनों दल के लोगों ने एक दूसरे की कुशल पूछी। गांव भर के समाचार जाने। बिंझली के दल का नेता तातीमासा था। उसने सबसे

पहले सुलकसाए के बारे में पूछा। सुलक गांव छोड़कर भाग गया है, इसकी खबर उस गांव तक पहुंच चुकी थी।

'क्यों रे झालर, उसका कुछ पता लगा ?'

'नहीं ताती, बहुत खोज की परन्तु वह नहीं मिला, मुझे तो लगता है उसने अपनी जान दे दी है।'

तातीमासा ने पास आकर उसकी पीठ ठोंकी, 'उसका साथी होकर ऐसा कहता है !'

'कहता नहीं ताती, बड़े देव उसे बचाएं, पर अभी तक तो उसका पता ही नहीं मिला।'

'पता लगाने की कोशिश नहीं की, यह क्यों नहीं कहता !'

'अरे ताती, तूने देखा नहीं आंखों से, हमारी बात क्या मानेगा, गढ़ बंगाल और नेतानार के आदमियों ने मिलकर उसको छान डाला पर वह कहीं नहीं मिला।'

'कहां-कहां देखा था, उसे ?' तातीमासा के इस प्रश्न पर झालरसिंह चौंक गया। बोला, 'वहीं, सारे नदी, पहाड़, खेत, खलिहान, झाड़ियां और···।'

'हां, और नाम गिना।' तातीमासा ने अपनी गर्दन बाईं ओर झुका ली थी, 'तुम सब लोग उससे जलते हो झालर, तुम सब उसकी जान लेना चाहते हो। जैसी उसकी डाइन सौतेली मां सत्ताय वैसे ही तुम सब लोग।'

'क्या बात करता है रे,' झालर ने सीना फुलाया, 'वह हमारा है और हम उसकी फिकर न करेंगे, क्यों न ?'

'कल नरायनपुर के हाट में मरदपाल का हनगुण्डा मिला था। उसने बताया है कि सुलकसाए एक रात वहां रहा है।'

तातीमासा की इस बात को सुनकर झालरसिंह और उसके सारे साथी चौंक गए।

'वहां आं आं !' शिकालगीर ने आश्चर्य से पूछा।

'हां, तुम लोगों ने उसे गांव से निकाल दिया तो बेचारा वहां क्या करता ?'

ताती की बात सुनकर झालरसिंह ने उसका हाथ पकड़ लिया। बोला—'चल नीचे बैठ, तू शायद पूरा किस्सा नहीं जानता !'

सब नीचे बैठ गए। ताती ने कहा, 'मैं सब जानता हूं झालर, तुम्हारे गांव

में वह चुड़ैल सत्ताय जीती-जागती बैठी है और तुम लोग चुप हो !'

'हम क्या करें ताती, वह तो गायता की रखैल है ।'

'गोली मारो ऐसे गायता को और उसकी रखैल को । सुलकसाए जैसा ही ग। हर गांव में होता है क्या !'

'अच्छा तो तू सुन लेना ताती कि उसे गोली लग गई,' शिकालगीर ने छाती पर अपनी मुट्ठी मारी—'मैं उसे गोली मारूंगा ।'

'चुप रह'—झालरसिंह ने डांट दिया । तातीमासा की ओर देखकर बोला, 'तो तुम जानते हो ताती कि वह कहां गया है ? भरोसा रखो, हम सब उसे खोजने में अपनी जान तक दे देंगे ।'

'ठीक तो नहीं जानता झालर । मरदपाल का हनगुण्डा कहता था कि सुलकसाए बड़ा दुःखी था, वह कहता रहा है कि अब उस गांव को लौटकर नहीं जाएगा ।'

'पर वहां से वह गया कहां ?'

'दक्खिन की ओर । उसने जगह का नाम किसीसे नहीं बताया । मरदपाल के लोगों से कहता रहा है कि जहां जी चाहेगा जाऊंगा घूमता-फिरता । हो सका तो अपनी प्यारी आवा के पास जाकर उससे मिलूंगा और जी भरकर रो लूंगा, ताकि मन हलका हो जाए । हां, वह महुआ की चर्चा वहां जरूर करता था । कहता था, 'और कोई तो नहीं, उसकी याद नहीं बिसरती । कहीं ठिकाना लग जाए तो उसे जरूर खबर कर दूंगा ।'

सुनकर झालर को संतोष हुआ । बोला, 'वह जरूर दन्तेवाड़ा गया होगा ताती । मातल तुझे लम्बी उमर दे, उसका पता बताया तूने । उसे कुछ नहीं हुआ, वह जिन्दा है तो एक न एक दिन जरूर मिलेगा ।'

अर्री ढल गई थी । बिझली के इस दल ने उनसे विदा ली और राउघाट की दूसरी पहाड़ी पर अपना फन्दा लगा दिया ।

रात आई और चली गई । झालरसिंह और उसके साथी फन्दा लगाए, तीर-कमान साधे सतर्क बैठे रहे, पर कोई जानवर नहीं आया । दो लहकोरी[1] के बच्चे भर फंदे में फंसे थे तो सवेरे उनकी टांग पकड़कर झालरसिंह ने गुस्से से

१. सियार

उन्हें दूर फेंक दिया। वे 'हुम्रा हुम्रा म्रा म्रा' करते भाग गए। इस बार पहली बार इस दल को खाली हाथ लौटना पड़ा था। झालरसिंह चिन्ता में था—जलियारो क्या कहेगी ! गांव के और लोग क्या सोचेंगे—मैं निकम्मा हूं ! सुलकसाए के बाद गांव में कोई ऐसा नहीं है जो उसकी बराबरी कर सके ! इसी चिन्ता में उसने अपने साथियों को फटकारा और अलवा-जलवा बका तो सब बिगड़ गए और गांव की ओर चल दिए। सारे लोग मुंह लटकाए किसी तरह गढ़ बंगाल पहुंच गए। असफलता ने उनका एक-एक डग चलना दूभर कर दिया था।

बरस भर का त्यौहार और गांव के चेलिक खाली हाथ लौटे। गायता गेंवड़े में उनके स्वागत के लिए खड़ा था। घोटुल की मोटियारी भी थीं। सब अपने-अपने चेलिक का रास्ता हेर रही थीं और अपने-अपने चेलिक की वीरता का गुणगान करती थीं। पूरे दल को मुंह लटकाए खाली हाथ आते देखा तो गायता सन्न रह गया। यह क्या ! यह तो बड़ा अशुभ है। गांव के दस जवान जंगल गए और किसीके हाथ कुछ नहीं लगा ! सब कायर और निकम्मे निकले ! इस गांव के चेलिकों ने शिकार की सामूहिक प्रतियोगिता में सदा विजय पाई है। स्वयं गायता हिरमे अपने समय का बहुत बड़ा शिकारी रहा है। उसने उतरे मन से इस दल का स्वागत किया। मोटियारियों के मन भी गिर गए थे। अभी-अभी वे बड़ी-बड़ी बातें कर रही थीं। पर सबके प्रेमी कायर निकले।

सबसे ज़्यादा दुःख जलियारो को था। पहली बार झालरसिंह को नेता बनाया गया था। उसके बारे में उसने बड़ी-बड़ी बातें की थीं और अनजाने ही वह कई जगह सुलकसाए से झालरसिंह को अधिक अच्छा शिकारी बता चुकी थी। इसीलिए उसे सबसे ज़्यादा दुःख था। जब किसीका गर्व चूर होने लगता है तो वह कई तरह से अपनी खीज मिटाता है। जलियारो ने स्वागत करने के बदले झालरसिंह को डांट पिलाई, 'नेता बनने की शौक करता है ! काम सिपाई के भी नहीं कर पाता। तुझे सरम आनी चाहिए।'

'मैं क्या करता जलिया ! जंगल में कोई जानवर ही नहीं आया।'

'राउघाट की पहाड़ी और जानवर न आयें !' जलिया ज़ोर से हंसी, 'वहां तो दिन दहाड़े सोरी मिलते हैं रे।'

'नहीं जलिया' भूरी बोली, 'झालर को देखकर कोई अपनी गुफा से ही नहीं निकला होगा।'

झालरसिंह झल्ला गया, 'चुप रहो। गांव में जाने दोगी या...।'

'जरूर जाइए सेनापति जी, गांव का नाम तुमने उजागर जो किया है।'

जलयारो ने अपनी सहेलियों की ओर इशारा किया, 'चलो साइगुती, इन औरतों की आरती उतारें; मरद के गुण तो इनमें दिखे नहीं।' सारी मोटियारियां एक साथ खिलखिलाकर हंस पड़ीं। सारे चेलिक झेंप गए। किसीकी हिम्मत नहीं हुई कि इनकी बात का कोई जवाब दे।

गायता की चौपाल के पास चेलिकों का दल ठहर गया। यहीं मोटियारियां खड़ी हो गईं। झालरसिंह ने एक बार फिर सारी मोटियारियों को देखा। उनमें महुआ नहीं थी। उसने गायता से महुआ के बारे में पूछा तो उसने बताया कि वह तो अब लोंन ही से नहीं निकलती। दिन-रात सुलकसाए के बारे में सोचती है। पयाल[1] भर राजामहल में बैठी रहती है।

'हां झालर,' जलियारो न कहा, 'सुलक का कुछ पता जल्दी लगाओ वरना महुआ अपनी जान दे देगी। वह दिन भर राजामहल की परछी में बैठी रहती है और झिरिया का नाम लेकर अपने आप कुछ बकती है!'

'पागल हुई है वह,' झालर बोला, 'सुलकसाए तो बड़े आराम से है। वह यहां व्यर्थ उसके लिए कलपती है।'

'क्या! सुलकसाए आराम से है?' गायता ने झालरसिंह के दोनों कंधे पकड़कर ज़ोर से खींचे, 'क्या तुम्हें वह मिला था? क्यों शिकालगीर, तुम्हीं बताओ।'

'नहीं दादाल, हमें मिला तो नहीं पर राउघाट में बिझली के चेलिक भी शिकार खेलने आए थे। वे बता रहे थे कि सुलकसाए उस दिन यहां से भागकर मरदपाल गया था और वहीं रात ठहरा था।'

'मरदपाल गया था!' हिरमे को जैसे बड़ा सहारा मिल गया, 'फिर?'

'फिर वह कहां गया पता नहीं, पर वहां के हनगुण्डा से कहता था कि वह घूमता-फिरता अपनी आवा के पास जाएगा।'

'लिंगो उसे सहारा दे। वह किसी तरह वहां पहुंच जाए।' हिरमे को बड़ा

---

१. दोपहर

संतोष मिला। वह वहीं से चिल्लाता सिरहा के घर पहुंच गया। उसने महुआ को आवाज़ लगाई, 'महुआ ! सुलक मिल गया, सुलक मिल गया महुआ, मिल गया !'

'मिल गया, कहां है ?' महुआ नाच उठी। हिरमे ने झालर की ओर इशारा कर दिया और वह वहां से चला गया। महुआ झालर से जाकर लिपट गई, 'कहां है मेरा सुलक, झालर ! बड़े देव तुझे लम्बी उमर दें।'

झालरसिंह ने सारी बात बताई और जब महुआ ने यह सुना कि वह अब भी उसकी याद करता है तो उसकी आंखों से आंसू निकल आए। वह किसीसे कुछ न कह सकी। वह इस संसार में है यही क्या छोटी बात थी ! जब वह ज़िन्दा है तो कभी न कभी ज़रूर मिलेगा, इसका महुआ को पूरा भरोसा था।

उस रात जब सब घोटुल में मिले तो शिकालगीर ने तातीमासा की वह बात छेड़ी जो उसने सत्ताय के बारे में कही थी। सत्ताय के कारण उनके सिरदार को दुःख झेलना पड़ा। वह बोला, 'यह हमारे लिए सरम की बात है।'

'परन्तु हम सब कर ही क्या सकते हैं !' जलिया बोली, 'वह हिरमे की रखैल है और सुलक हिरमे का लड़का है। यह उनका घरू मामला है। हम लोग उनके बीच नहीं आ सकते।'

'क्यों नहीं आ सकते ! उसके कारण हमें बिझली के चेलिकों ने ढेर-सी बातें सुनाईं। हम सब जाकर गायता से कह सकते हैं कि वह सत्ताय को समझाए वरना···।'

'अब तुम लोग इसकी चिन्ता न करो। मैं देखता हूं उसे।' शिकालगीर ने कहा।

पिऊ पिऊ पिऊ—एक पीहू ऊपर आससान से उड़ गया। गुरमटिया बोली, 'आज यह क्यों चिल्ला रहा है ? पीहू की आवाज सुनकर मुझे डर लगता है।' यह हमेशा अपने प्रेमी को पुकारा करती है। पुलिस उसके प्रेमी को जेल ले गई थी और वह वहीं मर गया। वह उसीके वियोग में दिन-रात चिल्लाती रहती है।[1] 'जब उसे सुनती हूं तो मेरा मन धड़कने लगता है।'

चेलिकों ने उसकी बात पर जोर से हंस दिया। शिकालगीर उसका चेलिक

१. मुड़िया गोंड़ों की एक लोकमान्यता

था। उसीने हंसी में साथ नहीं दिया, बोला, 'चिन्ता न कर गुरमटिया, वह उड़ने वाला पंछी है और तू दो पैर की औरत है। ऐसा समय भी आया तो तेरी हालत वैसी नहीं होगी।'

दूसरा पीहू ऊपर से निकला—पिऊ पिऊ पिऊ। शिकालगीर ने एक पत्थर उठाकर उसकी ओर मारा। वह किसी कुत्ते को जाकर लगा। कयं कयं ऽ कयं कयं कयं ऽ ऽ करता वह भाग गया। शिकार में इस बार सबको निराशा लगी थी इसलिए उसकी चर्चा किसीने नहीं की। हर साल शिकार से लौटने पर दो-चार दिन घोटुल में उसीकी चर्चा होती थी। सारे चेलिक मोटयारियों को अपनी यात्रा के लम्बे-लम्बे किस्से सुनाते थे। रात को जब वे अपनी-अपनी मोटियारियों को लेकर गीकी पर सोते तो भी भुनसारा होने तक अपनी बात कहते रहते। वे उनकी बातों को बड़े प्यार से सुनती थीं। उनमें अक्सर चेलिक अपनी-अपनी वीरता का बखान करते थे। दूसरे दिन जब मोटियारी मिलतीं तो आपस में अपने-अपने चेलिकों के यही किस्से दोहरातीं थीं।

चिड़ियों के चहचहाने के पहले रोज की तरह उस दिन भी घोटुल खाली हो गया, परन्तु आज सबेरे-सबेरे सबको ऐसा समाचार मिला जिसकी उन्हें आशा नहीं थी। गांव के लोग गायता के घर जमा थे और गायता फरके पर खड़ा रो रहा था। उसके छोटे-छोटे बच्चे यहां-वहां फिर रहे थे। उनमें कोई रो रहा और कोई चिल्ला रहा था। सत्ताय खून में सनी पड़ी थी। सिरहा तरह-तरह की पत्तियों को पीस-पीसकर लगा रहा था। कल रात किसीने सोते समय उसपर टंगिया से हमला कर दिया था। घोटुल के सारे साथी शिकालगीर पर शक कर रहे थे। परन्तु शिकालगीर को बड़ा अचरज हो रहा था। उसकी चेलिक ने बिना किसीके कुछ कहे, अपनी ओर से यह बात साफ कर दी कि शिकालगीर रात भर घोटुल में ही रहा है और वह उसके साथ ही सोती रही है। यह सब उसका किया नहीं है। गांव के लोगों ने इस बात पर कम भरोसा किया। सभीको उसपर शक हो गया।

किसीपर एकाएक शक कर लेना कभी-कभी खतरनाक हो जाता है। शायद यह खतरा यहां भी सामने आता, पर घण्टे भर बाद ही वहां नरायनपुर से पुलिस आ गई। सब देखकर हैरान थे। पुलिस वालों को इतनी जल्दी कैसे पता लग गया! लोगों ने पूछताछ की। पुलिस वालों ने सत्ताय को हस्पताल ले

जाने का हुकुम दिया। वह अभी भी बेहोश थी। खून बराबर निकल रहा था परन्तु पहले से कुछ कम हो गया था। उसे एक पालकी में नरायनपुर रवाना किया गया। सबको यह सुनकर आश्चर्य हुआ कि गूमा ने उसपर हमला किया था। कहते हैं, शिकार से लौटते समय ही वह उसे मारने का निश्चय कर चुका था। परन्तु उसने अपना निश्चय किसी दूसरे से नहीं बताया। घोटुल में जब बात चल रही थी तब वह वहां हाज़िर था। उसीके बाद वह धीरे से गायता के घर चला गया। गायता और सत्ताय में उस दिन फिर झगड़ा हुआ था इसलिए गायता बाहर परछी में पड़ा था। गूमा दबे पैर भीतर चला गया और उसने पूरी ताकत से टंगिया मारी, पर अंधेरे में वह आधी तो उसकी जांघ पर लगी और आधी खाट पर। सत्ताय चिल्ला उठी तो हिरमे दौड़ा और तब उसे कोई न देख पाया था, परन्तु उसने रातोंरात नरायनपुर जाकर खुद अपने आपको पुलिस के हवाले कर दिया। उसने वह टंगिया भी ले जाकर पेश कर दी। पुलिस वालों ने बताया कि उसने बयान में लिखाया है—'मैं अपने सिरदार सुलकसाए पर हुए अत्याचार को नहीं देख सकता। सत्ताय जरूरत से ज्यादा गरम है। उसे और कोई खतम करे इसके पहले मैं ही निपट लेना चाहता था इसलिए कि मेरे बाद मेरा रोने वाला कोई नहीं है। घोटुल में भी मुझे किसी मोटियारी का प्यार नहीं मिला....।'

सारे गांव को आश्चर्य हुआ। गूमा बड़ा सीधा था। अभी उमर भी पन्द्रह-सोलह बरस से ज़्यादा नहीं थी। अपने सीधेपन के ही कारण वह सचमुच किसी भी मोटियारी को अपने प्रेम में फंसा नहीं सका था। उनका साथ जितना घोटुल में देना चाहिए, उसने दिया था। उसके बाहर किसीसे उसने लगन नहीं लगाई। इसीलिए वह सभीको प्यारा था। सारे चेलिक और मोटियारी उसे अपना मानते थे। शिकालगीर को इस समाचार से सबसे ज़्यादा खुशी हुई। वह जो सोचता था, पूरा हो गया। पर अभी भी उसके ज़िन्दा रहने की आशा है, इसका उसे ज़रूर दुःख था। गांव के कुछ लोगों को लेकर सिपाही चले गए। इनमें हिरमे भी था। पुलिस इनके बयान लेगी और फिर मामले की छानबीन करेगी। हिरमे के छोटे-छोटे बच्चों को देखने की जिम्मेदारी सिरहा और उसकी बेटी महुआ ने स्वीकार कर ली थी। महुआ को जो चिन्ता पिछले एक माह से सता रही थी, अब कुछ कम हो गई थी। उसका बेकार सोचना बन्द हो गया था। इसलिए उसके चेहरे पर दुःख की जो गहरी परत छा गई थी, छंट गई और वह फिर

घुंघचियों के लाल दाने की तरह चमकने लगी।

नरायनपुर के 'डागधर' ने सत्ताय को बचाने की पूरी कोशिश की। सब तरह की दवा-दारू दी गई, पर वह होश में नहीं आई। पुलिस उसका बयान लेना चाहती थी। हिरमे उससे बात करना चाहता था। वह उसके सिर पर हाथ फेरता और बार-बार कहता, 'सत्तो, मेरी सत्तो, एक बार तो देख ले।' 'डागधर' ने उसे पकड़कर बाहर कर दिया। मरीज़ के पास रोना मना है। कई घंटों की कोशिश उस दिन रात को बेकार हुई और सत्ताय ने दम तोड़ दिया। हिरमे चीख उठा। गांव भर खबर भेजी गई। सारे गांव में यह समाचार हवा की तरह फैल गया। किसीका मुंह नहीं खुला पर भीतर से सभी खुश थे। महुआ और सिरहा ने भी जब यह समाचार सुना तो वे कुछ बोले नहीं। बच्चे दिन भर से परेशान कर रहे थे और महुआ सब कुछ भूलकर उन्हें चुप करने में लगी थी। छोटी लड़की उससे बार-बार पूछती, 'आवा कहां गई? वह कब आएगी?'

महुआ उसके सिर पर हाथ फेरती और कहती, 'आवा घूमने गई है बच्चे, अभी आएगी।'

दूसरा रोता, 'अभी तक नहीं आई, तुम जाकर बुला लाओ न।'

सिरहा सुनता तो दुःखी होता। सत्ताय कर्कशा थी। गांव भर उससे परेशान था। किसीकी हमदर्दी उसने नहीं पाई। पर इन लड़कों ने किसीका क्या बिगाड़ा है! इन्हें क्यों सज़ा मिलती है? करे कोई और भरे कोई! सिरहा को गूमा पर क्रोध आ गया, 'मारने के पहले इन बच्चों के बारे में तो उसे सोच लेना था!'

महुआ को बच्चे खिलाते-खिलाते अपनी मां की याद आ गई थी। वह इस संसार में नहीं है। वह होती तो···! मां की एक धुंधली-सी तसवीर उसके मन में उतरी। उसने अपनी हिरनी जैसी छोटी-छोटी आंखों से उन बच्चों को देखा—बिना आवा के बच्चे! 'ओफ!' उसके मुंह से आह निकली—'अरे पापी, सत्ताय ने गांव का बिगाड़ा था, इन बच्चों ने तो नहीं। इनका क्या होगा? हिरमे फिर दूसरी मिहरिया लाएगा और इन बच्चों को सुलकसाए की तरह मां के पिरेम के लिए छटपटाना पड़ेगा!'

'सुलक······!' उसका नाम क्या याद आया, महुआ के मन में आग लग

गई। आज सुलक होता तो ···वह होता तो गूमा खून करने क्यों जाता ! इस बार उसने गूमा का एक पवित्र रूप सामने देखा। वह सुलकसाए का सच्चा साइगुती निकला। अपने साथी का बदला उसने लिया। सुलकसाए आज होता तो वह गूमा को जहल से छुड़ाने में अपनी जान की बाजी लगा देता, पर अब उसका कौन बैठा है ! कौन उसे छुड़ाने जाएगा ! कौन उसकी तरफ गवाही देगा ! सत्ताय से तो सारा गांव नाराज था पर अब गूमा को छुड़ाने कौन आगे आता है ! शायद कोई नहीं·······!

गांव के तीन-चार लोग नरायनपुर चले गए। वहां 'डागधर' ने लाश को चीर-फाड़कर देखा और फिर उसे हिरमे के हवाले कर दिया। लाश लेकर सारे लोग लौट आए। लाश गायता के घर की परछी में रख दी गई।

आतुममासा ने बाहर खड़े होकर हातुरढोल[1] बजाया। गांव भर में उसके कर्कश स्वर गूंज उठे। सब लोग धीरे-धीरे वहां जमा हो गए। हनगुण्डा भी आ गया और झमको भी। झमको ने सत्ताय की लाश से कपड़ा उठाया। उसका मुंह देखा। वह तिरछा हो गया था और उसकी बड़ी-बड़ी आंखें खुली थीं, जैसे देह से निकल भागना चाहती हैं। उसने सत्ताय के चेहरे पर हाथ फेरा। हिरमे ने घर के देवता की पूजा की, फिर गांव के कुछ सयानों ने लाश उठाई। हातुर-ढोल और ज़ोर से बजने लगा। मुश्किल से पाव कोस चलना पड़ा होगा। नरवा के तीर पर मरघट था। वहां गड्ढा उरसाया गया। तब तक औरतें बराबर गाती रहीं :

चोले दादरो रोले, अइअइअइ।
ओरू बोरू राजाल रे ए ए ए।[2]

गड्ढा खुदते ही हनगुण्डा ने कुल के सारे देवी-देवताओं का स्मरण किया। एक-एक की पूजा की। एक मुर्गी की बलि दी और उसके खून से वह गड्ढा सींचा गया। फिर मृतक को उसमें सदा के लिए मीठी नींद में सुला दिया गया। सारे लोग अपने-अपने घर लौट आए।

घर आकर हिरमे ने देखा, सारे बच्चे रो-रोकर धरती आसमान में उठा

१. किसी की मृत्यु होने पर बजाया जाता है, ताकि सब लोग जमा हो जावें।
२. एक मृत्युगीत—भाइयो आओ, यह कौन राजा है ? इत्यादि

रहे हैं। वह घबड़ा गया। उसे क्रोध भी आया और वह अपने आप बकने लगा, 'क्या जानता था यह डाइन निकलेगी ! गांव भर उससे बिगड़ जाएगा और एक दिन कुत्तों की मौत मरेगी !....और मरना था तो कीड़े जैसे बच्चे क्यों जन गई वह....?' काफी देर बड़बड़ाने के बाद उसके मन में एकाएक प्यार जागा। सत्ताय का हंसता-फूलता चेहरा उसकी आंखों के सामने भूलने लगा। जब वह सबसे पहली बार मिली थी उस दिन का दृश्य उसकी आंखों में नाचने लगा। चम्पा की तरह वह महकती थी और जासोन की तरह फूली थी। उसमें प्यार का अथाह पानी भरा था। कितनी प्यारी-प्यारी बातें करती थी वह! पर दो-चार साल के बाद ही वह एकदम बदल गई। यहां हर साल मां बनने का क्रम चालू रहा और वहां उसके स्वभाव में भयंकर परिवर्तन होते गए। वह जितनी नरम थी, उतनी ही कठोर हो गई। उसमें जितना प्यार भरा था, सब विष बन गया। वह खुद नहीं जानती थी, वह क्या कर रही है। अपने लड़कों का मोह और पराई औरत से जाए लड़के की लोकप्रियता ने उसका सारा ढांचा ही बदल दिया....परन्तु वह फिर कुछ न सोच सका। झमको आ गई थी। सिरहा और महुआ आ रहे थे। सबने हिरमे को बड़ा सहारा दिया और धीरे-धीरे दिन बीतने लगे।

मरने वाला मरकर अमर हो जाता है। दुनिया की सारी बाधाओं को पार कर लेता है, परन्तु जो जीते हैं उन्हें एक जाल में वह फंसा जाता है। मृतक का रोज पूजन होना चाहिए। उसके गुणगान करना चाहिए। उसे पानी देना चाहिए फिर वह पितरों में मिला या नहीं इसकी परीक्षा करनी चाहिए। यह सब काम हनगुण्डा का है। वह बराबर करता है। दसवें दिन भोज भी दिया गया। गांव भर के लोगों ने मिलकर खूब खाया, पिया। रात को एनदाना हुआ। मनमानी लांदा ढाली। सबने सत्ताय के मरने पर दुःख मनाया। हिरमे का दुःख देखकर सारा गांव दुःखी है।

आखिर मृतक की याद में एक पत्थर लगाने का दिन आ गया। जहां उसे दफनाया गया था, सब लोगों ने नाच-गाने के साथ वहां एक पत्थर गड़ा दिया :

सोरा धारू धरती रोये देवता
नव खण्ड्र पिरथीर एले

सिंगार मालोर दिपू रोये देवा
इगाल हाय वालोर र एले ।[1]

पाटा के साथ, पत्थर में लिखे सत्ताय की ज़िन्दगी के कुछ अच्छे कारनामे उस ज़मीन में गूंज उठे। पत्थर पर उसे एक हाथी के ऊपर बैठाया गया था[2] और आसपास सैकड़ों मर्द-औरतें ताली पीट-पीटकर उसका स्वागत कर रहे थे। अपनी ज़िन्दगी में जिसने सदा कांटे पाए और लोगों की भर्त्सना सही, मरने पर उसे हाथी पर बैठने को तो मिला।

१०

सत्ताय चली गई पर हिरमे पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा। घर में छः-सात छोटे-छोटे बच्चे। चारों ओर चिल्ल-पों। रोना-धोना। न दिन को आराम और न रात को नींद। हिरमे को तब औरत की कीमत पता चली। वह औरत जो यह सब देखती है, सहती है और फिर भी हंसती रहती है। बच्चों का रोना ही शायद उसका सुख है। जो बांझ होती है, अपने करम को कोसती है। कंकाली की पूजा करती है। देवी-देवता मनाती है। जब देव प्रसन्न नहीं होते तो भूत-प्रेतों का सहारा लिया जाता है। आधी रात को वह बिलकुल नंगी पीपल के नीचे जाती है। और वहां दीप जलाकर प्रेत को बुलाती है और कहते हैं वहां से लौट-कर कभी कोई स्त्री बांझ नहीं रह पाई। देवता जहां हाथ टेक दें वहां भूत सहारा देता है। सत्ताय को इस मुसीबत से कभी नहीं गुज़रना पड़ा। जब वह हिरमे के यहां नहीं थी तब भी उसने उस घर को आबाद रखा था। यहां आते ही उसने सूने घर को चमन बना दिया। जहां घर की छत के नीचे केवल चिड़ियां चहकती थीं, आदमी के बच्चे चहचहाने लगे। पर धीरे-धीरे यह चहचहाट ऐसी बढ़ी कि हिरमे चीख उठा। सत्ताय उसे हंसकर और मुसकराकर मनाती थी,

---

१. सोलह परत दुनियां, नौं परत धरती। मनुष्य के कल्याण की यह धरती है। यहां सब मरते हैं।
२. स्मारक पर एक पत्थर लगाने की यहां प्रथा है। इस पत्थर पर कई तरह के चित्र भी बनाए जाते हैं।

कहती, 'बच्चे परमेसर की देन हैं। वे बड़े देव के औतार हैं। जहां जाते हैं भाग पलट देते हैं।'

हिरमे चुप रह जाता। 'भाग पलटने' का रास्ता हिरमे में खो जाता। वह भी क्या करे; आदमी के लिए क्या होता है। यह तो भगवान् का काम है और जो काम भगवान् का हो वहां आदमी का क्या ज़ोर! वह बच्चों का गला ही तो घोंट सकता है, पर उसका मतलब है भगवान् का गला घोंटना। देवता का प्रसाद जो मिल जाए, माथे में लगाकर चुपचाप गले में डाल लेना चाहिए। सत्ताय के जाने के बाद यह प्रसाद उसे बहुत भारी लगा। वह उसके गले की फांसी बना। उसके शरीर के हर अंग को जैसे भारी-भारी पत्थरों से भर दिया गया है। वह अब न जंगल जा सकता और न गांव में घूम सकता। गांव का गायता है। यह उसका सबसे बड़ा धरम है परन्तु वह उसे भी नहीं निबाह पा रहा। इसीलिए उसे गांव वालों पर भी क्रोध आया। गूमा को उसने बचपन से खिलाया था। उसे प्यार किया था। उसका बाप तब मर गया था जब वह नंगा धूल में लोटता था। उसके मरने के बाद हिरमे ने ही उसकी औरत को ढाढस बंधाया था। उसने गूमा को बराबर अपने लड़के की तरह माना और उसीने उसके साथ····!

गूमा की मां सारे गांव में आंसू बहाती फिरती थी। उसका लड़का जिहल में है। मुकदमा चलेगा और फिर उसे फांसी पर लटका दिया जाएगा। अकेला लड़का! वह हिरमे के पास आई। उसने आते ही तो-तीन बच्चों को एक साथ गोद में उठा लिया। उन्हें चुपाने लगी। बोली, 'हिरमे···!'

'अब क्या लेने आई है?'

'लेने नहीं देने आई हूं, गायता!'

'क्या देगी तू? तेरे बेटे ने तो मेरा सब कुछ छीन ही लिया। और छीना भी तो बुढ़ापे में। जवानी में औरत मर जाती तो दुःख न होता। औरत के मरने का क्या दुःख! मर गई तो अच्छा ही हुआ, दूसरे दिन दूसरी आ जाएगी। एक के साथ रहते तबियत ऊब जाती है। रोज पेज का पीना किसे सुहाता है, गूमा की मां! कभी तो स्वाद बदले। औरत स्वाद की बदलाहट है। मुंदरी छोड़कर चली गई थी। मेरे मुंह से आह न निकली। औरत सबसे न्यारी। साक्षात् देवी। पर···वह थी तो औरत ही न। और हर औरत एक होती है। जो औरे, और

करे वही औरत ! मगर····,' हिरमे की आंखों में अब आंसू आ गए थे,'मगर बुढ़ापे को कब किसने सिर झुकाया है गंगी। औरत भी तो जवानी चाहती है। गूमा ने ऐसे समय मुझसे सत्ताय को छीना है···गूमा····गू···मा···' उसने दात पीसे,'अच्छा है, पाप का फल भुगतेगा, कुत्ते की मौत मरेगा। सिरकार उसे नहीं छोड़ेगी। फांसी पर लटकेगा ही। बरसात में किसीका घर गिराने का मजा पा जाएगा हरामजादा···!'

गंगी ने बच्चों को नीचे बैठाल दिया और हिरमे के मुंह पर अपनी हथेली लगा दी, 'ऐसा न कह हिरमे, तू गांव का गायता है। हम सब तेरी सरन में हैं। मेरा अकेला लड़का है वह····!'

'तो मैं क्या करूं गंगी ! मेरी भी तो वह अकेली औरत थी ?'

'सो तो फिर मिल जाएगी हिरमे।'

'तुझे भी लड़का फिर मिल जाएगा गंगी, तू यहां से चली जा। मैं तेरी कोई मदद नहीं कर सकता।'

गंगी ने हिरमे के पैर पकड़ लिए। बोली, 'उसे फांसी से बचा ले हिरमे। उसने अपनी मरजी ने कुछ नहीं किया। गांव के हमजोली लड़कों ने उसे बहकाया और वह कर बैठा। तूने तो उसे अपना लड़का माना था···!'

'हां, माना था; था तो नहीं।' हिरमे ने अपने पैर छुड़ा लिए। गंगी उठकर खड़ी हो गई।

'तू अब जा सकती है'—हिरमे बोला।

'जाती हूं हिरमे, परन्तु मैं तो तुझे कुछ देने आई थी···।' हिरमे ने उसकी ओर देखा। उसकी आंखों से ओस जैसी बड़ी-बड़ी बूंदें टपक रही थीं। अधेड़ उमर में भी उसके चेहरे की झुर्रियों के बीच चमक थी। उसने अपने दोनों हाथ हिरमे के सामने फैला दिए, 'मेरा यहां कौन बैठा है रे ! तूने मेरे बच्चे को अपना बेटा माना था तो तेरे बेटे भी मेरे बच्चे हैं, हिरमे !'

हिरमे उसकी ओर देखता रहा। उसने देखा, गंगी के मासूम चेहरे में प्यार की अनगिनत धाराएं बह रही हैं। वह जैसे उसके सामने खड़ी होकर प्यार की भीख मांग रही है, मानो कह रही है, 'तेरी सत्ताय मैं हूं····मैं हूं···!'

हिरमे का चेहरा झिटी[1] की तरह फूल उठा, 'सच कहती है !'

१. लाल रंग का एक फूल

'हां, बिलकुल सच हिरमे, मेरे देवता !'

हिरमे ने अपने दोनों हाथों से उसे पकड़कर छाती से लगा लिया और थोड़ी देर दोनों आंसू बहाते रहे। उन आंसुओं की गंगा में दो निराश्रित आश्रय खोज रहे थे !

तभी महुआ वहां आ गई। उसने देखा तो उलटे पैर भागी। उसे भागते हिरमे ने देख लिया था। उसने रोका, 'आ जा बेटी, भागती क्यों है ! यह तो तेरी मां है।'

गंगी अब उसे छोड़कर बच्चों को संभालने लगी थी। हिरमे वहीं खड़ा था। उसके चेहरे पर आश्चर्य-मिश्रित भाव थे। वह न रो सकता था और न उसे हंसी आ रही थी। महुआ उसे आश्चर्य से देख रही थी।—'तुझे अचरज हो रहा है महुआ, पर सच है; गंगी अब तेरी मां है, मां है तेरी, महुआ।'

महुआ कुछ न बोली। वह गंगी की ओर देखती रही। वह गंगी, जो बड़ी लगन से उन छोटे-छोटे बच्चों को उठाकर अपनी गोद से चिपटा रही थी। बिना कुछ कहे वह चली आई।

हिरमे भी डंडा उठाकर नरायनपुर की ओर चल दिया। महुआ ने उसे घर से निकलते देखा, गंगी फरके पर खड़ी कह रही थी, 'अपने बेटे गूमा से कह देना तेरी आवा अब बड़ी खुश है। लौकी की बोला को बांस का सहारा चाहिए था, वह मिल गया है।'

हिरमे ने एक बार लौटकर गंगी की ओर देखा और फिर उसने अपने लम्बे कदम बढ़ा दिए।

सारे गांव में यह खबर फैल गई कि हिरमे ने गंगी को घर में बैठाल लिया है। तरह-तरह की बातें हुईं। लुगाई रखने में बातें ! आश्चर्य है ! ऐसे गांव में यह भी चर्चा का विषय हो सकता है। यह कौन बड़ी बात है। लुगाई रखना जितना आसान है, उतना ही छोड़ना। मन का सौदा; जब तक पटा ठीक, जिस दिन मन में खटाई आई. रास्ता बदल दिया। फिर भी यहां चर्चा थी, इसलिए कि एक तो सत्ताय को मरे अभी हुए ही कितने दिन हैं ! कल ही उसे हाथी पर बैठालकर लोग लौटे हैं। और दूसरे, सत्ताय का हत्यारा गूमा, गंगी का बेटा ! तो क्या इस हत्या में गंगी का भी हाथ था ! क्या उसीने गूमा से सत्ताय की हत्या करवाई ! इसलिए कि उसे कोई सहारा मिल जाए ! वह भी गांव का

गायता ! इस बात ने लोगों के मन में जड़-सी जमा ली। घोटुल के वे चेलिक जो यह सोच रहे थे कि उस दिन शिकार में हुई बात पर गूमा ने हत्या कर दी है, अब दूसरे ढंग से सोचने लगे थे। हत्या करने की कसम किसीने खाई थी और हत्या कर किसीने दी। इसके पीछे जो राज़ था जैसे सब जान गए। गांव की कुछ औरतों ने गंगी को धिक्कारा। गूमा के प्रति चेलिकों में जो हमदर्दी थी, चली गई। परन्तु बात का बतंगड़ न बन सका। आखिर हिरमे गांव का गायता था। उसके इशारे पर गांव नाचता है। सब तरफ फुसफुसाहट ज़्यादा हुई, होंठ कम खुले।

गंगी के आ जाने पर महुआ को प्रसन्नता ही हुई। एक तो इसलिए कि उसे दिन भर हिरमे के बच्चों को देखना पड़ता था। वह अपने ही दुःख से दुःखी है। दिन-रात सुलकसाए की याद उसे सताती है। जब से उसने सुना है कि वह दन्तेवाड़ा की तरफ गया है, तब से उसके पैर अधीर हैं। यदि पंख होते तो अब तक तोते की तरह वह फुर्रर से उड़ गई होती। पर इतनी दूर !··· वह कैसे जाए और क्या मालूम वह वहां है भी ! दिन-रात वह सताता है। घोटुल जाती है तो वह जैसे उसे काटता है। रात को गीकी में अकेली सोती है तो सवेरे आंसुओं से वह भीग जाती है। सब वहां हंसते हैं, गाते हैं, पर महुआ की हंसी सुलक अपने साथ छीनकर ले गया है। उसके गले में जैसे किसीने कपड़ा ठूंस दिया है। जो अपनी ही चिन्ता में मरती है, मछली-सी तड़पती है, उसे हिरमे के बच्चों को देखना भारी भार लग गया था। गंगी ने इससे उसे मुक्त कर दिया। दूसरे यह कि गंगी, सुलकसाए को चाहती थी। वह सत्ताय जैसी नहीं थी। जब सत्ताय सुलक को अलवा-जलवा बकती तो गंगी बड़ी हमदर्दी दिखाती थी। एक-दो बार सत्ताय से लड़ी भी है। सुलकसाए के सिर पर वह हाथ फेरकर अक्सर कहती थी, 'मेरे हीरा, पानी बरसने दे, तेरा रंग बहाने की उसमें ताकत क्या है !' वह उसके गाल चूम लेती और अपनी छाती से चिपकाकर खुद रोने लगती। सुलकसाए ने गंगी से मां जैसा ही प्यार पाया था। इसलिए महुआ खुश थी। सुलक की राह का कांटा ही नहीं टूट गया, वह बदलकर फूल बन गया है। जब वह सुनेगा तो कित्ता खुश होगा ! उसकी खुशी की कल्पना कर महुआ खुद नाच उठती है।

गांव भर ने यह बात मानने में कसर नहीं की कि सत्ताय का खून गंगी ने ही कराया है। अपने स्वारथ के लिए उसने सब किया। इसलिए जो गांव सत्ताय

से नफरत करता था, उसके मरने पर उससे हमदर्दी जताने लगा।

हिरमे ने नरायनपुर पहुंचकर गूमा से भेंट की। लोहे की सींखचों में बन्द गूमा का चेहरा सूखकर झुलस गया था, परन्तु उसके शरीर में परिवर्तन नहीं हुआ था। शायद इसलिए कि जहल में मुफत में मन भर खाना मिलता है। यहां तो जंगलों की मौज और देवता की किरपा पर खाना मिलता था। गूमा ने हिरमे को देखा तो उसे आश्चर्य हुआ। यही हिरमे उसे खड़ा-खड़ा गाली देता था, आज मिलने आया है। उसने खींचने के अन्दर हाथ डालकर गूमा के सिर पर फेरा और उसे मां का संदेसा दिया। संदेसा सुनकर गूमा खुश हुआ। उसके झुलसे चेहरे के बीच हलकी-सी मुसकान की एक रेखा खिंच गई।

हिरमे बोला, 'चिन्ता न कर गूमा, मैं तुझे जेहल से छुड़ाकर रहूंगा रे।' गूमा सुनकर चुप हो गया। उसकी बड़ी-बड़ी आंखों के सामने ज़रूर एक भारी प्रश्न चिह्न था। सागौन के मलगे जैसा वह खड़ा था। हिरमे मुझे छुड़ाएगा!··· सत्ताय के हत्यारे को···क्यों?···पर इस प्रश्न का उत्तर उसे कौन दे! वह गंगी के संदेस में उत्तर खोजने का यत्न करता, 'लौकी की बौला को बांस का सहारा चाहिए था, वह मिल गया है।' परन्तु वह इस बात की कल्पना भी नहीं कर सका कि वह बांस हिरमे ही होगा।

हिरमे दौड़-धूप में लगा था। पुलिस के जमादार से लेकर निस्पिट्टर तक की देहरी चूमता था। बड़े परिश्रम के साथ दस-बीस जो बचा सका था, वह अपनी टेंट में खोंसे था और उसीके बल वह अफसरों को तोलने की कोशिश करता था। हर पुलिस वाले के पैर पकड़ता और उनकी धूल चाटता। पुलिस वाले उसे ठोकर लगा देते, परन्तु इन ठोकरों का उसपर कोई असर न होता। वह हर ठोकर को अपनी सफलता के लिए मील का पत्थर समझता था। जितनी ठोकर खाता उतने मील रास्ता उसने तय कर लिया, यह सोचता था। रात को घर लौटकर आता तो गंगी से बड़ी-बड़ी बातें करता। उसकी बातों को गंगी बड़े प्यार से सुनती। उसके जी की तपन बुझती। उसे लगता कि हिरमे का सहारा उसके लिए अमृत का घूंट बनकर आया है। पहले वह रोज लांदा ढालती थी। उसीके नशे में वह अपने बेटे का वियोग भूलने का प्रयत्न करती थी। अब बिना लांदा पिए जैसे उसपर नशा छा जाता था। हिरमे को वह देखती और सब भूल जाती। उसकी गोद में अपना सिर रखकर वह कहती, 'तूने एक मुर्दे में जान फूंकी है,

हिरमे। कल तक मैं सोचती थी, इस दुनिया में मेरा कौन है ! मर जाती तो ज्यादा भोगना न पड़ता। आज मरने से डरती हूं। मैं जीना चाहती हूं। अब मुझे फिर जिन्दगी से प्यार होने लगा है। मुझे लगता है, मेरी उमर कम हो गई है। तेरे हाथ में जादू है। जंगल की किसी अजानी जड़ी-बूटी का गुण तेरे ओठों में है। मेरा बुढ़ापा भाग रहा है हिरमे, मैं जवान हो रही हूं।····तू गांव का गायता है। तूने अपना धरम निबाहा है। गांव भर सुखी रहे, किसीके पैर में कांटा न गड़े, सब हंसते रहें, खेलते रहें, खाते रहें। मुझे अब गूमा की चिन्ता नहीं। जब गूमा का बाप जिन्दा हो गया है तो मां को तलफने की क्या जरूरत !'

गंगी के इन मधुर शब्दों में सुलकसाए भी खो जाता था। वह सत्ताय की मौत तो कब की भूल चुका था। उसके यहां से जैसे किसीकी लाश ही नहीं निकली। इतना ही नहीं, वह सुलकसाए को भी भूल रहा था। यदि महुआ उस गांव में न होती तो शायद वह सुलक को कभी याद न करता। वह अक्सर उसके पास आ धमकती है और रोने लगती है। कहती है, 'उसका पता लगा दादाल? किसीसे संदेसा भी तो नहीं भेजता निरदयी।' तब हिरमे भी बेटे के दुःख में डूब-सा जाता है। उसकी भी आंखें छलछला उठती हैं परन्तु महुआ के जाते ही जैसे कोई उसके आंसू एकदम सोख लेता है। चिलचिलाती धरती में जैसे पानी की बूंदें सूख जाती हैं। कभी-कभी तो गंगी से कहता, 'महुआ भी कैसी लड़की है ! एक औरत और इतना तलफे आदमी के लिए ! तलफना तो चाहिए आदमी को, औरत जिसकी पहुंच के बाहर होती है। औरत के मन की गहराई कोई नहीं जानता। उसकी थाह नापना आदमी के लिए आसान नहीं है।' गंगी सुनकर हंस देती है और कहती है, 'आदमी कित्ता भोला जीव है ! कुछ नहीं समझता। औरत में गहराई कहां होती है ! उसकी आंखें तो मन का सब भेद कह देती हैं। आदमी की गलती यही है कि वह औरत की आंखों की गहराई में उतरना छोड़-कर उसके मन में गोते लगाने कूद पड़ता है।' और यह सुनकर हिरमे हंस देता है। उसकी हंसी में गंगी डूब जाती है और जब दोनों एक साथ हंस पड़ते हैं तो दोनों एक-दूसरे में खो जाते हैं। बातचीत का रास्ता ही बदल जाता है, सोचने की दिशा ही उलटी हो जाती है। तब न महुआ के आंसू याद आते और न सुलकसाए की छाया छूने की ममता जागती। नया प्यार है, नये रंग लाता है। और कहते हैं, प्यार का असल मज़ा तब मिलता है जब उमर ढल जाती है। दो

बेबस प्रेमी पहले खीझते हैं और फिर प्यार में खो जाते हैं। खीझने के बाद जो प्यार उमड़ता है उसका मजा ही अलग है। हिरमे और गंगी दोनों बड़े देव को सिर झुकाते हैं, लिंगो को असीसते हैं, मातुल की पूजा करते हैं····जैसे दिन उनके फिरे, देवता सबके फेरे !

ओ हो ऽ ऽ ऽ हाय रे ऽ ऽ ऽ
चन्दा चमक रहि जाय
हाय रे हाय ऽ ऽ ऽ।

पूनम की चांदनी में नरवा का लम्बा कटाव चांदी की तरह चमक रहा था। लगता था, जैसे वनदेवी के स्वागत के लिए किसीने चांदी के पुंगार की परतें खोलकर बीच में सर्री बना दी है। आम की मौरों और महुआ के फूलों को छूता पवन वहां आकर बिखर जाता और घोटुल के चेलिक तथा मोटियारियों के ईपुर को सोख लेता।

गीत कण्ठों से निकलता, हवा में तैरता और सारे नाले में गूंजने लगता। गीत के हर ढलान के साथ फावड़े, कुदाल और गेंतियां रेतीली धरती की छाती पर चुभ जातीं :

छप्प् छप्प् छप्प्
खप्प खप्प खप्प
खिक्क् खिक्क् खिक्क्।

'री पेड़गी, जल्दी भर टोकनी।'
'रे बंमटा, हंसी उड़ाता है? नाक जरा तिरछी है तो क्या हुआ !'
'हि हि ई ई ई·······हा हा आ आ आ···।'
'ओय पैकी, दामनी[१] ला।'
'वह है वह, तेरे पीछे, आंधरा[२]।'
'उई ऽ ऽ ऽ दइया ! मरी रे···!'
'क्या हुआ, क्या हुआ ?'
'चिहूंटी काटता है मुरदार[३]। क्या नाखून धरे हैं बोदाल[४] के सींग जैसे,

---

१. रस्सी २. अंधा ३. नपुंसक ४. भैंस

माइलोटा कहींका !'

'हि हि ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ हा हा ऽ ऽ ऽ ऽ।'

'अरे, भूरी है रे भूरी !'

'भूरी ई ई ई।'

'यहां भी आ धमकी। उसे चैन कहां !'

'चलो, काम करो, बहरों से कौन मुंह लड़ाए !'

'और देख रे अंभोली, चिहूंटी मत काट, वरना··

'ओ हो ऽ ऽ ऽ हाय रे हाय ऽ ऽ।'

'क्या बकता है ?'

'चंदा चमक रहि जाय।'

'.........।'

'सि सि ऽ ऽ ऽ'

'अरी ओ, जलिया तू कहां चली गई ?'

'बिलम रही हूं दाऊ, यहां गूलर के नीचे डोंगी पर।'

'और झालरसिंह ?'

'..............'

'और झालर ! कहां गया रे ?'

'बैठा होगा, जलिया के पास।'

'अरे झालर, तू पीछे से सरक तो जा, कोई आ जाएगा।'

'नहीं जलिया, दो घड़ी बिलमने की तो बात है।'

'नहीं रे, भाग यहां से, उरई[1] पर जा बैठ।'

'जैसी तेरी मरजी।'

'अच्छा तो दोनों तपस्या कर रहे हैं !'

'नहीं रे शिकालगीर, चल·······।'

फिर फावड़ा, गेंती और कुदाल चलने लगे। महुआ बराबर काम में जुटी रही। टोकनी में भर-भरकर रेत-मिट्टी उठाती और दूर फेंक आती। दूसरे लोग थोड़ी देर बिलमते और फिर काम में लग जाते। कभी गीत की कोई धुन छेड़ता,

---

१. घास

तो कभी चर्चा होने लगती ।

'गायता ने गंगी को रख लिया रे ।'

'हां, सुना तो है ।'

'सूना क्यों, सच तो है । महुम्रा सब जानती है, क्यों री, बोल तो कुछ ?'

'..............'

'क्या बोले बेचारी, दईमारा सुलक··· ग्राह ! ग्राग जल रही है उसके पेट में······!'

'महुम्रा !'

'क्या है झालरसिंह ?'

'मजाक छोड़, सच तो बता, यह सब कैसे हुम्रा ?'

'नहीं जानती बीर, इत्ता जानती हूं कि वह अब उसकी मिहरिया बन गई है ।'

'क्या मालूम कब तक साथ देती है !'

'हां जिम्मे, औरत की माया भगवान् जाने । क्या-क्या खेल रचाए !'

'अबे, औरत जात को नाम धरता है, सब एक-सी थोड़ी होती हैं ।'

'मुझे माफ कर दे महुम्रा, तू यहां है मैं तो भूल ही गया था ।'

'हा हा हा···हि हि·······'

'चुप रह शिकालगीर ।'

'मुझे तो ऐसा लगता है महुम्रा, कि वह अपने बेटे को छुड़ाने के लिए माया रच रही है ।'

'क्या जाने ।'

'एक पत्थर से दो शिकार—बेटा भी छूट जाए और मोइदो भी मिल जाए ।'

'जोड़ी अच्छी है, दोनों उमर से बेजार हो रहे हैं । किसीको शिकायत नहीं रहेगी ।'

'कुछ भी हो झालर, गूमा निकला बड़ा पहिलवान ।'

'क्यों नहीं, कहां उसका कतल तू करने वाला था, कहां उसने कर डाला । उसका एहसान मान रे शिकालगीर, आज तू जिहल में होता ।'

'छोड़ बीर, चुटकी बजाते उसे साफ करता । खून हो जाता पर किसीको कानों कान पता न लगता ।'

'शाबास····!'

'मेरी पीठ ठोंकती है, जलिया।'

'हां पोटसा।'[1]

'चुप रह, पोटसा कहती है ! देख मेरा पेट बड़ा है क्या ?'

'हा हा ऽ ऽ ऽ हि ऽ ऽ ऽ।'

फिर,

छप्प् छप्प्, खप्प खप्प, खिक्क् खिक्क्....

'कितना गड्ढा हो गया ?'

'चल अंभोली तू उतरकर देख भला।'

'उई ई ई ई...!'

'क्या है ?'

'पन्ने[2]...पन्ने....प....न्ने बचा....ओ।'

'खूब, डरने की हद होती है, पन्ने से डरता है !'

'क्या कहा ? पन्ने !...देख तो शिकालगीर।'

'हां झालर, पन्ने....एक नहीं दो-दो....और...और ऐटा[3] भी रे।'

तालियों की गड़गड़ाहट से सारा नरवा गूंज उठा। जय हो बड़े देव की ! जय खेरमाई की !

'धरती माता की जय !'

'अंडा लाई है महुआ ?'

'हां लाई हूं दाऊ, वहां रखा है।'

'ओ झालर, क्या हुआ ?'

'क्या हुआ ?'

'अंडा यहां से गायब !'

थप्पप्प्प ऽ ऽ ऽ।

'तू है ऐं, अरे झालर, यह खड़ी है बंमटी, भूरी। ताली पीट रही है। दोनों अंडे उठाकर खा गई।'

'अब क्या होगा ! इस पगली के मारे तो नाक में दम है।'

'नासकटा, पगली कहता है। बेशरम...!'

---

१. एक गाली; अर्थ है—बड़े पेट वाला २. मेढक ३. केकड़ा

बचाओ ! एं ऐंयेंयें मरी रे रेरेरे,···मारता है पठिया[१]।'

'क्यों रे अंभोली, क्यों मारता है उसे ?'

'अंडे खा गई न !'

'तू देखता तो क्या छोड़ देता ! क्या पागलों से पाला पड़ा है।'

'हमें पागल कहता है···क्यों भूरी ?'

'हां अंभोली।'

'ये सब पागल हैं।'

दोनों एक दूसरे से लिपट गए और कूदने लगे।

सबने एक साथ ताली पीट दी—'हुर्रे हुर्रे ऽऽ !'

'पानी निकल आया सिरदार।'

'पानी ऽऽऽ।'

'जय हो मातुल की। हमने प्यासी नदी की छाती फाड़कर पानी निकाला है। इसमें भी कितना कपट भरा है ? ऊपर से सूखी, अन्दर समुन्दर लहराता है। हम भी तुझसे बदला लेंगे, तेरी छाती से निकला पानी लेकर हम सब पिएंगे और तुझे एक बूंद न मिलेगा। देखो रे, ऐसे संभाल के पानी भरना कि नरवा के किसी कोने में बूंद तक न गिरे। कहीं उरई न उगे। बस, रेत ! रेत ही रेत ! तू तड़प और हम तेरी तड़पन से प्यास बुझाएं।'

'हुर्रे हुर्रे हुर्रे ऽऽऽ।'

'कुकड़ूं कूं ऽऽऽ !'

'कुकड़ूं कूं ऽऽऽ !'

'ए, भुनसारा हो गया। चलो, अब हम लोग चलें सिरदार।'

'अरे, तू महुआ, रो रही है ! सिरदार, देख तो महुआ रो रही है !'

'क्यों रो रही है ?'

'शिकालगीर ने तुझे सिरदार कह दिया न, शायद इसलिए।'

'हां इसलिए, तुम लोग आदमी हो या जानवर, उसे गए महीनों हो गए, आज तक किसीने पता लगाने की फिकर की ? तुम्हारा सिरदार तो वह है न, कैसे सिपाही हो ? धोखेबाज, सारा गांव दगा दे गया, कभी तो आएगा वह···!'

---

१. एक गाली—सूअर का बच्चा

'सब चुप हो गए। नरकोम की ठंडी हवा में झाड़ों के पत्ते नाचने लगे। चिड़ियां चहकने लगीं तो कौवे ने भी राग छेड़ दिया।

'तू सच कहती है महुआ। अब हम सब लोग उसे खोजने निकलेंगे।'

'हां झालरसिंह, हमें निकलना चाहिए।'

'कल नेतानार में सभा है। हम वहां से लौटकर अपने पियारे सिरदार को जरूर खोजेंगे। भरोसा रख महुआ, तेरा दुःख हमारा दुःख है। पर हम करें क्या ? वह निरदयी तो ऐसा लापता हुआ है....!'

सारा दल धीरे-धीरे ऊपर चढ़ने लगा। पूरब का क्षितिज लाल हो गया था और राजामहल के सामने मैदान पर बैठे तोते पंचायत कर रहे थे। दल के सब लोग थक गए थे। रात भर खोदने के बाद पानी निकला था। सारे झरने सूख गए। नदी-नालों ने मुंह बा दिया। घोटुल के ये सदस्य मेहनत न करते तो सारा गांव प्यास से मर जाता।

'इस साल बरसात के बाद हम नाले को बांध देंगे ताकि फिर पानी का काल न हो।' झालरसिंह के इस सुझाव का सबने समर्थन किया।

'और देखो,' शिकालगीर बोला, 'थानागुड़ी के पास जो टपरिया हम लोग बना रहे हैं, उसके सामने बगीचा भी लगाएंगे।'

सब लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। उनकी हंसी में सबसे ज्यादा साथ अंभोली और भूरी ने दिया। वे दोनों एक दूसरे की कमर में हाथ डाले उचटने लगे :

किद्दूरी फुदे, किद्दूरी फुदे।

हिरमे ने देखा। सारा दल हंसते-गाते आ रहा है। उसने पास आकर सबकी पीठ थपथपाई, 'शाबास मेरे घोटुल के शेरो !... चल रे पेरमा, हम अपने बेटे-बेटियों की मिहनत पिएं।' सबने गायता हिरमे के सामने सिर झुका दिया। उसने थपथपाकर उन्हें बड़ा प्रोत्साहन दिया था।

'दादाल !'

'हां झालर !'

'कल नेतानार चलना है ?'

'हां सबेरे चलेंगे। तू घोटुल के तीन-चार अच्छे जवान चुन ले। तीन-चार गांव के हो जाएंगे, बस।'

'और हम कहां जाएंगे ?'

'तुम ठहरीं चैकीमन[1] महुआ, यह काम मरदों का है।'

'नहीं, हम भी तुम्हारा साथ देंगे। हम चुप नहीं बैठ सकते, गायता। गांव के मामले हमारे भी तो हैं। औरतों को जादू की छड़ी बनाकर तुम दूर क्यों रखना चाहते हो! हम भी मरदों का साथ देंगे।'

'नहीं महुआ, इन्हें डर है कि कहीं हम भी मैदान में कूद पड़ें तो इनके कान कट जाएंगे।'

'शाबास मेरी नियारो, हम तुम दोनों को अपने साथ ले चलेंगे। देख झालर, महुआ और जलिया भी चलेंगी हमारे साथ, पर सिर्फ ये दो!'

हुर्रे हुर्रे हुर्रे ऽ ऽ!

हुर्रा हुर्रा हुर्रा!

लड़के और लड़कियां एक साथ उचटती-गाती अपने-अपने घरों को चली गईं।

हिरमे को घर की चिन्ता से तो मुक्ति मिल गई थी पर गूमा को जेल से छुड़ाने की फिकर में वह दिन-रात घुला जा रहा था। रोज़ सवेरे वह नरायनपुर जाता और पुलिस वालों की खुशामद करता। आज भी वह रोज़ की तरह नरायनपुर गया। बहुत मनाने के बाद निस्पिट्टर तैयार हुआ दो कोरी रुपयों में। इत्ते रुपये उसके पास तो थे नहीं। उसने निस्पिट्टर के पांव पकड़े। जो कुछ उसके पास थे उसने अपने देवता के चरणों में चढ़ा दिए, बाकी रुपये तीन-चार दिन में लाने का वचन दिया। निस्पिट्टर ने धीरे से हाथ नीचे बढ़ाया और रुपये उठाकर अपनी जेब के हवाले किए। तभी वहां हवलदार आ गया। उसने सलूट मारी। हिरमे ने हवलदार को भी हाथ जोड़े। निस्पिट्टर ने एक बार हवलदार की ओर और दूसरी बार हिरमे की ओर देखा।

'अबे नालायक के बच्चे!'

'जी हुज़ूर।'

'तू फिर कब आएगा ?'

---

१. लड़की

'पन्ने[1] या पिनरे[2]। बस सरकार इत्ते में चूक न होगी।'

'तुझे कित्ते लाना है, मालूम है न ?'

'हां हुजूर, एक कोरी और ?'

'सूअर कहीं का, देखता नहीं हवलदार साहब भी सामने खड़े हैं।'

'जी हां सरकार,' उसने एक बार फिर दोनों हाथ जोड़कर हवलदार की ओर देखा, 'एं एं एं, खड़े तो हैं मालिक।'

'एं एं एं क्या ? आधी कोरी उनके लिए भी··· ।'

'हु···जू···र !'

'हुजूर-बुजूर कुछ नहीं। एक तो हत्या की हरामज़ादे ने फिर···· तुझे क्यों दिलचस्पी है उससे ? तूने ही हत्या कराई होगी सत्ताय की। साले जंगली हज़ार औरतें रखते हैं और जानवरों की तरह उनसे काम लेते हैं, खुद धुइंगा पीते दिन बिता देते हैं। न कोई काम, न धाम, जांगर से खुद जी चुराएं और औरतों को बैलों की तरह पेरें। और तारीफ तो यह कि कोई ज़रा भी मरज़ी के खिलाफ गया कि बस, उसकी जा··· ।'

'नहीं, नहीं हुजूर, यह बात नहीं है··· ।'

'बकवास मत कर ! सूअर कहीं का ! हम सब जानते हैं। परसों तक पूरे रुपये आने चाहिएं, सुना ? डेढ़ कोरी रुपये आने चाहिएं, वरना तुझे भी हम हत्या के जुर्म में गिरफ्तार करेंगे।'

'हम तो दास हैं मालिक के, जो मरजी आपकी।'

एक लम्बी सांस लेकर हिरमे वहां से चला आया। बाहर निकला तो बड़ी सतर्कता से यहां-वहां देखता रहा। कहीं कोई और न निकल आए, वरना····।'

घर आकर गंगी की गोद में उसने सिर धर दिया और खूब रोया। गंगी ने सुना तो वह भी सुन्न हो गई। डेढ़ कोरी रुपये कहां से आएंगे। बोली, 'आधी कोरी तो मेरे पास हैं हिरमे, मैंने बचा-बचाकर जाने कब से रखे थे। बाकी का इन्तजाम कर ले।'

'किससे जाकर मांगू गंगी ! कौन देगा इत्ते पैसे, वह भी एक खूनी को···!'

'तेरी बात कोई नहीं टालेगा हिरमे, थोड़ा-थोड़ा कर समेट ले।'

---

१. परसों २. नरसों

हिरमे ने एक लम्बी सांस ली और लोंन के बाहर निकल गया। गांव भर के लोगों से उसने अपनी बिपदा कही पर किसीने मदद न दी। मदद वे देते भी कहां से ! महुआ ने सुना तो बोली, 'ठीक है गायता तेरा इन्तजाम हो जाएगा।' गायता ने आंखें फाड़कर उसकी ओर देखा।

'कहां से हो जाएगा, नियार ?'

'मैं जिम्मा लेती हूं दादाल। तुझे कहां से मतलब !'

'पागल तो नहीं हुई। तू कहां से लाएगी इत्ते रुपए !'

'मैं घोटुल के सारे सदस्यों से कहूंगी कि वे जाकर काम तलाशें। सुना है नरायनपुर में एक 'सकूल' बनने वाला है। मैं कहूंगी सब वहां जाएं, मैं भी वहां जाऊंगी और जो कुछ मजूरी मिलेगी, सब हम तुझे लाकर देंगे।'

'ठीक कहती है बेटी, पर 'सकूल' तो हमारे गले की फांसी है। हम वहां जाकर काम नहीं कर सकते।'

'क्या वहां फांसी लगाई जाती है दादाल ?'

'तू नहीं समझती पेड़गी, सकूल बनाकर सिरकार हमारे लड़कों को पढ़ाएगी और हमसे उन्हें छीन लेगी। हम जैसे हैं वैसे ही ठीक हैं। राजा को हमारे बीच पड़ने की क्या जरूरत ! उसे नजराना चाहिए न, सो हम हर बरस दसेरा में दे देते हैं।'

'तो ठीक है दादाल, हम वहां नहीं जाएंगे। जो तुम कहोगे सो होगा। मैंने सुना है, वहां बनिया का घर बन रहा है। उसमें तो काम मिलेगा। वहां तो हरज नहीं ?'

'नहीं बेटी।'

'तो बस, तू जा खुर्राटे भर।'

'पर····पर बेटी, पिनरे तक पैसा निस्पिट्टर के पास न पहुंचा तो कहता था मुझे भी जेहल में बन्द कर देगा।'

'कैसे कर देगा बंमटा, उसके बाप की जेहल है जैसे। तूने क्या बिगाड़ा है किसीका ! तुझे जेहल में बन्द किया गायता तो हम सब तीर-कमान लेकर जेहल घेर लेंगे।'

'नहीं बेटी, तू उसकी ताकत नहीं जानती····खैर जाने दे, पर याद रख पिनरे तक···।'

'हां दादाल, तेरी सही, पिनरे के भुनसारे मुझसे आकर ले जाना एक कोरी। बस न ?'

हिरमे की खुशी का अन्त नहीं। उसने उठकर महुआ को पकड़ लिया और अपने होंठों से उसके दोनों गाल चूम लिए।

'अब तो सुलकसाए को भी खोजना ही पड़ेगा।'

महुआ ने छलछलाती आंखों से उसकी ओर देखा, उसे सुलकसाए की याद आ गई थी। उसने आंचुर का छोर अपनी आंखों में ठूंस लिया और चुपचाप भीतर चली गई।

११

चारों तरफ पहाड़ियों से घिरे, कटोरीनुमा मैदान के बीच इनी-गिनी झोपड़ियां हैं। सब बांस और फूस की बनीं। गांव के द्वार पर घोटुल है और घोटुल के पहले जहां गेंवड़ा है, पत्थरों की एक कोरी बनी है और उसपर एक पुराना बांस गड़ा है। बांस पर गेरुए रंग की फटी-पुरानी ध्वजा लहरा रही है। इस गांव में आने वाला हर आदमी पहले कोरी की देवी को सिर झुकाता है, तब गांव के अन्दर पैर रखता है। गांव के बीच एक बड़ा मकान है, उसके सामने बांस की किमचियों से घिरा मैदान। हरे बांस की ताज़ी किमचियां, जैसे किसीने अभी-अभी यह घेरा डाला है। मैदान में यहां-वहां कुछ छोटे और कुछ बड़े झाड़ लगे हैं। सब अस्त-व्यस्त, शायद अपने आप उग आए हैं। किसीने उन्हें लगाया नहीं। यही है नेतानार के मांझी का घर। आठ-दस गांव उसके अन्दर आते हैं और उस पूरे परगने का वह मुखिया है।

मैदान में कोई पचास-साठ आदमी बैठे हैं। इनमें आठ-दस औरतें भी हैं। ये सब आसपास के गांवों के चुने हुए नेता हैं। नेतानार में आज सारे परगने की सभा है। अन्तागढ़ का परगना-मांझी भी वहां हाज़िर है और वही पंचायत का पंचतोर है।

गढ़ बंगाल का दल जब वहां पहुंचा था तो नेतानार के गायता हबका ने सबका खूब स्वागत किया था। हबका गढ़ बंगाल हो आया है। उसे वहां जो

प्रेम मिला, यहां वह उसका बदला देना चाहता था, इसलिए उसने एक-एक को गले लगाया। गायता, पेरमा, झालरसिंह, महुआ और जलियारो सबको वह जानता था। सबसे वह मिला। सबकी उसने खैर पूछी। महुआ को देखकर सुलकसाए की याद की और दो आंसू भी बहा दिए।

सभा का काम शुरू हुआ। कार्यवाही परतवाड़ा के परगना-मांझी ने शुरू की। भरा-पूरा बदन और ऊंचा-पूरा, हट्टा-कट्टा आदमी। कोई पचास बरस का होगा, पर सारे बाल काले हैं। धुंआंरे चेहरे पर पत्थर जैसी सख्ती। बड़ी और लाल आंखें। कानों में पीतल के गोल कुण्डल और गले में अनगिनत मालाएं, घुंघचियों और रंग-बिरंगे पत्थरों की। ये मालाएं तब की हैं जब वह जवान था और वे सब किसी न किसी के प्रेम की निशानी हैं। उन्हें देखकर उसके विशाल व्यक्तित्व का पता लगता है कि वह युवा अवस्था में कितना लोकप्रिय रहा है; कितनी मोटियारियों का उसे प्रेम मिला होगा। कमर में एक लम्बी लंगोटी है और ऊपर एक बंडी, वह भी आधी फटी।

उसने खड़े होकर सबकी ओर देखा। एक-एक पर ठहर-ठहरकर नज़र डाली। ऐसा करते समय वह कभी मुसकरा देता था और कभी बड़े अजीब ढंग से अपनी भवें चढ़ा लेता था। जब भवें चढ़ाता तो उसकी शकल भयावनी हो उठती। उसने फिर बोलना शुरू किया। एक-एक बात साफ-साफ और रुक-रुककर कहता था :

'भाइयो,

तुम सब जानते हो, हम आज यहां क्यों आए हैं। तुम लोगों को यह पता लग गया होगा कि आजकल हमारे राजा रुद्रप्रतापदेव ने बाहर से गोरों को बुला लिया है। क्यों बुलाया है, हम नहीं जानते। हमसे उन्होंने पूछा भी नहीं। आजकल सारा काम ये गोरे करने लगे हैं। हमारा राजा, बस, नाम के लिए है। इसका यह फल हुआ है कि हमपर मुसीबतें आ रही हैं। गढ़ बंगाल का किस्सा तुम जानते हो। नहीं जानते तो सुनो, तुम्हें हिरमे सुनाएगा।'

परगना-मांझी ने हिरमे की ओर चढ़ी नज़रों से देखा। हिरमे उठकर खड़ा हो गया। वह ऊंचाई में उससे छोटा था पर रूप-रंग में ज़्यादा साफ और बोलने में नरम। उसने राजामहल में अंग्रेज़ अफसर के आने से लेकर, चुड़ैल के हमले और फिर उसके बाद सिरकार की ओर से दो-दो एकड़ ज़मीन देने तक की सारी

घटना खुलकर कह दी। सब लोग ध्यान से सुनते रहे।

सुनने वालों में एक नवयुवक भी बैठा था, कोई बीस बरस का। वैसे तो वहां बैठे लोगों में अधिकांश नवयुवक ही थे, पर यह सबमें अलग दिखता था।

अमावस की रात जैसा उसका काला और पत्थर जैसा सुदृढ़ शरीर। सिर पर लाल कपड़े की पगड़ी, जैसे अंधेरी रात में कोई दीपक टिमटिमा रहा है। गले में गिलट के रुपयों जैसे आकार का एक हार और कौड़ियों तथा घुंघचियों की लगभग एक दर्जन मालाएं। हाथ की दोनों कोहनी के ज़रा ऊपर बंधी एक धजी जिसमें सात-आठ गठानें। घुटने तक लांगदार धोती और कमर में कौड़ियों का करधना। बाकी गले से कमर तक नंगा शरीर। चौड़ी छाती जिसमें बेर की झाड़ियों जैसे छितरे बाल। अपनी इस वेश-भूषा और दिखावे के कारण वह सबमें अलग दिखता था। वह बार-बार लड़कियों की तरफ देखता था और देखकर मुसकरा देता था। उसकी मुसकान भी अजीब थी। यह मुसकान जो कभी जीवन देने को फूटती थी तो कभी किसीपर बाज की तरह झपटकर उसका सब कुछ छीन लेना चाहती थी। दो मोटे और भद्दे होंठ, पर कितने अजीब! वह ऊपर गर्दन उठाकर सारी लड़कियों पर नज़र डालता था। उसकी नज़र प्राय: यहां-वहां घूमकर एक लड़की पर स्थिर हो जाती। वह लड़की थी जलियारो। जलिया जब कभी उसकी ओर देखती तो दो आंखें जैसे बंध जाती थीं। उसे देखकर जलिया हंस देती और वह मुसकरा पड़ता था। जलिया नीचे सिर झुका लेती थी। कभी पास बैठी महुआ को कोहनी मारती थी और उसके कानों में कुछ फुसफुसा देती थी। यह सब होते हुए भी वह युवक बोलने वाले की हर बात ध्यान से सुनता था। इसका पता इससे लगता था कि जब हिरमे ने बात खतम कर दी और वह नीचे बैठ गया तो उसने तत्काल उठकर कुछ कहना चाहा, पर परगना-मांझी ने उसे बैठाल दिया, 'चुप बैठो।' वह आंखें और गर्दन मटकाकर नीचे बैठ गया।

परगना-मांझी ने कहा:

'भाइयो,

तुमने हिरमे की बात सुन ली। गढ़ बंगाल के सिरहा ने गोरे की जान बचाई इसलिए कि हम अपने यहां आने वाले हर मिहमान को सुरक्षित अपने गांव से भेजना चाहते हैं। सिरहा ने उसके साथ कोई एहसान नहीं किया। उसने हमारी

परम्परा रखी । गोरा हमारे एहसान भूल गया और उसने दो आदमियों को दो-दो एकड़ जमीन का पट्टा दिया ।

'तुम सब जानते हो, अब वह गोरा बस्तर में नहीं है। कहते हैं, डरकर उसने हमारे राजा का साथ छोड़ दिया। उसकी जगह दूसरा अफीसर आया है। 'तैलसीदार' ने कहा था, नया अफीसर गोरा नहीं है, पर गोरों ने उसे भेजा है। उसका नाम···हां, बैजनाथ पंडा···यही 'तैलसीदार' ने बताया था । वह गोरा हो या न हो, है परदेसी । उसने दो-दो एकड़ जमीन देने का 'तैलसीदार' के हाथ पट्टा भिजवाया । क्या यह अंधेर नहीं है····?'

'अंधेर है, एकदम अंधेर !' सब एक साथ चिल्लाए ।

'तो भाइयो, यह अंधेर है । ये सारे जंगल हमारे हैं । लिंगो ने उन्हें बनाया और हमें सौंप दिया । हम इस पूरे जंगल के मालिक हैं। यहां की हर जमीन हमारी है, यहां का हर झाड़ हमारा है। बैजनाथ ने दो आदमियों को दो-दो एकड़ जमीन दी, मतलब यह है बाकी जमीन हमारी नहीं है। तो यह भेद कैसा ? गांव के दो आदमियों को लड़ाने की यह नई चाल कैसी ? सुना है, इसी तरह की जमीन फूलपार और तकोड़ी के लोगों को दी गई है। फूलपार का गायता यहां हाजिर है । वह उसके बारे में बताएगा।'

फूलपार का गायता उठकर खड़ा हो गया। बोला, 'हमारे गांव के दो आदमियों को एक-एक एकड़ जमीन दी गई है । उन्हें चौकी में बुलाया गया था और जमीन के पट्टे दिए थे । इन दोनों ने पुलिस के एक अफीसर की रच्छा की थी, सोरी से उन्हें बचाया था । घने जंगल में शेर ने अफीसर पर धावा बोल दिया था। इन लोगों ने आगे बढ़कर शेर के दांत तोड़े और खुद लहू-लुहान होकर पुलिस को बचाया । कहते हैं इसकी रपट यहां राजा के पास भेजी गई और वहां से ये पट्टे आ गए ।'

'गलत है, एकदम गलत,' लाल पगड़ी वाले काले नौजवान ने खड़े होकर कहा, 'राजा का उससे क्या सरोकार ! इसके पहले भी हमने कितनों की जान बचाई पर कभी ऐसा पट्टा नहीं आया । राजा तो कहता है कि मैं तुम लोगों का दिया खाता हूं, तुम्हें क्या दूंगा ! बड़े देव उसे बनाए रखें। यह सब करनी बैजनाथ की है । नये अफसर की ।'

'हां, गुण्डा ठीक कहता है,' परगना-मांझी ने कहा, 'उसका अनुमान गलत

नहीं है। बैजनाथ पण्डा ही झगड़े की जड़ है। सुना है, वह धीरे-धीरे हमसे जमीन छीन लेगा। हमें थोड़ी-थोड़ी जमीन देगा बस, जैसे सिट्टी[१] के सामने टुकड़ा फेंक देते हैं। हम लोग फिर उसी जमीन पर खेती कर सकेंगे। यानी दूसरी जमीन हमारी नहीं होगी। वह कहता था, इनकी दीपा रोकना है।'

'गजब है!' कई लोग एक साथ बोल पड़े, 'तब हम खाएंगे क्या?'

'यही तो सवाल है भाइयो, हम खाएंगे क्या। जिन्हें खेत मिलेगा वे मौज उड़ाएंगे बाकी भूखों मरेंगे। एक गांव के चार आदमी मजे में खाएंगे और चालीस भूख से तलफेंगे।'

'यह नहीं हो सकता!' सब बोले।

'ठहरो,' परगना-मांझी ने कहा, 'बात इत्ती नहीं है। आजकल गोरों के अफसर भी मनमानी करने लगे हैं। परतवाड़े में यह नया 'तैलसीदार' आया है। हमारे आदमियों को बुलाता है, मनमानी गालियां देता है और लात भी मारता है। फिर दिन भर काम कराता है।'

'ठीक कहते हो मांझी,' हिरमे बोला, 'मेरे साथ भी यह गुजर चुकी है। गढ़ बंगाल के प्रायः हर आदमी से नरायनपुर का सिपाही बिगार ले चुका है।'

बिगार की जब बात चली तो वहां जितने बैठे थे प्रायः सभी ने कुछ न कुछ कहा। हर किसी ने बताया कि उससे बिगार ली गई है। दिन भर काम लिया गया परन्तु किसीने एक रोटी नहीं दी। भूखे रहकर उन्हें काम करना पड़ा। झालर-सिंह ने तो सबको एक बड़ा दर्दभरा किस्सा सुनाया। उसने बताया कि वह एक दिन कनतेली[२] उड़ा रहा था। एक छितना शहद से लबालब भरा था। तभी जंगल से दरेस लगाए एक सिपाही आ गया, बोला, 'अबे, चल यहां।'

'कहां हुजूर?'

'यह मलगा निस्पिट्टर के घर ले चल।'

'थोड़ा ठहरकर हुजूर, कनतेली उड़ गई हैं, बस....।'

'उसने कमर से चमड़े का हंटर निकालकर दो-चार मेरी पीठ पर जड़ दिए और जबरन मुझे पकड़कर ले गया। देखकर मैं हैरान रह गया। वह मलगा था या पूरा झाड़। दस आदमी भी उसे उठा न पाएं। कहता था, मैं अकेला उठाकर ले

---

१. कुत्ता २. शहद की मक्खी

चलूं। यह कैसे होता ! मैं खूब गिड़गिड़ाया पर वह न माना। मुझे थाने ले गया। वहां निस्पिट्टर ने खील लगे जूते मुझे मारे और चार घंटे तक जेहल में बन्द रखा। मैंने आज तक यह किस्सा किसीको नहीं बताया।' झालरसिंह की आंखों में आंसू आ गए थे। उसने अपनी धोती से आंसू पोंछे और नीचे बैठ गया।

'देख लिया तुम सबने !' मांझी जोर से गला फाड़कर चिल्लाया।

'हम निस्पिट्टर का खून पी जाएंगे। कौन था वह, बता झालर !' दांत पीसता हुआ गुण्डा धूर खड़ा हो गया। उसने अपने बाजुओं को थपथपाया और उन्हें गर्व से देखा, फिर बोला, 'एक मौका तो दे मांझी, बाघ की तरह उसकी गरदन तोड़कर खून न पिया तो····।'

'अभी वह समय नहीं आया रे, बैठ जा।' मांझी का आदेश पाकर वह नीचे बैठ गया और अपने आप कुछ फुसफुसाता रहा। धीरे-धीरे वह सरककर जलिया के पास पहुंच गया। जलिया सिमट गई। उसके कान में उसने कुछ कहा तो जलिया ने मुसकरा दिया। उसने एक चिहूंटी ली और जलिया 'सी ई ई ई' कर उचक उठी। महुआ ने यह देखा तो वह दो हाथ दूर सरक गई। झालरसिंह ने शायद यह नहीं देखा था।

नरायनपुर का गायता परगना-मांझी के पास बैठा था। बोला, 'भाइयो, हमें इन सब बातों पर सावधानी से विचार करना है। यह तय है कि अभी तक ऐसा नहीं हुआ। यह सब आज हो रहा है। इसलिए हमारे प्यारे राजा का इसमें दोस नहीं है।'

'दोस कैसे नहीं है !'—गुण्डा धूर ने रोककर कहा, 'सरासर उसीका दोस है। उसने ऐसे परदेसी को अपने घर ही क्यों बुलाया ?'

'यह बात हम क्या जानें गुण्डा,' नरायनपुर के गायता ने कहा, 'हो सकता है इसमें भी राजा साहब की परबसता हो।'

'जो हो, इस बात को हम नहीं जानते,' परगना-मांझी बोला, 'दसेरा में हम जब दन्तेश्वरी माई को पूजने जाएंगे, राजा से जरूर पूछेंगे।········हां तू कह।'

नरायनपुर का गायता बोला, 'मैं एक नई बात कहने जा रहा हूं। हमारे गांव में एक बड़ा घर बन रहा है। कहते हैं वह 'सकूल' है। उसमें लड़कों को पढ़ाया जाएगा।'

'क्या पढ़ाया जाएगा ?'

'मैं नहीं जानता।'

'पढ़ाना क्या चीज है गायता ?'

'वह भी मुझे नहीं मालूम। पर इत्ता पता लगा है कि उस 'सकूल' में हमारे लड़के भी जबरन भर्ती किए जाएंगे और उन्हें पढ़ाया जाएगा।'

'पढ़ाई खराब नहीं है गायता, उससे हमें क्या नुकसान होगा !' अब की बार महुआ बोली तो सारी नज़रें उस ओर उठ गईं। उसने देखा, सब एक साथ उसे देख रहे हैं। उसने कहा, 'हां, ठीक कहती हूं। मुझे क्या देख रहे हो !'

'यानी तू पढ़ाई का मलतब समझती है ?'

'हां, क्यों नहीं !'

'तो बता, वह क्या है ?'

'बस पढ़ाई है, और क्या !'

'पढ़ाई है....!' गुण्डा धूर ने जीभ निकालकर उसे दिखाई, 'यह भी कोई मलतब है ?'

'मैं ठीक नहीं जानती गायता, मुझे सुलकसाए ने बताया था। उससे पूछकर...पर,' महुआ ने अनजाने ही चारों ओर देखा और फिर अपने आप ही नीचे बैठ गई।

गुण्डा धूर ने उसे फिर जीभ दिखाई, 'पूछकर बताएगी। पूछ न ?'

महुआ ने उसकी बात अनसुनी कर दी।

गायता कहता गया, ' 'सकूल' में हमारे लड़कों को वह पढ़ाया जाएगा जो बैजनाथ पंडा चाहता है। यानी जो गोरे चाहते हैं। इससे हमारे लड़के हमारे नहीं रहेंगे। हम उन्हें पैदा करें और दूसरे इतनी सफाई से उड़ाकर ले जाएं ! आंख रहते हमें अंधा बना दें !'

'यह नहीं होगा गायता,' परगना-मांझी बोला, ' 'सकूल' नरायनपुर में ही नहीं और जगह भी बन रहे हैं। अन्तागढ़ में भी नींव खुद रही है। सुना है, जगदलपुर और उसके आसपास कई 'सकूल' बनेंगे। दन्तेवाड़ा में भी एक बनेगा, और न जाने कहां-कहां ?'

'तुम ठीक कहते हो मांझी। सब जगह 'सकूल' बनेंगे। यानी धीरे-धीरे हमारे सारे लड़कों को हमसे छीन लिया जाएगा। सुना है, वहां हमारी बोली नहीं पढ़ाई जाएगी।'

'तो क्या पढ़ाएंगे गायता ?' हिरमे ने पूछा।

'कोई दूसरी बोली,' वह बोली, 'जो नरायनपुर का बनिया बोलता है और पुलिस का दरोगा।'

'यानी, अब्बे हरामजादे, इधर आ। तेरा बाप मरा तो नहीं ? महतारी ने कितने खसम किए ? अबे उल्लू के पट्ठे, नालायक, बेवकूफ, पाजी, हरामी। साले को तमीज नहीं बोलने का। कहते हैं जंगल हमारी जायजाद है। इनके बाप ने खरीदे थे—इसी तरह न ?' गुण्डा धूर ने खड़े होकर एक सांस में सब वाक्य दुहरा दिए।

सारे लोग एक साथ हंस पड़े।

'तूने तो तोते-सा रट लिया है रे सब कुछ !' मांझी ने हंसते कहा।

'हां, दादाल, इनकी बात सुनते-सुनते सब कुछ याद हो गया है।'

'तो हमारे लड़के भी फिर हमसे इस तरह की बात करेंगे, क्यों भाइयो ?'

'ठीक कहते हो मांझी। तुमने अपने बाल अर्री[1] में थोड़े सुखाए हैं !'—कुछ लोग एक साथ बोले।

'कहां सूखे हैं रे, देखते नहीं।' मांझी ने मज़ाक किया, 'है किसी की ताकत चार औरतें रखने की ?'

'देख मांझी, चुनौती न दे।' हिरमे बोला।

'तेरी बात जुदी है हिरमे, तू बैठ।'

'क्या कहा ! उसकी बात जुदी है। मेरी पांचमी औरत अभी-अभी भागी है और अब तंगे[2] को अपनी ताकत के सामने झुका चुका हूं।'

नरायनपुर के गायता की यह बात मांझी के लिए सचमुच चुनौती थी। मांझी ने खड़े होकर हाथ जोड़े, बोला, 'भाइयो, माफ कर दो। मैं हार गया।'

सब लोग एक साथ खूब ज़ोर से हंस पड़े।

हवका उठकर अपनी टपरिया के अन्दर गया और वहां से धुइंगा निकाल लाया। आम के पत्ते की चार-पांच परेंगा[3] लोगों ने निकालीं। उनमें धुइंगा भरी।

खच्च् खच्च् खच्च् ऽऽ। चकमक से आग जलाई गई और गुड़गुड़ाकर धुआं छोड़ना शुरू कर दिया गया। धीरे-धीरे सारे वातावरण में धुआं छा गया।

---

१. धूप २. भौजाई ३. चुंगी

परगना-मांझी ने आखरी कश खींचकर परेंगा का गुल ज़मीन पर फेंक दिया। फिर हबका की ओर देखकर बोला, 'हबका, कुछ सुवागत कर हम लोगों का। तूने बुलाया है न !'

हबका, हेलमा और गुण्डा तीनों एक साथ उठकर खड़े हो गए। वे मांझी का इशारा समझ गए थे। हबका ने भुसरी को आवाज़ लगाई तो वह एक हंडा लेकर बाहर आ गई। महुआ ने भुसरी को देखा। एक साधारण-सी लड़की। वह उसे देखती रही। पंचायत के सभी सदस्यों ने हाथ में दोना लेकर, हंडिया से लांदा निकालकर ढालना शुरू कर दिया। जलियारो ने भी इसमें हाथ बटाया, पर महुआ वहीं बैठी रही। वह बराबर भुसरी की तरफ देखती रही। देखते-देखते उसके मन में विचारों की एक रस्सी सरकने लगी। यही है वह भुसरी जिसके पीछे इस गांव में झगड़ा हुआ और सुलकसाए को नीचा देखना पड़ा। गढ़ बंगाल छोड़ना पड़ा। महुआ अपनी गर्दन कभी दाएं, कभी बाएं, कभी ऊपर और कभी नीचे झुकाती और भुसरी को देखती। वह शायद देख रही थी कि उसमें क्या विशेषता है ? सुलकसाए उसपर क्यों मरा ?

जलियारो झूलती उसके पास आ गई थी। उसने महुआ का हाथ पकड़ा, 'तू यहीं बैठी है ! अरी, आगे बढ़।' इतना कहकर जलिया ने गुण्डा घूर के हाथ पकड़ लिए। उसकी बाहों में उसने अपनी गर्दन रख दी। और हवा में झूलने लगी। बोली, 'चल रे गुण्डा, एक पाटा हो जाए।'

दोनों ने एक दूसरे की कमर में हाथ डाल दिए और वहां उचक-उचककर नाचने और गाने लगे। झालरसिंह ने यह देखा तो देखकर भी वह कुछ न बोला। उसने एक दूसरी अजनबी लड़की को पकड़ लिया और उसके साथ नाचने लगा।

लांदा ढालकर सभी मस्त थे। परगना-मांझी और दूसरे गायता॰ चिलम पी रहे थे और फुसफुसाकर आपस में बातें करते थे। महुआ यह सब बड़े गौर से देख रही थी। थोड़ी देर पहले ये सारे लोग कितनी गम्भीरता से बातें कर रहे थे, कितनी बड़ी-बड़ी योजनाएं बना रहे थे और अब.......। उसने एक आह भरी। सुलकसाए का मासूम चेहरा उसे सामने झूलता नज़र आया। कितना भोला था वह, कितना दयनीय; सुलक कुछ नहीं कर सकता। महुआ को छोड़-कर किसी और लड़की से वह प्यार नहीं जता सकता। वह सब लांदा का ज़ोर था। वह लांदा, जो आदमी की जात बदल देती है। उसे जानवर से भी नीचे गिरा

देती है। पल भर की खुशी देकर वह आदमी की हसीन जिन्दगी के सबसे सुनहले दिन छीन लेती है। उसे न जलिया पर गुस्सा आया और न झालर पर। भुसरी के प्रति भी उसके मन में हमदर्दी जागी। उसे क्रोध आया उस हंडी पर, जिसमें लांदा रखी थी। उसमें शायद अभी भी कुछ शेष बची थी, इसीलिए हेलमा फिर दौना डाल रहा था। महुआ उठकर खड़ी हो गई। उसने एक पत्थर उठाया और निशाना लगाकर ज़ोर से मारा। वह हंडी से जा टकराया और जैसे ही हंडी फूटी कि सबकी आंखें एकाएक उस ओर घूम पड़ीं। गुण्डा और झालर ने भी नाचना बन्द कर दिया।

'क्या हुआ ? क्या हुआ ?'

'कुछ नहीं।' महुआ दूसरे हाथ में पत्थर लिए उसी तरह खड़ी रही।

सब लोगों ने बड़े गौर से उसे देखा। परगना-मांझी ने, हिरमे के कान में कुछ कहा। हिरमे ने शायद उसका जवाब दिया था। दोनों खिलखिलाकर हंस पड़े।

जलिया अभी भी गुण्डा के पास खड़ी थी। उसे छोड़कर महुआ के पास आ गई। उसने महुआ के दोनों हाथ पकड़ लिए, 'साबास साइगुती ! मार, एक पत्थर और मार। उसे हाथ में क्यों रखा है ?'

महुआ को अपने आप पर घृणा हुई। उसने पत्थर फेंक दिया। उसकी आंखें भर आईं। ओस जैसी बूंदें उनके कोरों से लुढ़कने लगीं।

जलिया खूब ज़ोर से हंसी और जब उसकी हंसी रुकी तो बोली, 'बेचारी महुआ ! बेचारा सुलक !'

'क्या हुआ ?' किसीने आवाज़ लगाई।

'कुछ नहीं, पिरेम की मारी है, मेरी साइगुती।' फिर जलिया ने जैसे अभिनय किया। हाथ उठाकर बोली, 'अरे तुम सब आदमी हो ! मेरी साइगुती को बचाओ।'

'क्या हुआ उसे ?'

'रिकसा तो तुम सबने देखा है न ?' झालरसिंह ने अपनी कमर झुलाते हुए कहा, 'वह रिकसा जो आग उगलता है। जानते हो, वह आग क्यों उगलता है ?' ....पिरेम का मारा है बेचारा, इसलिए। दुनिया से बदला लेना चाहता है, तो मुंह से आग उगलकर सब कुछ जला देता है। सचमुच पिरेम की पीर बड़ी होती है, साइगुती !' उसने पास जाकर महुआ के हाथ पकड़ लिए। महुआ ने एक धक्का

देकर उसे झिड़क दिया और वह पीछे हट गई।

'यह भी पिरेम की मारी है, पियारे! हमारा सिरदार सुलकसाए इसे छोड़कर भाग गया है।'

'हां, हम जानते हैं। पर सुलकसाए को शायद यह भी नहीं पहचानती ?' गुण्डा बोला।

'क्यों ?'

'वह भागा नहीं है। वह तो हमारी सेवा कर रहा है।'

महुआ ने गुण्डा की ओर देखा। उसके चेहरे पर गर्व की कुछ रेखाएं उभर आई थीं।

'तो तुम यह जानते हो कि सुलक कहां गया है ?' हिरमे बोला।

'हां दादाल, जानता भर नहीं हूं, अच्छी तरह जानता हूं।'

महुआ ने अपने आंसू तुरन्त पोंछ लिए और तेज़ कदम बढ़ाकर गुण्डा के पास आ गई। उसने गुण्डा की कलाई पकड़ी, 'वह कहां है बीर, तू तो जानता है, बता न !'

'हें हें एं एं एंएं, अब आई रस्ते पर !' गुण्डा हंस दिया।

'मजाक मत कर, बता रे !' महुआ की आवाज में आग्रह था।

'हां गुण्डा, वैसे ही वह पिरेम की मारी है और क्या मारता है उसे, चल मैं बताता हूं।' डिबरी धूर बोला। डिबरी, गुण्डा का छोटा भाई था।

महुआ ने गुण्डा का हाथ छोड़ दिया और दोनों के बीच खड़ी रही।

डिबरी ने सब लोगों की ओर देखा और बताया कि सुलकसाए, मरदपाल में उनसे मिला था। वहीं इन तीनों ने एक बड़ी योजना बनाई। उसने बताया कि सुलक इस समय दन्तेवाड़ा में है और वहां बहुत बड़ा काम कर रहा है। इत्ता बड़ा कि सायद हममें से कोई न कर सके।'

'धन्य है मेरे सुलक !' हिरमे बोला।

'हां, दादाल, गढ़ बंगाल का नाम वही मरद तो उजागर करेगा।'

'और नेतानार का तू और गुण्डा, क्यों !' हबका बोला।

'हां हबका, इन्हीं जवानों के हाथ तो सब कुछ है। ये साथ न देंगे तो हम लुट जाएंगे। यह गोरी सिरकार एक-एक कर हम सबको मार डालेगी, तब हमें लिंगो क्या कहेंगे !' परगना-मांझी ने कहा।

'नहीं, हम अपने को लूटने न देंगे मांझी,' गुण्डा बोला, 'हम तीनों ने वो नकशा बनाया है कि बस, देखना गोरे यहां से कैसे भागते हैं !'

'धन्य है गुण्डा धूर !'

'धन्य है सुलकसाए !'

'और धन्य है डिबरी !' डिबरी ने खुद अपने मुंह से नारा लगाया।

परगना-मांझी ने सबको शान्त किया, बोला, 'तो आज से गुण्डा धूर हमारा नेता हुआ। नेतानार का यह जवान हमारा सेनापति हुआ। हम सबउसके सैनिक; डिबरी और सुलकसाए रहे उसके साथी।'

'नहीं दादाल, नेता तो सुलकसाए रहेगा। सारी योजना तो उसीकी है। अब तक वह वहां न जाने कित्ता काम कर चुका होगा !'

'ठीक है गुण्डा, बात एक है। नेता तो नाम का होता है। काम तो सिपाही करते हैं।'

'गुण्डा धूर की जय !'

'गुण्डा धूर की जय !'

'जय कंकाली, जय मातल !'

जयजयकार की आवाज़ से कटोरीनुमा सारा मैदान गूंज उठा। आवाजें डोंगुर की छाती से टकराकर लौट आईं और चारों ओर गूंजने लगीं। लोगों में नया उत्साह आ गया। महुआ के चेहरे पर कई महीनों के बाद लाल तुरई के फूलों जैसी चमक दिखाई दी। बोली, 'मांझी, मैं भी काम करना चाहती हूं।'

'तू पैंकी है महुआ, तेरा काम और है।'

'नहीं मांझी, मेरा काम भी वही है जो सुलक का है।'

'तू पिरेम में अंधी हो रही है।'

'खबरदार मांझी ?' महुआ बोली, 'तुम सब महुआ को नहीं जानते। सुलक से वह पिरेम करती है, बिलकुल ठीक है। इसमें कोई झूठ नहीं। पर वह पिरेम की मारी है, यह गलत है। सुलक उसका सच्चा साइगुती है, उसकी याद आना स्वाभाविक है। मांझी, मैं औरतों की सेना बनाऊंगी।'

सब हंस दिए। मांझी के होंठ भी तिरछे हो गए परन्तु उसने दांतों के बीच उन्हें दबाकर अपनी हंसी रोक ली।

'हंसो मत साथियो !' महुआ ज़ोर से बोली, 'हम औरतों को तुम नाजुक न

समझो। हम पिरेम भी कर सकती हैं तो अपने दुसमन के दांत भी उखाड़ सकती हैं।'

'ठीक है महुआ, तू औरतों का संगठन कर उन्हें बाण चलाना सिखा।' जलिया ने व्यंग किया, 'तुझे निसाना लगाना भी तो आता है। अभी क्या अचूक पत्थर मारा था!'

'चुप रह' परगना-मांझी ने उसे डांटा और महुआ के इस प्रस्ताव पर सील लगा दी।

महुआ सब कुछ भूल गई। महीनों का दुःख एकदम हवा हो गया।

सबने मिलकर एक साथ चिल्लाया :

हुर्रे हुर्रे हुर्रे ऽ ऽ ऽ
हुर्रा हुर्रा हुर्रा !

तब ढलती धूप में नेतानार के डोंगुर की टेढ़ी-मेढ़ी चट्टानें चमक रही थीं। उनका रंग बदला नज़र आता था मानो आज उनका चेहरा भी उत्साह के मारे सूरजमुखी हो गया है।

१२

काड़ा मरेंगा[१] खतम हुआ कि पोरद की आंखें आग उगलने लगीं। सारी गरमी जैसे एक साथ ज़मीन पर टूट पड़ना चाहती थी। पर रातें सुहानी हो गईं। खुले आकाश के नीचे—चाहे चन्दा की चांदनी हो या झिलमिलाती तारों भरी रात—सुख की वर्षा होने लगी। आग जलाने की ज़रूरत घोटुल में नहीं पड़ती थी। बस, थोड़ी-सी धूनी भर सुलगती रहती थी, इसलिए कि उसका सुलगना ज़रूरी है। तवा-से तपते दिन को जब हलकी ठंडी रातें सुला देतीं, तो वातावरण में जैसे मादकता छा जाती। पके आमों की महक और महुआ के फूलों की मादक सुगन्ध, चार[२] के तारों जैसे नन्हें-नन्हें फूलों पर से गुज़रकर दूर-

---

१. फसल आने के समय मनाया जाने वाला त्योहार
२. गोल आकार का काले रंग का एक जंगली फल

दूर फैल जाती। ऐसे में महुआ को सुलक की बेहद याद सताती। उसे याद है, गरमी की इन्हीं रातों में उन दोनों ने न जाने कितने सुख के दिन बिताए थे। घोटुल के जब सारे सदस्य सो जाते, तो वे दोनों नरवा के तीर किसी टोंगी पर बैठकर किसी स्वप्नलोक के-से वातावरण में खो जाते। सुलक प्रेम की अनगिनत कहानियां सुनाया करता था और महुआ को ऐसी कहानियां कभी नहीं उबाती थीं। कभी-कभी ये दोनों प्रेम से दूर भागकर जैसे गांव भर का दर्द अपने सिर पर उठा लेते थे। कभी घोटुल की कोई बड़ी समस्या होती और कभी इसी तरह कुछ और। महुआ उन सब रातों की याद करती और हर रात उसे बज्र-सी मालूम होती। वह आकाश में उड़ते पक्षियों को लालायित आंखों से देखा करती। काश, उसे भी पंख होते! वह सारे आकाश में उड़ती और अपने साइगुती को खोज लेती। कभी वह निश्चय करती कि दन्तेवाड़ा चली जाए और सुलक से एक बार तो मिल ले। सुलक यहां लौटकर आता है या नहीं, और आएगा भी तो कब? न जाने कितने ऐसे प्रश्न उसे तड़पा देते थे। परन्तु वह तुरन्त सजग हो जाती—उसे नेता बनाया गया है। औरतों के दल का संगठन करना है। मांझी ने कहा था, 'तू पैंकी है महुआ, यह काम तेरा नहीं है।' तो उसने सीने पर अपना हाथ ठोकते उन्हें सावधान किया था। कितने लोग तब हंसे थे। यदि वह सुलक के प्रेम में पागल होकर भागती है तो निश्चय ही उनकी जीत होगी जो हंस रहे थे। तब यह पक्का हो जाएगा कि औरत प्रेम के सिवाय और कुछ नहीं जानती। लम्बे दिनों के बिछुड़े जब मिलते हैं तो उनके सामने फिर जैसे दूसरी दुनिया नहीं होती। काजल की डिबिया में वे बन्द हो जाते हैं। महुआ के वहां जाने से सुलक भी शायद इसी तरह डगमगा सकता है। गुण्डा ने ही तो बताया था कि वह पूरे दन्तेवाड़ा परगना का नेता है। तब वह सारा दर्द पी जाती और कहीं जाने की अपनी मरजी को बाज की तरह अपने पंजे में दबा लेती। अपने मन को कड़ा कर वह अपने आप कहती, 'लिंगो की बनाई इस दुनिया को बचा महुआ, बड़े देव तुझे अपने आप प्रेम-नदी के तीर लगाएंगे' तब उसका मन कड़ा हो जाता। वह सुलकसाए को भूलने में अपनी सारी ताकत लगा देती। वह लूघर लेकर दिनदा महल[1] की उन दीवारों को देखती जिनपर बेशुमार कारी-

---

१. घोटुल

गरी की गई है। सदस्यों ने जहां हज़ारों चित्र बनाए हैं, उनमें ज़्यादा चित्र शेर, हाथी और चीते के हैं। आड़ी-तिरछी रेखाएं हैं। तीर और कमान हैं। खेत और खलिहान हैं। राई जैसे फूल फूले हैं। बरगद के झाड़ों की लम्बी-लम्बी जटाएं जबरन धरती में घुसती जा रही हैं। यह उनकी अनधिकार चेष्टा है। धरती माता की छाती में ये कांटे क्यों ? जिस धरती ने इन्हें जगह दी, उसीपर इतना अत्याचार ! इसी अत्याचार का प्रतिकार तो करना है उसे, उसके साथियों को। महुआ को इन चित्रों को देखकर बड़ी राहत मिलती थी। ये चित्र उसे डूबने से बचा लेते, वह उन्हें चूम लेती।

'ऊ इ इ इ इ मां ऽ ऽ ऽ।'

'ठहर पैकी, जरा धीरज धर।'

'ऊ इ इ इ इ मां ऽ ऽ ऽ।'

'अरी बेटी, यह तो सुख का दर्द है।'

'ऊइ इ इ इ मां ऽ ऽ ऽ।'

महुआ एक कट्टुल पर बैठी देख रही थी। दूसरे चेलिक और मोटियारी चारों तरफ घेरे खड़े थे। ओझा[1] पीतल की एक लम्बी सुई दिया में रखे काले पदार्थ में डुबोती और लड़की की जांघ में घुसेड़ देती। वह ज़ोर से चिल्ला उठती, 'ऊ इ इ इ इ मां ऽ ऽ ऽ।'

उसकी मां उसके सिर पर हाथ रखकर कहती, 'मत रो बेटी, ये गुदने तेरी सुन्दरता में चार चांद लगा देंगे। तुझे अच्छे से अच्छा पीतम मिलेगा। दुनिया भर के चेलिक तुझे प्यार करेंगे पर तू उनमें से सम्हलकर चुनाव करना। और मरने के बाद यही गुदने तुझे नरक की यातना से बचाएंगे। तब देवता तेरी छाती में भाला नहीं घुसेड़ेगा।'

'हां मां ऽ ऽ ऽ ऽ,' वह दर्द से कराहती है और हंसती भी है, 'हां मां ऽ ऽ ऽ।'

'मोटियारियां गीत गाने लगती हैं :

अरजी बिनती मां हमारा,
उस दिन की वचन तुमारा।

---

१. वह औरत जो शरीर गोदने का काम करती है। ओझा एक जाति है जिसकी औरत का यही पेशा है।

सूजी की झार उतारा[1]

'अरी पैकी, अब तो तू फूलसुन्दरी बन रही है।'

'हां, उई ई मां मां ऽ ऽ ऽ' इस दर्द और भावी सुख की कल्पना का जो एक मिश्रित अनुभव उसे हो रहा है, वही उसके चेहरे पर साफ दिखाई देता है। शरीर गुदाना ज़रूरी है। जिसकी देह में जितने ज़्यादा गुदने होंगे, वह उतनी ही सुन्दर होगी। बचपन से गुदने-गुदाने का क्रम चलता है और फिर उसका अन्त नहीं, चलता ही जाता है।

'ओझा री, मेरी छाती में मछली बना दे न।'

'नहीं बेटी, वहां शहद की मक्खी का छता बनवा।'

'नहीं मां, छता नहीं बनवाऊंगी, मछली बनवाऊंगी, वह मछली जो नदी के नीर से अनोखा प्यार करती है। वह मुझे बेहद पसंद है।'

'अच्छा, वही सही।'

और ओझा स्त्री उसकी जांघ छोड़कर छाती पर मछली बनाने लगती है। महुआ उसे देखती है तो उसे फिर सुलक की याद आ जाती है। सात साल पहले 'टिम टिम टिमक टिमक टिम' वह टिमकी बजा रहा था और महुआ भी इसी तरह गुदने गुदा रही थी। उसकी मां ने भी कहा था, 'बेटी, मछली मत बनवा, बड़ी तकलीफ होगी।' वह खूब हंसी थी, 'हां मां, जिस दुःख के पीछे सुख की चादर पड़ी हो वह दुःख नहीं है, एक परीच्छा है। मेरी भी परीच्छा ले रही है यह ओझा। ले, ले, ले री, कम से कम अठारह मछलियां बना। तू जानती है न लिंगो के पास अठारह बाजे थे—ढोल, निसान, ड्रम, सारंगी, धुसीर, बांसुरी, केंकरेंग, पुयांग, बेल, क्लवकिंग, चिटकुल, सींग, टिमकी, मांदर....।'

'बस, बस, ज्यादा मत बात कर, चुप रह।'

'चुप तो हूं ओझा मां, पर अठारह मछलियों से कम न हों। मेरे सुलक के गले में भी अठारह कौड़ियों की माला है।' और वह खूब हंसी थी, एक अजीब हंसी जिसमें दर्द, चीख और प्रेम की पुकार जैसे सपनों की एक झिलमिलाती सुनहरी चादर में लिपटे थे।

महुआ का हाथ अचानक अपने गले में चला गया। लाल-सफेद घुंघचियों

---

१. हे मां, हमारी प्रार्थना सुन लो। उस दिन तुमने वचन दिया था। सूजी की जलन उतार दो।

की माला झूल रही थी। यह माला सुलक ने ही तो अपने हाथ से बनाई थी और एक दिन फिर बड़े प्यार से उसके गले में बांधी थी, 'यह मेरा फंदा है महुआ, इसे मैं तेरे गले में डाल रहा हूं। तोड़ने की कोशिश करेगी तो फांसी लगेगी।'

सुलक ने उसे प्यार से गले लगा लिया था और न जाने कितनी पड़ियां उसके काले चमकते बालों में खोंसी थीं।

'तेरे गले में मैंने यह फंदा डाला है और बालों में भी कांटे चुभा दिए हैं। ऊपर चीलर वीनने के लिए जब-जब हाथ रखेगी, मैं प्यार से तेरे हाथ काटूंगा और तू मेरा नाम लेकर सबके सामने चीखेगी।'

'ए हं हं हं हं हं,' दोनों की बातें हंसी में डूब गई थीं। महुआ को लगा जैसे सचमुच वे दोनों हंस रहे हैं। वह उठकर खड़ी हो गई। फूलसुन्दरी अब सामने खड़ी थी—रोती भी और हंसती भी।

अरजी बिनती मां हमारा
....
सूजी की झार उतारा।

महुआ ने उसे देखा। उसके अंग-अंग में दर्द समाया था परन्तु उसके दर्द की कराह में बड़ी मधुरता थी। वह उठकर वहां से बाहर चली गई। उसके पीछे-पीछे जलियारो भी चली आई। बोली, 'महुआ आ आ आ!'

'हां जलिया!'

'महुआ आ आ आ!'

'बोलती क्यों नहीं? आज लम्बी सांस क्यों ले रही है?'

'देख रही थी एक पैकी किस तरह फूलसुन्दरी बनती है। कितनी आसाओं और उमंगों को वह गुदने के एक-एक निसान में भरती है, और....' जलिया सिसकने लगी थी।

'क्यों जलिया, क्या हुआ?' महुआ व्यग्र हो गई। जलिया में यह भावुकता, यह दर्द एकदम नया था। वह अल्हड़ लड़की सदा पहाड़ी नाले की तरह हंसती रही है। उसमें कभी विवेक नहीं रहा। उसने कभी बखत-बेखत नहीं देखा। उसकी मासूम हंसी सहज ही फूट पड़ती थी, जैसे हंसना उसका धरम है। ओठों पर उसका कब्ज़ा नहीं है। हाथ के ज़रा-से स्पर्श से लाजवन्ती का पौधा शरमा-

कर झुक जाता है, ज़रा-सी बात पर जलियारो के ओठ खुल जाते थे। महुआ का मन कांप गया, ज़रूर कोई बड़ी बात होगी। उसने जलिया की बाहें ज़ोर से पकड़ लीं। उसकी आंखों में देखा वे झरने की तरह झर रही थीं।

'क्यों जलिया ? आज पत्थर क्यों पिघल रहा है ?'

जलिया के मन को जैसे किसी नरम चीज़ ने छू लिया। वह सिसक उठी और उसने महुआ के कंधे पर अपना सिर रख लिया। महुआ कुछ नहीं समझ पा रही थी। उसने सहज ही उसके सिर पर हाथ फेरा तो पड़िया के कांटे चुभ गए। उसने सीईई किया तो जलिया ने सारी पड़ियां निकालकर दूर फेंक दीं।

'यह क्या किया महुआ ! मुझसे गलती हो गई !'

'नहीं साइगुती, तू क्या गलती करेगी ! तू तो भागवान है····।'

'और तू····?'

'मुझे फूलसुन्दरी का दरद नहीं देखा जाता····।'

'इत्ती-सी बात···!' महुआ के ओठ भी फूट पड़े।

'नहीं महुआ···तू हंसती है, हंस ले, पराया दर्द जो है।'

'महुआ ने अपने दांतों से ओठ बन्द करने की कोशिश की पर ऐसा करने में उसे मुसीबत हो रही थी। वह आश्चर्य में थी, आज जलिया को क्या हो गया है।

जलिया बोली, 'इत्ता दर्द सहकर हम अपना शरीर गुदाती हैं साइगुती, तू जानती है मैंने अपनी कलाई में चपुड़े[1] बनवाए थे, इसलिए कि झालरसिंह को चपुड़ों का अचार बेहद पसन्द है, मगर···।'

'मगर··· क्या हुआ ? क्या झालर···!'

'नहीं री, झालर ने कुछ नहीं किया, पर···' वह फिर सिसक उठी। उसके मन के बांध को जैसे कोई रह-रहकर फोड़ जाता था। उसका शरीर कांप रहा था। महुआ ने उसे पकड़कर एक टोंगी पर बैठा दिया और वह भी उसके पास बैठ गई।

जलियारो ने तब कल का सारा किस्सा कह सुनाया, 'सूरज अभी करईमुंडा की पहाड़ी पर ही सो रहा था कि उसने आवाज़ लगाई। मैं बाहर निकलकर

---

१. लाल चींटे

गई और उसे देखकर देखती ही रह गई। वह थोंडी[1] में शराब लेकर मेरे दरवाजे पर खड़ा था। मुझे देखते ही उसने थोंडी मेरी ओर बढ़ा दी। मैं गुस्से से आंखें निकालते हुए चिल्लाई, 'गु ब री ई ई !'

'वह बोला, 'चिल्ला ले मेरे सपनों की रानी, फिर चिल्लाना कब मिलेगा !'

'मैं क्रोध में थी। मैंने उसके गाल पर एक थप्पड़ दे मारा। उसने उसे सहलाया और बोला, 'यह भी महंगा नहीं है। एक और मार।' मैं भीतर भाग गई और बाबा के पास जाकर दुबक गई....।'

'कौन गुबरी ? वह बिझली का चेलिक न ?'

'हां महुआ, वही जो पिछले साल हमें बिझली में मिला था, जब हम वहां नाचने गई थीं। नाचते-नाचते जिसने मेरा अंगूठा दबा दिया था। मैंने उसे आंख दिखाई थी और उससे हटकर नाचने लगी थी। तुझे याद है महुआ, जब गायता के घर हम 'हुलकी' नाच रहे थे...?'

'क्या हुआ था जलिया ?'

'उसने मुझसे तम्बाकू मांगी थी।'

'उसकी इत्ती हिम्मत !'

'हां महुआ, बड़ा वेसरम है, माइलोटा। अब यहां भी आ धमका।'

'तो तूने उसे भगा क्यों नहीं दिया ?'

'वह भागे तब न ! मैं अन्दर गई तो वह भी दड़दड़ाते भीतर आ गया। मेरे बाबा के पास आकर बैठ गया और मुझसे बोला, 'जलिया जा मुरगुल[2] ले आ।'

'बाबा बोला, 'हां बेटी, कित्ते दिनों में आया है, जा ले आ और थोड़ी लांदा भी।'

'उसकी तरफ देखती मैं अन्दर चली गई और जब मुरगुल लेकर आई तो देखा, दोनों बड़ी गहराई से बातें कर रहे थे। वह कह रहा था, 'तू तो जानता है बाबा, याय्ते बहुत बूढ़ी है। हेलाड़[3] ने पिछले महीने घर कर लिया। अब

---

१. बांस की सुराही। थोंडी में शराब लेकर किसी लड़की के दरवाजे पर जाने का अर्थ उससे प्रेम जताना है।

२. सबेरे का नाश्ता ३. बहिन

घर का काम सम्हलता नहीं। मैंने सोचा, चलूं, बाबा के पास जाऊं और हाथ जोड़कर कहूं कि बाबा, मेरी तालपना[१] दे दो।'

' 'हां बेटा, वह तो तेरी है, मेरे देने न देने से क्या !' मेरे बाबा ने कहा।

'गुबरी ने मेरे हाथ से मुरगुल ले ली और सारी जावा[२] एक घूंट में डकडका गया। ऊपर से उसने लांदा ढाली, बोला, 'तो कब पेंडुल होगा बाबा ?'

'बाबा ने मेरी ओर देखा, तो मैं रोने लगी। उससे जाकर लिपट गई, 'नहीं बाबा, मेरा गला घोंट दे, पर....।'

'बाबा ने बड़े दुलार से मेरी पीठ पर हाथ फेरा—नादान पेड़गी, ऐसा नहीं कहते। पेन्डुल का नाम सुनकर तो तुझे कववाना[३] चाहिए। और मेरी बेटी, अब तो तू सयानी भी हो गई है।

' 'नहीं बाबा', मैंने सिसकते कहा था, 'मैं तेरे पास ही रहना चाहती हूं। तेरी देख-भाल करने वाला कौन बैठा है ! याय्ते तुझे बुढ़ापे में छोड़कर चली गई...।'

' 'हां पेड़गी, उसीका कर्ज तो उतारना चाहता हूं। उसीने तेरी सगाई इसके साथ की थी, जब तुम दोनों छोटे थे। मरते वखत कहती थी—मेरी दुलारी का पेंडुल इत्ती धूमधाम से करना कि सारा गांव चकरा जाए।'

' 'पर बाबा...!' मैं सिसकती जा रही थी। बाबा मेरे आंसू पोंछ रहा था और गुबरी धीरे-धीरे हंस रहा था। 'तू तो जानता है न, झालरसिंह...' मैं धीरे से बोली।

' 'हां बेटी, वह तेरा चेलिक है, तू उसकी मोटियारी है, बस इसके आगे कुछ नहीं।'

' 'क्या !'—मेरे तो कान फट गए, जब बाबा ने यह कहा। आंसू अपने आप सूख गए, बोली, 'क्या कहते हो बाबा ?'

' 'ठीक कहता हूं जलिया, घोटुल का सम्बन्ध इससे ज्यादा नहीं है। तू उसकी गीकी-यार हो सकती है, उसकी जीवाल[४] हो सकती है पर औरत नहीं। घोटुल इसकी जिम्मेदारी नहीं लेता। मैं भी तो एक दूसरी पेड़गी का चेलिक था अपनी जवानी में, परन्तु पेन्डुल हुआ तेरी मां से, जिसे मैं अच्छी तरह जानता भी न था। गुबरी तो तुझे जानता है जलिया।' मेरा सारा साहस जा चुका था। जब

---

१. मंगेतर २. पेज ३. गाना ४. प्रेमिका

मेरा बाबा ही गला घोंटना चाहता है तब मैं क्या कर सकती थी ! बाबा ने कहा था, 'और इसके बाद भी गुबरी का तुझपर अधिकार है, पेड़गी। इसकी हेड़ाल तेरे तमुड़[1] के साथ बिहाई है।'

' 'जानती हूं बाबा।'

' 'फिर जानकर अजान क्यों बनती है ? यह कल पंचायत भरा सकता है और उसमें दूध लौटाने की बात कह सकता है। मेरे और लड़की तो है नहीं जो उसे बिहाय दूं। और जलिया, इसमें बुराई क्या है ! यह झालरसिंह से ज्यादा हट्टा-कट्टा और तगड़ा है। घर भी भरा-पूरा है, तुझे किसी तरह की तकलीफ नहीं होगी।'

'तब गुबरी ने बाबा के मुंह से शब्द छीन लिए थे, 'क्या कहते हो बाबा, तकलीफ होगी और जलिया को ! जहां उसके पैर में कांटा चुभेगा, मैं खून बहा दूंगा। मैंने उसे प्यार किया है बाबा, पूरे मन से।'

' 'हां बेटे, क्यों न करेगा !'

' 'तो फिर ?'

' 'बस, इसी महीने के आखिर में। जरा गायता से पूछ लूं। दिन वह तय कर दे और फिर धूमधाम से अपनी पेड़गी का पेन्डुल कर दूं, ताकि उसकी याय्ते देपुड़ से देखे और उसकी आत्मा को सांति मिले।'

'गुबरी हंसता हुआ लोंन से बाहर आ गया था। दरवाजे पर खड़े होकर उसने मुझे बुलाया था। मैंने जाने से इन्कार कर दिया तो बाबा न माना, बोला, 'जा बेटी, इस तरह नहीं रूठते।'

'मैं बाहर गई तो उसने मेरा हाथ पकड़कर मुझे अपने पास खींचा और पास लाकर मेरे बालों में दो पड़ियां खोंसते हुए बोला, 'खबरदार, जो अब झालर से बातें कीं।'

'लौटकर जब भीतर आई तो मैं खूब रोई। बाबा घंटों समझाता रहा, पर मेरा मन न माना। महुआ, तू ही बता क्या करूं ?'

'क्या करेगी मेरी साइगुती ! हम औरत की जात कर ही क्या सकती हैं ! मर्दों ने मिलकर अपनी मरजी के कानून बना लिए हैं और उन्हें समाज का

---

१. छोटा भाई

जामा पहना दिया है। जब कभी हम विरोध करती हैं, वे हंसते हुए कह देते हैं, 'मेरी अच्छी पेड़गी, तेरा दर्द समझता हूं पर क्या करूं, समाज जो कहता है। और फिर हम बूढ़े हैं, दुनिया देखी है। सब कुछ तो तेरी भलाई के लिए ही करते हैं।' मैं तो सुनते-सुनते थक गई हूं, जलिया। मैं सोचती हूं, यह समाज भी कैसा है जहां भेड़िए बसते हैं! तू तो जानती है पाली का किस्सा? झिरिया की कहानी?'

'हां महुआ, मैं तो सोचती हूं, उन्हींकी तरह मुझे भी जिन्दगी से हाथ धोना पड़ेगा।'

'नहीं जलिया, बड़े देव ने हमें जीने के लिए इस दुनिया में भेजा है। सारी दुनिया उसने कांटों से भर दी है। वह हमारी परिच्छा लेता है। वह हमारे धीरज और साहस को तोलता है। जिन्दगी मिली है तो साहस के साथ उससे पार उतरना चाहिए जलिया, नहीं तो झिरिया की जो गति हुई, सबकी होगी। हम एक जनम तड़प लेंगे परन्तु मरकर जनम-जनम तक तो न तड़पते रहेंगे। वह झिरिया...' उसने राजामहल की ओर अंगुली दिखाई और गिरे मन से बोली, 'आज भी इस महल में तड़प रही है बेचारी। न जाने कब तक तड़पेगी! ....और जलिया, क्या तू भी यह चाहेगी?'

'नहीं दीदी, कभी नहीं।'

'तो धीरज धर। अपने मन को पत्थर बना। तू तो नागफनी का फूल थी जलिया, हमेशा मुसकराती रहती थी। इसी मुसकान के साथ तू गुबरी के घर जा और प्यार से अपनी जिन्दगी बिता, ताकि अगले जनम भोगने के लिए कुछ न बच जाए।'

जलियारो टोंगी में बैठी उसी तरह सिसकती रही। झालरसिंह से उसने पूरे मन के साथ प्रेम किया था। उसे सपने में भी कल्पना नहीं थी कि उसके प्रेम की डोर बीच में टूट जाएगी। झालर जब यह सुनेगा तो क्या कहेगा? महुआ अपने दुःख को भूलकर जलिया के दुःख में शुमार हो गई थी। वह जो कुछ सोच रही थी, उसका अनुभव शायद उसे भी हो रहा था। बोली, 'चिन्ता न कर जलिया, झालर भी उसी समाज का ठेकेदार है। पहले वह तुझे पिरेम भरे उल्टे-सीधे ताने देगा और फिर तेरे जाने के बाद तुझे उसी तरह भूल जाएगा जैसे यह घोटुल पेंडुल के बाद हर चेलिक और मोटियारी को भूल जाता है। हम धरती

माता की सन्तान हैं जलिया, वह धरती जो अपने सिर पर इत्ता बड़ा नीला आसमान सम्हाले है। वह जरा डिग जाए तो आसमान टूटकर सारी दुनिया को खतम कर दे; परन्तु नहीं, वह नहीं डिग सकती। धरम पर दुनिया अड़ी है। धरती भी धरम पर धरी है। अपना धरम पाल, बस जा अपना नया घर बसा, अपने पुराने जीवाल को भूल जा, घोटुल को भूल जा और गुबरी को सच्चे मन से मोइदो[1] मान। हम ही तो घोटुल में गाते हैं :

नियारा जोर तोर लयोर रोय हेलो,
जो दिरे ओनदोय किति रोय हेलो
संगी रे जोर तोर लयोर रोय हेलो—
अदेरे राजो पुरो रोय हेलो
इडेके बर पुंदकी रोय हेलो।'[2]

महुआ उठकर खड़ी हो गई। उसने जलिया के आंसू उसीके आंचुर के छोर से पोंछे। कंधा पकड़कर उसे उठाया और दोनों घोटुल के उस वातावरण में समा गए, जहां कोई खेल रहा था और कोई किस्सा कह रहा था, किसी राजा और उसकी रानी का, किसी चेलिक और उसकी मोटियारी का। राजा को सुन्दरवन जड़ी-बूटी की तलाश में जाना पड़ता है और रानी उसके वियोग में हंस, कबूतर और तोतों से बातें करती है। दिन-रात आंसू बहाती है। मौसम अपने पंख फैलाए उड़ता जाता है, पर राजा लौटकर नहीं आता। और जब लौटकर आया तो उसने देखा, उसकी फूलों-सी हंसती रानी धरती की गोद में सोई है। दो दिन उसने रोकर बिताए और फिर तीसरे दिन नई रानी ले आया। झालरसिंह भी कट्टुल के पास बैठा है और किसी चेलिक और मोटियारी की कहानी सुना रहा है। दोनों प्रेमी अलग-अलग बिहाव दिए गए। पहले चेलिक का बिहाव हुआ किसी दूसरी लड़की से। उसकी मोटियारी ने प्रेम के हजारों ताने दिए, रो-रोकर आंसू बहाए पर वह यह कहता रहा, 'तन ही तो वहां दे रहा हूं रानी, मन तो तेरे पास होगा।' काश! कोई मन को छू सकता,

---

१. पति
२. एक घोटुल-गीत—यहां तुम्हारा एक प्रेमी था। अब तुम उसे छोड़कर जा रही हो। तुम उसे अब अकेला छोड़कर जा रही हो। तुम इस घोटुल में कभी न आ सकोगी। परन्तु तुम्हें यह शीघ्र पता लग जाएगा कि विवाह की जिंदगी कैसी होती है।

उसकी गहराई में उतर सकता, कोई उसे देख सकता। मन की दुहाई देने वाले कितने झूठे हैं ! इस दुनिया में सचमुच यदि कुछ है तो वह तन है, जिसे माटी कहा जाता है। माटी निःसार नहीं होती। वही माटी हमारा पेट भरती है। उसी माटी में हमारे बियावान जंगल खड़े हैं। नदी-नाले लहराते हैं। हमारे घर, खेत और खलिहान माटी पर ही तो हैं। उसीपर नुका और जोंदरा के झाड़ इठलाते हैं। उसी माटी में धन है और वही माटी हमारा जीवन है—महुआ यह सब शायद अपने मन में सोच रही थी, एकाएक जोर से चिल्लाई, 'ठहर झालर।' सब उसकी ओर देखने लगे। 'मैं एक बात पूछना चाहती हूं ?'

'क्या बात है ?' एक हलकी-सी फुसफुसाहट उस घोटुल में घूम गई।

'तू कहानी कह रहा है न ?'

'हां, कह तो रहा हूं, क्यों ?'

'मैं पूछती हूं, तेरी कहानी का चेलिक यह कहकर छुट्टी पा गया कि मैं उसे तन ही तो दे रहा हूं रानी। यदि यही बात मोटियारी कहे तो····?'

'तो क्या !'····उसने बड़े अचरज से चारों तरफ देखा, 'तो कुछ नहीं।'

'कुछ नहीं !' महुआ ने ज़ोर देकर पूछा।

'पागल हुई है महुआ, मैं तो कहानी कह रहा हूं और कभी कोई कहानी सच हुई है !'

'और झूठी कहानियां सुनते-सुनते यह सारी दुनिया भी झूठी हो गई है। मैं पूछती हूं, यदि तेरी मोटियारी किसी और आदमी से पेन्डुल करे तो तू क्या करेगा ?'

सारे चेलिक और मोटियारी मुंह फाड़े महुआ को देखने लगे।

'मेरी जलिया ऐसा नहीं कर सकती महुआ।'

'तेरी कहानी का झालरसिंह ऐसा कर सकता है ?'

'महुआ ऽऽ !' वह चिल्लाया, 'तू सुलकसाए के पिरेम में पागल हो गई है और अलवा-जलवा बकती है।'

'नहीं झालर, वह ठीक कहती है,' जलियारो ने अकड़ते हुए कहा, 'उसके प्रश्न का तुझे उत्तर देना होगा।'

'ज···लि····या ! तू···!' झालर ने मुंह फाड़ दिया।

'हां झालर, मैं तुझसे पूछती हूं, समाज के एक बहुत बड़े ठेकेदार से। तू

आजकल इस घोटुल का सिरदार हो गया है न ?'

'तो सुन,' वह बोला, 'मोटियारी ऐसा नहीं कर सकती। वह जिसे तन देगी उसीकी होकर उसे रहना पड़ेगा। तन और मन का भेद सिर्फ हमारे लिए है, हमारे लिए···। मैं तो कहता हूं कि औरत के मन होता ही नहीं।'

'यानी औरत मुरदा होती है !'

'नहीं जलिया, मेरा यह मतलब····।'

'तो यह कहो कि तुम मर्दों ने उसके मन को दीमक की तरह खा डाला है। लिंगो की दुनिया में औरत-मरद का भेद नहीं रे, झालर ! भेदभाव की ये दीवारें तुम्हारी बनाई हैं। तुम हाथ में डुगडुगी लेकर बन्दर की तरह औरतों को नचाते हो और जब औरत अपना ढोल पीटना चाहती है तो तुम ढोल की दरांत ढीली कर देते हो और कहते हो—कानून में लिखा है कि तुम ढोल नहीं पीट सकतीं।'

'जलिया···महुआ···! तुम दोनों को आज क्या हो गया है ?'

जलियारो अपने आप खूब ज़ोर से हंस पड़ी। उसकी हंसी झाईं बनकर रात की चांदनी में बिखर गई।

'धन्य है महुआ, मेरी साइगुती ! तूने मुझे सर्री दिखाई है, मातुल तेरा मनोरथ पूरा करे।···मेरे डगमगाते पैर अब ठहर गए हैं।'

'क्या हुआ, तुम लोग कुछ कहोगी भी ?'

'कुछ नहीं रे, आंख में छोटी-सी कनी चली गई थी। महुआ ने निकाल दी, दरद दूर हो गया।' वह बराबर हंसती रही। घोटुल की परछी से वह अपनी गीकी उठा लाई और उसे महुआ की गीकी के बाजू से उसने बिछा दिया। झालर चक्कर में पड़ गया था। वह कुछ न समझ सका, उसने पूछने की कई बार कोशिश की पर वहां बताए कौन ! उसने जलियारो की बांह पकड़ ली। जलियारो ने झटके से उसे झिड़क दिया, बोली, 'अब और क्या छीनता है रे ठेकेदार, इसके आगे तेरे कानून का वश नहीं है।'

तब रात काफी भीग चुकी थी और नरवा की कगारों को चीरकर ऊदा की लड़खड़ाती आवाज़ साफ सुनाई दे रही थी।

ढढ्डा ढढ्डा ढढ्डा ऽऽ।

सारा गांव ढोलों की आवाज़ के साथ गूंज उठा। घर-घर में खुशी के गीत गाए जाने लगे। गांव की एक बेटी का बिहाव हो और किसी को चैन मिले! सारा गांव जुट गया। नाग-नागिन के बिहाव में दुनिया भर की सलमल। एक-एक भोपड़ी से लेकर घोटुल तक शोर। हर गली और चौरस्ते में बिहाव के किस्से। बूढ़े और अधेड़ तब अपनी बीती रंगीन ज़िन्दगी के भूले-बिसरे चित्र उतरते देखते हैं। जो अभी उठ रहे हैं वो नये सपने गढ़ते हैं। ज़िन्दगी का सबसे हसीन दिन! सभी इसकी आतुरता से प्रतीक्षा करते हैं। जलिया के लोंन का भीतर-बाहर भरा था। आने वालों की भीड़ का ठिकाना नहीं। छोटे-छोटे बच्चे भी टांगों के नीचे से निकलकर आगे बढ़ने को आतुर। जलिया को चारों ओर से उसकी सहेलियां घेरे थीं परन्तु उसकी स्थिति अजीब थी। वह न तो खुशी से हंस सकती थी और न दुःख से रो सकती थी। भालरसिंह को वह भूल जाए, कैसे हो सकता है! जिसके साथ न जाने कितनी चांदनी रातें उसने बिताई हैं, काजल-सी अंधेरी रातों में उसके हाथ में हाथ डालकर वह गांव की गलियों से गुज़री है। जुनरी के खेतों से लेकर दीपा तक में उसका साथ रहा है। हर दुःख-सुख में दोनों एक थे। बीयावान जंगल और नदी-नालों के तीर कितने घूमे हैं! दोनों ने सपनों के कितने बड़े-बड़े महल गढ़े थे। जलियारो को उसकी सखियां घेरे थीं। वे उसका सिंगार कर रही थीं। शाम को घोटुल में बहुत बड़ा समारोह होने वाला है। उसमें जलिया को सारे चेलिक और मोटियारी विदाई देंगे। उसकी सखियां उसके बाल गूंथती हैं, परन्तु उसका मन वहां नहीं है। वह कभी महुआ, सागौन और गोटमरे के नीचे, करौंदे और जरिया की भुरमुट में घूमता है तो कभी कोदों, जुनरी और मका के खेतों में खड़ा होकर दूर नीले आसमान को देखता है, जहां धरती आकाश से मिलती है। न जाने कब से ये दोनों मिले हैं और आज तक कभी नहीं बिछुड़े। नदी की घाटी, ऊंचा-नीचा पठार, और तेन्दू के पत्ते सब एक-एक कर उसके सामने आते हैं।

पतर टोड़ली काखोरे भाकिली
संगाइली वाटो पाखे,

ताकला कोल्हे परा लुडंगी धरली
कोनी बोट नोई बाखे
हाट फिटी गेला हाट रे दिन हेला
जांग फिटी गेला मांसे
सिरलिंगा झिरलिंगा राइकेरा झोंड़ी
खेलाबी टोकसा गरी
गाड़ी बाइल परा बेसनी छेड़िबी
कतक होइबी ऊब्रा करी।[1]

'सच कहता है ?'

'हां मेरी रानी, बिलकुल सच । बैल की नथ से बड़ी नथ तुझे पहनाऊंगा । नरायनपुर के हाट की माला तो तूने खूब पहनी है, अब जगदलपुर से तेरे लिए मूंगे की मालाएं लाऊंगा ।'

'उत्ती दूर से ?'

'तेरे लिए तो आकाश से तारे तोड़कर ला सकता हूं । वह देख, जितने तारे चमक रहे हैं न, सबके सब तोड़ लाऊंगा और तेरी आंचुली में लाकर टांक दूंगा ।'

'नहीं रे, ऐसा मत करना । बेचारा देंपुड आंसू बहाएगा ।'

'पर मेरी गोरी तो हंसेगी न !'

---

१. पत्ते तोड़कर कांख में भरती जाती हूं ।
सड़क के किनारे बंडल बना-बनाकर रखे हैं ।
(सांझ होने पर) घर की ओर थके सियार की भांति लौट रही हूं ।
किसी भी तरफ मैं नहीं पहुंच पाई ।
हाट छूट गया, आठ दिन से भेंट नहीं हुई ।
एक माह से तेरा स्पर्श नहीं मिला ।
रात को कौन कहे, मैं दिन को चला आता—तेरे पुरुष का जो भय है ।
सिरलिंगा-झिरलिंगा, राइकेरा का नाला—
मछली पकड़ने की बांसी से मैं मछली पकड़ूंगी ।
गाड़ी के बैल के समान तुम्हें नथ पहनाएंगे,
उतावली क्यों दिखाते हो ?

'स्वार्थी कहीं का ! एक को उजाड़कर दूसरे को बसाना, कहां का न्याय है यह ?'

'पगली···अब तो पिटारी खोलने लगी। मैं जानता हूं तू बड़ी बातूनी है।'

'तुझसे कम !'

'तेरी सही, ये पत्ते तो उठा।'

'चल तू रख अपनी पीठ पर। इसके ऊपर मैं लदूंगी।'

'मेरी पीठ पर !'

'हां रे, तेरी पीठ पर, गधे का मजा लूंगी।'

'मुझे गधा बनाती है ?'

'अहा ऽ ऽ ऽ हा ऽ ऽ ऽ !'

'हि हि ह हि हि ऽ ऽ ऽ !'

'क्यों रे झालर !'

'हूं'

'मुझे छोड़ेगा तो नहीं, सोरी डोंगरा ने जो किया वह तो तू नहीं करेगा ?'

'नहीं मेरी जलिया, कभी नहीं।'

'सोरी डोंगरा भी यही कहता था अपनी झालो से, पर झालो का बिहाव हुआ मरंई के साथ और सोरी हंसता रहा। उसीने आगे बढ़कर झालो को बिदा दी थी। तू तो सब जानता है रे।'

'हां जलिया, पर मैं तो ऐसा नहीं होने दूंगा। हुआ तो उसे बिदा देने के बदले खुद अपने को चीरकर चार टुकड़े कर लूंगा।'

'वाह मेरे सोरी अ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ !'

'नहीं, नहीं···' जलिया अपने आप चिल्ला पड़ी तो उसकी सारी सखियां आश्चर्य में पड़ गईं।

'क्या हुआ ? क्या हुआ, जलिया ?'

जलिया को जैसे किसीने तीली छुला दी थी। वह एकदम जाग उठी। न जाने कितनी दूर चली गई थी। वह शरमा गई। सखियां क्या सोचेंगी। महुआ बोली, 'कब की याद कर रही है मेरी साइगुती।'

जलिया महुआ से लिपट गई और रोने लगी, 'रोते नहीं जलिया, यह तो सुख का बेर है। हमारी जिन्दगी ही बड़े देव ने कुछ ऐसी बनाई है। क्या-क्या

याद कर रोएंगे ? एक-दो बातें हों तो याद की जाएं । जब हम खुद अपने को नहीं पहचानते तब से घोटुल जाने लगते हैं और जब सब कुछ जानने-पहचानने लगते हैं तो कोई आकर हमें लूट ले जाता है । हमारे भाग में ही लुटना लिखा है जलिया । कितने चेलिक हमसे प्यार जताते हैं , हमें पड़िया देते हैं, परन्तु इस समय कोई आकर हमारी मदद नहीं करता । उनके लिए जैसे सब खेल है ।'

जलिया ने अपने आंसुओं को पोंछा, 'हां दीदी, पर न जाने क्यों आज मेरा मन भर-भर आता है । जो घटनाएं भूल चुकी थी, वह भी आज ताजी होकर याद आ रही हैं । क्या करूं, साइगुती !'

'मैं बताऊं ?'

जलिया ने थूक लीलते हुए बड़ी दयनीय आंखों से उसकी ओर देखा, 'सब भूल जा ।'

दूसरी लड़कियां, जो वहां खड़ी थीं, एक साथ हंस पड़ीं ।

'हां जलिया, सब भूल जा और याद करने लग अपने नये साथी की, नये लोंन की, नये गांव की, नई सखियों की ।'

'कैसे करूं महुआ, जिन्हें देखा नहीं, जिन्हें जानती नहीं, उनकी याद करूं ! पर कैसे दीदी ? मुझे तो यही नकटाघाट दिखता है । यही गेंवड़ा, यही जंगल···· और वही झालर मेरा सच्चा साइगुती । कहां है वह महुआ ?'

'घोटुल में । आज संझा को उत्सव है न । उसीकी तैयारी कर रहा है ।'

'मेरे उत्सव की तैयारी ! और वह कर रहा है !'

'हां जलिया, और कौन करेगा, वह तो सिरदार है न !'

'तू ठीक कहती है,' जलिया की आंखों से फिर ओस जैसी बूंदें ढुलकने लगीं, 'वह सिरदार है और मैं···मैं तो एक मामूली मोटियारी हूं महुआ, जैसी और मोटियारियां हैं इस घोटुल में ।'

'तू रो रही है ! मन कड़ा कर । रोने में क्या धरा है !'

गांव का गायता वहां आ गया । उसने जलिया को पुकारा । वह उठकर उसके पास चली गई । 'मेरी नियार,' गायता ने उसे गले लगा लिया, 'कित्ती सजी है री तू आज, एकदम बदल गई ! सर्री में मिलती तो पहचानना मुश्किल हो जाता !'

'हां दादाल,' जलिया ने अपना सिर जैसे ही उठाया कि उसकी आंखों के

आंसू गायता के पैर में गिर पड़े, 'यह क्या बेटी, तू रो रही है ! ऐसे सुख के दिन !'

'यह तो तुम सब लोगों के सुख का दिन है दादाल। आज तुम्हारे सिर से एक बड़ा भार जैसे उतर रहा है।'

'क्या कहती है बेटी, हमारी जाई और हमारे लिए भार ?'

'हां दादाल, हम कुछ ऐसी ही हैं, इस दुनिया में। भार तो उतारने वाला बेटा होता है। मैं लिंगो से कहूंगी, यदि मैं मां बनूं तो मुझे सब बेटे ही दे।'

गायता के सिल्वी तिरछे हो गए। उसने जलिया का मुंह पोंछा, बोला, 'पगली, रोना-गाना तो जिन्दगी भर है। आज तो मन भर हंस ले।'

'हां दादाल, हंसूंगी, जितना तुम कहोगे उतना हंसूंगी,' जलिया ने हंसने की कोशिश की। सब उसे देखने लगे। महुआ बोली, 'इसे थोड़ी देर के लिए मेरे साथ अकेली छोड़ दो, दादाल। सब ठीक हो जाएगा।' गायता ने सारे लड़के-लड़कियों को इशारा किया और सब वहां से चले गए। गायता ने नज़र भरकर जलिया को देखा तो उसकी भी आंखें भर आईं। आंसू पोंछता हुआ वह भी फरके के बाहर हो गया।

सांझ झुक आई थी। घोटुल के चारों तरफ आम और तेन्दू के पत्तों के तोरण लगे थे। घोटुल की सफाई विशेष रूप से की गई थी। बाहर फरके पर दो झाड़ काटकर लगाए गए थे। वहां घोटुल का कोटवार और निरोसा खड़े थे। आज यहां जो भी आता, ज़्यादा खुश था। अन्दर आकर सब मसनी जुहार[1] करते और अपने काम में लग जाते। ढोल, नगाड़े, टिमकी, किरकी, बांसुरी सभी बाजे वहां जमा हो गए थे। बीच की आग ज़्यादा तेज़ थी। झालरसिंह वहीं एक कट्टुल पर नीचे सिर झुकाए बैठा था और वह बीड़ी का धुआं तेज़ी से छोड़ रहा था। एक बीड़ी खतम होती कि दूसरी निकाल लेता। लगता था, उसके मन में भी कोई बहुत बड़ा दर्द है और उसीको वह बीड़ी के धुएं से जला देना चाहता है।

'सिरदार !'

उसने एकदम गर्दन उठाई। अद्धी नीचे फेंक दी, और उठकर दरवाज़े पर

---

१. मोटियारियां चेलिकों को चटाई देकर जुहार करती हैं।

आ गया। जलिया वहां खड़ी थी। उसके साथ महुआ थी। आज सिरदार के नाते उसे जलिया का यहां विशेष स्वागत करना था। उसने कौड़ियों की एक माला जैसे ही जलिया के गले में डाली कि दोनों एक साथ फूट पड़े और एक दूसरे के गले से लिपट गए।

महुआ चिल्लाई, 'सि···र···दा···र !'

झालरसिंह तुरन्त अलग हो गया। उसने अपनी पगड़ी से आंसुओं को पोंछा, 'जुहार साइगुती !'

'जुहार, जुहार !' सारे चेलिक और मोटियारी एक साथ बोले।

जलिया ने अपने आंसू पोंछे और जुहार का जवाब जुहार से देकर भीतर आ गई। उसे महुआ ने कट्टुल पर बैठाया। सब मोटियारियां घेरकर खड़ी हो गईं। उसके बालों को छोड़कर उन्होंने फिर से कंघी की। एक लम्बी चोटी डाली। उसमें लाल नीला फुंदरा लटकाया। उसके बालों में खुसी दर्जनों कंघियां निकालकर फेंक दी गईं और सिरदार की ओर से घोटुल के द्वारा दी गई तीन-चार कंघियां बड़ी होशियारी से खोंस दी गईं। गले में कई मालाएं डाल दी गईं और उसके साथ ही सब एक साथ गा उठीं :

सिरपुर हेलो डोरी निवेदेके दाकाट रोय
सांगो निदवेके काकाट रोय[1]

जलियारो फिर ज़मीन छोड़कर आकाश में उड़ने लगी। पिछले साल ही तो सोमा का बिहाव हुआ था। तब उसने खुलकर भाग लिया था। उचक-उचककर वह सब काम करती थी और अपनी कमर लचकाकर नाचती और गाती थी। बिहाव सोमा का हो रहा था परन्तु खुशी उसे थी। तब सिलिंगदार भी यहां था। सोमा कुछ दिन सिलिंगदार की गीकी-यार रह चुकी थी। इसलिए उसे चिढ़ाने के लिए जलिया और महुआ दोनों ने एक साथ गाया था :

बरंग सरपार ते, उदीतन सिरदार,
....

सरपार ताहे हनद।
ताने इसे पांयनदी,

---

१. बिदा-गीत—आज तुम कहां जा रही हो मेरी साथी ? आदि-आदि।

अयो अयो इनदू
तुत ताने ओनदी सेइदार[1]

इस गीत को सुनकर सोमा झल्लाई थी और खीझकर खूब हंसी थी। उसकी खीझ भरी हंसी जलिया के सामने चमक उठी। उसने सिलिंगदार का चेहरा देखा, वह भवें चढ़ाए था परन्तु गुस्से से नहीं प्यार से। उसने जलिया की पीठ ठोंकी थी—'शाबास जलिया, खूब गाया! जब तेरा बिहाव होगा और झालरसिंह कहेगा—निकुन लेवाल वातोर नूनी,[2] तब मैं भी तुरन्त कहूंगा, हलय देकी जुलय दे।[3] तब तू जानती है, ये चेलिक क्या करेंगे? तुझे सचमुच झुला देंगे। मैं सरदार जो हूं। मेरा कहना ये भला कैसे टाल सकते है!' जलिया ने तब सिरदार को जीभ दिखाई थी और झालरसिंह के पास जाकर खड़ी हो गई थी—इसे तुम सब जानते हो न, यह भी तुम लोगों के दांत तोड़ देगा। सारे सदस्य एक साथ हंस पड़े थे। जलिया के कानों में उनकी हंसी जैसे अट्टहास बनकर गूंज गई। उसने अपने दोनों कानों पर हथेलियां रख लीं। महुआ ने यह देखा तो सब समझ गई। जलिया की मानसिक स्थिति को वह भली प्रकार समझ रही थी।

झालरसिंह खड़ा-खड़ा यहां-वहां देख रहा था और बार-बार अपने आंसू पोंछ रहा था। महुआ ने जलिया को ढेर-सी पड़ियां दीं और एक-एक पड़िया सारे चेलिकों को भी बांट दी। चेलकों ने पड़ियां अपनी-अपनी मोटियारियों को दे दीं और उन्होंने बड़ी सावधानी से अपने बालों में खोंस लीं। जलिया ने जब झालर को पड़िया देने हाथ बढ़ाया, तो वह कांपने लगा। पड़िया उसके हाथ से ज़मीन पर गिर गई। महुआ ने आगे बढ़कर वह उठा दी और तेज़ी से बोली, 'जलिया!'

---

१. सरदार सड़क के बीच क्यों बैठे हो? वह सड़क से आ रही है।
तुम उसे पकड़ लो।
वह कहेगी—'नहीं, नहीं सिरदार।'
तुम उसे खींचकर जंगल ले जाना।

२. हम तुम्हें लेने आए हैं।

३. चलो उसे हलराएं, चलो उसे झुलाएं।

जलिया संभल गई। उसने अपने हाथ को पत्थर जैसा कठोर बना लिया और बनावटी हंसी से पड़िया झालरसिंह की हथेली में रखकर वहां से चल दी। झालरसिंह ने वह पड़िया तीन-चार बार लौटाई। उसे गौर से देखा। फिर एक उड़ती नज़र उसने घोटुल की सारी मोटियारियों पर डाली। शायद वह सोच रहा था कि यह पड़िया, वह किसके बाल में खोंसे। उसकी नज़र चारों तरफ घूमकर जलिया पर पड़ती तो उसे एक झटका-सा लगता। वह अपने को संभाल लेता और फिर यहां-वहां देखने लगता। उसके पैर जैसे लड़खड़ाने लगे, हाथ कांपने लगे। महुआ यह सब देख रही थी। उसकी आंखों में भी आंसू आ गए थे। वह झालर के पास चली गई, बोली, 'मेरे बालों में खोंस दे झालरसिंह।' झालरसिंह के हाथ में जैसे किसीने सुई चुभा दी थी। उसे बड़ी लज्जा आई।

'गलत न समझना महुआ।'

'नहीं झालर, मैं सब जानती हूं।'

झालर ने किसी मशीन की तरह धीरे-से कंघी महुआ के बालों में खोंस दी और जाकर कट्टुल में बैठ गया। जलिया ने दौड़कर महुआ को लिपटा लिया, 'मेरी प्यारी साइगुती, मेरी अच्छी साइगुती!'

अब जलिया को धुइंगा बांटनी थी। घोटुल का यह दूसरा सबसे बड़ा रिवाज है। उसने अपनी गुदेपोट निकाली। चेलिक और मोटियारी एक कतार बनाकर बैठ गए थे। जलिया एक-एक के पास आती और चुटकी से लेकर हर-एक को तम्बाकू दे देती। फिर आगे बढ़ जाती। आखरी कोने में झालरसिंह बैठा था। वहां जाकर जलिया के पैर एकदम रुक गए और वह बिलख-बिलखकर रोने लगी। महुआ ने दौड़कर उसे पकड़ लिया।

जलिया अपने आंसू रोक न सकी थी। उसके बांध से जैसे पानी की कोई लहर आकर टकरा गई थी। वह बोली, 'नहीं महुआ, मुझसे धुइंगा नहीं दी जाएगी।'[1]

'जलिया ऽ ऽ ऽ!' महुआ ने इस बार फिर कठोर अनुशासन का परिचय

---

१. घोटुल का नियम है कि जो मोटियारी घोटुल के जिस सदस्य से ब्याह करना चाहती है उसे तम्बाकू नहीं बांटती।

दिया, 'तू जानती है क्या कह रही है ?'

'हां ऽ ऽ ऽ' जलिया सिसकती रही और वहीं खड़ी रही। झालरसिंह नीचे सिर किए था। उसके आंसू धल में गिरकर गोल-गोल फुग्गे बना रहे थे।

'जलिया, हाथ बढ़ा और झालरसिंह को धुइंगा दे।'

'नहीं दीदी, यह मुझसे न होगा।'

'होगा, क्यों नहीं होगा ?' झालरसिंह अपने आंसू पोंछकर एकदम खड़ा हो गया था।

जलिया के हाथ से गुदेपोट छूट गई। उसने आंख फाड़कर झालरसिंह की ओर देखा। झालर जैसे आसमान की ओर देख रहा था। अपना सीना निकाले वह किसी सिपाही की तरह खड़ा था।

'हां जलिया, धुइंगा दे,' उसने पत्थर जैसा सीधा हाथ सामने बढ़ा दिया। महुआ ने गुदेपोट जलिया के हाथ में रख दी और जलिया ने अपनी पत्थर जैसी आंखों से उसकी ओर देखा और एक चुटकी धुइंगा उसकी हथेली में रखकर वह सनसनाते तीर की तरह भीतर चली गई।

चेलिक और मोटियारी ताली पीटकर गा उठे :

रे रेला रे रेलो रे रेला।
नियारा मनदाना लोनी रोय हेलो
लोनी गाजुर हिन्दु रोय हेलो।[१]

जलिया के कानों में पाटा के ये बोल कांटे की तरह चुभ रहे थे। कभी उसने भी इस गीत को बड़े प्यार और लगन के साथ गाया था। आज घोटुल से बिछुड़ना उसके लिए भारी पड़ रहा है। उसकी वेदना का अन्त नहीं है। पालने से छटपटाकर जब बचपन ने आंख खोली थी तो उसने अपने को घोटुल की देहली पर खड़ा पाया था, परन्तु आज यौवन ने अपने दरवाज़े खोलकर उसे लूट लिया। ज़िन्दगी में वह कभी किसी घोटुल के अन्दर पैर नहीं रख सकेगी। उसका घर ही उसका घोटुल होगा और उसके बच्चे उसके चेलिक और मोटि-यारी !

सरदार झालरसिंह ने उत्सव समाप्त होने की घोषणा की तो सब अपनी-

---

१. घोटुल का विदा-गीत—यह तुम्हारा घर था। तुम्हारी बातें कितनी मज़ेदार होती थीं।

अपनी गीकी से बंध गए। जलिया की गीका झालरसिंह की गीकी के साथ ही बिछी, परन्तु वह वहां न जा सकी। वहीं खड़ी-खड़ी वह हलके-से अंधेरे में दोनों गीकियों को देखती रही। अतीत की विस्मृत स्मृतियां एक-एक कर उसके मस्तिष्क में चक्कर काटने लगीं और उसने अपने को गाड़ी की लीक पर खड़ा पाया। झालरसिंह थोड़ी देर तो कट्टुल पर बैठा रहा परन्तु फिर चुपचाप भीतर चला गया और अपनी गीकी से बंध गया। महुआ करवटें ले रही थी। उसने देखा, जलिया अभी भी जहां की तहां खड़ी है। धीरे-से उठकर वह गई और जलिया का हाथ पकड़कर झालरसिंह के पास ले गई। झालर ने जलिया को संभाला तो उसने सर्प की तरह एक अंगड़ाई लेकर ज़मीन पर अपना सिर पीट लिया। सारी रात जलिया और झालरसिंह के सिसकने और फुसफुसाने की आवाज़ आती रही।

मुर्गे की 'कुकड़ू कूंऽऽऽ,' चिड़ियों की 'चीं चीं चीं' और कौवे की 'कांव-कांव' ने सारे घोटुल को जगा दिया था। सब अपनी-अपनी गीकी बगल में दाबे घर जा रहे थे। जलिया ने भी धीरे-धीरे अपनी गीकी समेटी। उसे बगल में दाबी। झालरसिंह की ओर देखा। घोटुल के एक-एक कोने पर नज़र डाली। उसने मलगे पर बने उन चित्रों को पास जाकर देखा जो उसने और झालरसिंह ने मिलकर बनाए थे। एक दूल्हा, दुल्हिन को पीठ पर लादे लिए जा रहा है। जलिया ने यह चित्र बनाते समय झालर से कहा था, 'तेरी पीठ पर लदूंगी तो सरीं भर चिहूंटी काटते जाऊंगी। संभलकर रहना, वरना हंसी तेरी होगी।' उसने एक हिचकी ली और तेज़ी से घोटुल के बाहर निकल आई। फरके के बाहर खड़े होकर उसने घोटुल को सिर नबाया, आंख भर कर उसे देखा। पूरब की लाली ने घोटुल के आंगन में सिंदूर बिखेर दिया था।

जलिया के बिहाव की धूम गांव भर में मच गई। चेलिक और मोटियारी गीत गाते, और उचटते अपना काम करने लगे।

लयोर ततले मंदा री सांगो
मन्दो देरी कोकोती वाकोती सोयबाड़[1]

---

१. लड़के डगाल ला रहे हैं। शादी का खम्भा एक झुकी हुई लड़की है।

अनेकों उमंग भरे गीतों के साथ वे महुआ की डगालें काटकर ले आए और जलिया का घर-आंगन सजा दिया गया। कुछ मोटियारियां मण्डप का तोरण बनाने में लग गईं।

बाले कुंवार पेकान दाइ
सुखुन दुखुन बेहावो दाई[1]

जलिया ने यह गीत सुना तो उसे अपनी प्यारी याय्ते की याद आ गई। सात बरस पहले वह इस दुनिया से चली गई थी। सारे गांव में माता मइया का प्रकोप था और मइया ने सबसे पहले उसीकी मां की बलि ली थी। जलिया अपनी मां की याद कर और दुःखी हो गई। ये लड़कियां गाने नहीं गा रहीं, उसे जैसे ताने दे रही हैं—'बाले कुंवार पेकान दाइ।' उसे लगा कि वह ज़ोर से चिल्लाकर कह दे, 'येंद माट'[2] पर वह ऐसा न कर सकी।

धीरे-धीरे पोरद सिर पर आ गया। दूर से ढोलों की आवाज़ सुनाई देने लगी। गांव के सारे लोग गेंवड़े पर जमा हो गए। उन्होंने बारात का स्वागत किया और गांव के अन्दर लाकर उसे जनमासा दिया। पेरमा मण्डप के नीचे पूजन की तैयारी करा रहा था। महुआ नीचे चौक पूर रही थी और उसकी सहेलियां उसे घेरकर खड़ी गा रही थीं, 'अलोर अलोर सिंगारी दोसी।' इसी समय दूल्हा आ गया। लड़कियां खंजन की तरह उचकती और फूल-सी हंसती दरवाज़े की ओर दौड़ गईं। सबने दूल्हे को घेर लिया। उसकी हंसी उड़ाना शुरू कर दी :

रिरि लोयो रिलो रिलो रि रि लोयो।

उसे नहलाया गया। बाद में मण्डप में लाया गया। उसके सामने दुल्हिन बैठा दी गई। गायता ने मिट्टी के बर्तन में पानी भरा। उसमें चावल के दो दाने डाले गए और सब लोग उन्हें देखते रहे। चावल के दोनों दाने यहां-वहां घूमते और चक्कर काटते अन्त में एक साथ मिल गए।[3] चेलिक और मोटियारियों की खुशी का अन्त नहीं। वे एक साथ चिल्ला उठीं :

---

१. अरी ओ, इस लड़की की मां उसके सुख, दुःख भुला दो। २. बंद करो।
३. चावलों के मिल जाने का अर्थ है, शादी सफल होगी।

सैले ले बो बो बो ऽऽ
सैले ले बो बो बो ऽऽ।

जलिया के तापे को बड़ी खुशी हुई। वह ताली पीटकर अपनी ख़ुशी जताने लगा। महुआ भी प्रसन्न थी। उसने जलिया की ओर देखा। वह उसी तरह सिर झुकाए बैठी थी। चावल मिलने की खुशी का उसपर जैसे कोई असर ही नहीं हुआ था। शायद वह सोच रही थी, 'जिसे चाहा जब वह नहीं मिला तो चावल के मिलने न मिलने से क्या होता है!'

बिहाव के ढेर-से खटराग वहां हुए। गीतों की एक अटूट शृंखला जलिया के हृदय को बार-बार तोड़ती रही। उसके चेहरे पर किसीने न चमक देखी और न हंसी की हलकी-सी भी रेखा ही। वहां ऐसे कई प्रयोजन आए जब महुआ तक हंस पड़ी थी, परन्तु जलिया की हंसी तो न जाने किसने छीन ली थी! जब यहां के सब रिवाज पूरे हो गए तो एक मोटियारी मंडप के बाहर, घर की छत के पास दूल्हा को ले गई। उसे उसने गोद में बैठाया। दुल्हिन ने छत पर खड़ी होकर दूल्हे के सिर पर तेल की धार छोड़ी। महुआ ने यह धार देखी तो उसकी आंखों में आंसू आ गए। उसे सुलकसाए की याद आ गई। तेल की इसी धार ने बवंडर मचाया था और उसके सुलक को छीना था। महुआ ने आसपास देखा। शिकालगीर, दूल्हे के पास खड़ा था। उसने उसे धक्का देकर दूर कर दिया। सब उसकी ओर देखने लगे पर किसीको यह पता न लगा कि महुआ ने ऐसा क्यों किया है। रात हुई, सबको भोज दिया गया। लगीर फिरायी,[1] टीका हुआ और सब लोगों को लांदा बांटी गई। लांदा पीकर जवान, बूढ़े और बच्चे सभी फिर मैदान में उतर पड़े और नाच-गाने में खो गए। झालरसिंह नाचना चाहकर भी नाच न सका। महुआ को नाच के मैदान में सुलकसाए की छाया झूलती दिखी। नेतानार की घटना उसके मस्तिष्क में बिजली की तरह कौंध गई। वह भी मैदान में न उतर सकी। जलिया का तो मन ही तड़प रहा था। उसके पैरों में किसीने भारी पत्थर बांध दिए थे। उसे नाचना ज़रूरी है सिर्फ इसीलिए वह मैदान में थी। यदि भूरी और अंभोली न होते तो बारात के सारे लोगों को शायद बुरा भी लग जाता। इन दोनों ने लाज रख ली थी। ये खूब उछल-कूद रहे थे। काफी

१. बारात फिराना, दुल्हिन घुमाई जाती है।

रात तक नाच-गाना होता रहा ।

सुबह का सूरज बिदाई की दुःखभरी बेला लेकर आया । बारात गांव से निकली । घोटुल के द्वार पर जाकर ठहर गई । जलिया ने द्वार को सिर झुकाया । अन्दर एक नज़र डाली । उसकी नज़र उस स्थान में जाकर ठहर गई जहां झालरसिंह की बराबरी से उसकी गीकी बिछती थी । कच्ची ज़मीन पाकर जैसे कोई सोता अपने आप निकल पड़ता है, जलिया की आंखों से आंसुओं की धारा बह निकली । वह शायद वहीं देखती रहती यदि महुआ कंधा पकड़कर उसे न उठाती ।

गांव का एक-एक चेलिक उसके सामने आया । प्रत्येक से लिपटकर वह खूब रोई और सारी पिछली घटनाओं को अपने आंसुओं में घोलती रही । मोटियारियों ने उसके जूड़े में अनगिनत कंघियां खोंसीं । झालरसिंह शायद वहां नहीं था। जलिया ने अपनी फूली लाल आंखों से चारों ओर देखा । वह घोटुल की बाजू से चला जा रहा था । जलिया दौड़कर उससे लिपट गई और फूट-फूटकर रोने लगी । झालरसिंह ने उसके सिर पर हाथ फेरा, 'भूल जा जलिया, सब कुछ भूल जा । यह भी कि कभी हम मिले थे । कभी एक साथ रहे थे ।' उसने जलिया के आंसू पोंछे, 'बस, जलिया बस ।' महुआ ने आकर जलिया को थाम लिया और गले लगा लिया, 'हरी फसल में किसीने असमय हंसिया चला दिया है जलिया, अभी तो हमें बहुत काम करना था, बहुत ।' गेंवड़े के पास गायता ने आटे की लकीर खींची और उसपर सात छल्ले रखे । दूल्हा और दुल्हिन ने एक दूसरे की कमर में हाथ डालकर वह रेखा पार की और बिना देखे आगे बढ़ गए ।

ढोलों की आवाज़ दूर भागती गई और महुआ शून्य आकाश की ओर खड़ी-खड़ी ताकती रही । शायद वह सोच रही थी—पानी के बुलबुले की तरह इस अस्थिर ज़िन्दगी के हर पहलू भी उतने ही कमज़ोर हैं ।

दिन भर मुश्किल में कटा और रात एक भारी भार लेकर आई। आज पूरा घोटुल शांत था । झालरसिंह जाते ही कट्टुल में चित लेट गया था और महुआ जलिया की याद कर बार-बार रो पड़ती थी—जलिया अपने नये घर गई होगी। उसकी पोयार[1] ने उसका स्वागत किया होगा । उस गांव के सारे चेलिक और

---

१. सास

मोटियारी खूब नाचे होंगे और सबने मिलकर जलिया और गुबरी को एक कोठरी में बन्द कर दिया होगा। तब जलिया····वह पगली कोई भूल न कर बैठे··· कहीं वह तब भी रोती न हो···। महुआ सोचती है, कई तरह से सोचती है। पतंग की तरह उसके विचार यहां-वहां उड़ते जाते हैं और मन की डोर न जाने उसे कितने झूले झुलाती है। उसे सुलक की भी याद आती रही। जलिया ने झालरसिंह के साथ प्रेम के न जाने कितने महल बनाए थे। सब टूटकर चकनाचूर हो गए—कहीं···नहीं-नहीं, ऐसा नहीं होगा। मेरे तापे ने मेरी सगाई थोड़े कहीं की है, मगर····मगर, सुलक न लौटा तो····कैसे न लौटेगा, जरूर लौटेगा···' —महुआ की कल्पना का अन्त नहीं। वह अच्छी-बुरी सभी बातें सोचती है। कभी हंस देती और कभी रो देती। इसी हंसने-रोने में बैरन रात बीत गई। पियाल[1] के उजेले में सबने देखा, घोटुल का सिरदार उसी तरह चित पड़ा है। महुआ ने उसे उठाया तो वह हड़बड़ाकर उठ बैठा और बिना किसीकी ओर देखे झिरिया की ओर चला गया।

१४

गुण्डा धूर और डेबरी धूर बड़े उत्साही युवक थे। दोनों बड़ी लगन और मुस्तैदी से अपना काम कर रहे थे। वे आसपास के गांवों के मुखियों से चर्चा करते और उन्हें सारा किस्सा बहुत समझाकर बताते। रात को उनका बहुत-सा काम घोटुल में होता। घोटुल में गांव के युवा लड़के-लड़कियां एक साथ मिल जाते थे। ये दोनों भी नेतानार के घोटुल के सदस्य थे। कई बार नाच-गानों में यहां-वहां गए हैं इसलिए आसपास के प्रायः सभी घोटुल के सदस्य उन्हें जानते थे। गुंडा धूर मिलनसार भी था। उसे जादू आता था और कुछ करामात भी दिखा देता था। कई बार नरायनपुर के बाज़ार में उसने बड़े-बड़े करतब दिखाए हैं। जादू-टोने उसे अपनी मां से विरासत में मिले थे, परन्तु वह उसका उपयोग कम करता था। अपनी मां को स्वयं उसीने मरवा डाला था। कहते हैं, उससे बड़ी

१. दिन

जादूगरनी उस पूरे इलाके में कोई नहीं थी। किसीको आंख भरकर एक बार देख भर ले, फिर क्या है, हफ्ते भर के अन्दर इस दुनिया से उसका मोह छूट जाता। अंडा की पुंगरिया भूत और चुड़ैल से रक्षा करती है पर उसके सामने सब बेकार हो जाते थे। स्वयं गुण्डा धूर का बाप उससे परेशान था। वह अक्सर आधी रात को उठकर मरघट जाती और गड्ढों से मुर्दों को निकालकर उन्हें जगाती थी। उसने न जाने कितने मुर्दे जगा लिए थे! सबको वह अपने पास बांधकर रखती थी और बखत पड़ने पर उनका उपयोग करती थी। इसलिए सारा गांव उससे डरता था। उसकी बड़ी-बड़ी लाल आंखें! जिसे भरकर एक बार देख ले, पसीना छूटने लगता था।

गुण्डा अपनी मां से बहुत प्यार करता था। वह भी अपने बेटों को चाहती थी; पर मां की ज़्यादती से उसे भी कम परेशानी नहीं थी। वह जब कभी मड़ई और मेलों में अपने करतब दिखाने जाता तो लोग उसकी मां के बारे में बातें करते थे। मां के सामने तो किसीकी मुंह खोलने की भी हिम्मत न होती थी परन्तु पीठ पीछे सभी उसे गाली देते थे। सुनते-सुनते गुण्डा तंग आ गया था। डेबरी धूर तब छोटा था। वह भूत-प्रेत और झाड़-फूंक क्या होती है, इसके बारे में कम जानता था।

गुण्डा की मां के हाथ न जाने क्या था कि वह अपने काम में कभी असफल नहीं हुई। बड़े से बड़े भूत को उसने वश में किया और भयंकर चुड़ैल को मुट्ठी में दबाया। नेतानार का सिरहा भी उससे परेशान था। वह अपने जंतर-मंतर पढ़ते-पढ़ते थक जाता पर उनका कोई असर न होता। गांव वालों का तो कहना था कि सिरहा और गुण्डा की मां दोनों की होड़ लगी है। इसका भी कारण बताया जाता है। कहते हैं, पहले सिरहा और गुण्डा की मां इसी घोटुल के सदस्य थे और दोनों में बड़ा प्यार था। दोनों ने तय कर लिया था कि शादी कर लेंगे और सुख से रहेंगे, परन्तु यह नहीं हुआ। गुण्डा के नाना ने अपनी बेटी को दूसरे लड़के से व्याह दिया। सिरहा के सिर में जैसे आग समा गई। एक रात वह उसे जबरन खींचकर नदी-किनारे ले गया। गुण्डा की मां ने उसे खूब मना किया था, 'नहीं रे, अब मैं तेरी मोटियारी नहीं रह गई।'

सिरहा ने उसे मनाने की कोशिश की, बोला, 'यह तो माना री, पर पिरेम

तो मेरा तुझसे है। तेरे बिना चैन नहीं मिलता। उसे छोड़ क्यों नहीं देती, दण्ड मैं भर दूंगा।'

जब ये दोनों बातें कर रहे थे तो गुण्डा का बाप वहां पहुंच गया था। उसने सिरहा का हाथ पकड़कर खूब मार लगाई थी और कहा था कि आगे आया तो तुझे झाड़ में बांधकर जिन्दा जला दूंगा। सिरहा चुपचाप चला गया।

गुण्डा की मां ने उसे प्यार किया था, खुलकर प्यार किया था। उसके प्रति उसके मन में हमदर्दी थी। उसका वश चलता तो वह ज़रूर सिरहा के साथ भाग जाती, परन्तु गुण्डा का बाप बड़ा खिलाड़ी था। उसीके करतब गुण्डा ने सीखे थे। उसने ऐसा जाल रचा कि सिरहा सरीं में खड़े होकर गुण्डा की मां को गाली देने लगा। जब वह मोटियारी थी तब की न जाने कौन-कौन भूली-बिसरी बातें बकने लगा। यह देखकर गुण्डा की मां ने भी कमर कस ली। उसने सोचा—'बदनाम हो ही रही हूं, फिर क्यों चुप बैठूं!' अपनी मां से उसने जो विद्या सीखी थी, उसे जगाने लगी और बात की बात में वह नेतानार का भय बन गई। लड़ाई सिरहा और उसके बीच थी पर फल भुगतना पड़ता सारे गांव को। सिरहा गांव में बड़ा आदमी था। उसके पास ढोर थे। घर में चार लड़कियां थीं। दो के लिए उसने लमसेना रखे थे। एक भगेला बनकर काम कर रहा था। उसीसे वह एक लड़की को ब्याहना चाहता था और चौथी लड़की को उसने आवारा छोड़ दिया था। वह देखने में भी खूबसूरत थी। उसकी कटीली आंखें और नुकीली नाक हर किसीको अपनी ओर खींच लेती थी। घोटुल के सारे चेलिकों से उसने प्रेम किया था और हरएक को वह सच्चा साइगुती कहती थी। उसके बाप की नज़र थी रुपये-पैसों पर। जो सबसे ज्यादा दे, वही उसे ले जाए। इस तरह सिरहा का घर भरा-पूरा और सुखी था। गुण्डा धूर की मां ने उसे बरबाद करने की ठान ली।

नेतानार के दक्षिण गेंवड़े के पास झाड़ियों का एक भारी झुरमुट है। वहीं पुराना मरघट है। न जाने किस ज़माने के लोग वहां सो रहे हैं। गुण्डा की मां ने यहीं अपनी साधना शुरू कर दी और कई महीनों के बाद वह एक ऐसे मुर्दे को जगाने में सफल हो गई जो १०० साल पहले नेतानार का आतंक था। उसने कई नये-नये मंतर बताए। नये-नये भेद बताए। उन्हें सीखकर उसके जैसे पर लग गए। गुण्डा को यह पता लगा तो उसने अपनी मां को रोका, बोला—'याय्ते, यह

खतरनाक काम क्यों करती है ! ज्यादा जादू सीखकर हमें करना क्या है !'

'नहीं रे,' वह बोली, 'जादू-टोना हमारी विरासत है। तू नहीं जानता, सबसे पहले जादू सीखा था हमारी ही जाति के एक ग्रादमी ने। ग्रपनी दादी से मैंने कहानी सुनी थी, तू भी सुन ले....।'

'वह तो ठीक है याय्ते, पर....।'

'पर क्या ? पागल बना है। हमारे पुरखे जो गुन जानते थे, हम उसे भूल जाएं ? ग्ररे हमें तो उसकी बढ़ती करनी चाहिए, चल बैठ यहां।' उसने गुण्डा को नीचे बैठाल लिया ग्रौर कहने लगी :

'हमारा देवता नन्दराज जादू-टोनों का स्वामी है। दुनिया भर की सारी तांत्रिक विद्याएं उसे ग्राती हैं। एक दिन स्वर्ग के सारे देवता नन्दराज गुरु के पास जादू सीखने गए। तब हमारे इसी गांव का एक चेलिक उसी जंगल में जड़ खोद रहा था। उसने ग्रजानी जगहों से कुछ ग्रावाज़ें सुनीं। उसने चारों ग्रोर देखा। उसे ग्रावाज़ तो बराबर सुनाई दे रही थी, पर कहीं कोई दिखाई नहीं देता था। वह रोज़ ये ग्रावाज़ें सुनता रहा। कहते हैं, नंदराज गुरु ग्रपने चेलों को जादू इसी जंगल में सिखाया करते थे। जब सारे देवता ग्रौर मृतक जादू सीख चुके तो नंदराज ने ग्रंतिम दिन इस जंगल में एक समारोह मनाया ग्रौर उसमें उसने मुर्गी तथा ग्रंडे ग्रपने देवता को भेंट किए। उस प्रसाद को गुरु ने सात हिस्सों में बांटा क्योंकि सीखने वाले चेले सात थे। पर उसने देखा कि सात हिस्से ग्राठ हिस्सों में बंट गए हैं। नंदराज ने सबको बुलाया ग्रौर कहा, 'जाग्रो, सारा जंगल खोजो, कहीं न कहीं कोई भूत, जानवर या मृत्युलोक का ग्रादमी छिपा है। उसने हमारी विद्या सीख ली है। उसे ढूंढो।' सातों चेले खोजने निकल पड़े। उन्हें एक झाड़ की डाल पर यही चेलिक बैठा मिला। उसे पकड़कर वे गुरु के पास ले गए। गुरु नंदराज ने उस ग्रादमी से कहा, 'देखो, यहां सब देवता ही हैं। तू ही एक ग्रादमी है, जिसने हमारा जादू सीख लिया है। यह तूने बड़ी गलती की है, ग्रौर यदि ग्रब तू हमें कुछ भेंट नहीं देता तो तेरा सारा परिवार नष्ट हो जाएगा।' उसने जब भेंट के बारे में पूछा तो नंदराज ने उसके इकलौते लड़के की बलि मांगी। नंदराज नहीं चाहते थे कि पृथ्वीतल का कोई वासी यह विद्या सीखे। इस तरह की मांग करने से वह हिम्मत हार जाएगा ग्रौर मुक्ति की प्रार्थना करेगा। नंदराज को यह भी भय था कि वह दुनिया में

जादू का उपयोग करेगा, जिससे कहीं मृत्यु नहीं होगी और दुनिया के सारे कष्ट नष्ट हो जाएंगे और जब आदमी ही नहीं मरेंगे तो देवता शासन किन पर करेंगे। पर चेलिक तो इस अमूल्य विद्या के लिए अड़ गया था। उसने अपने इकलौते लड़के की भी बलि दे दी। नंदराज ने उस लड़के का कलेजा सातों देवताओं और उस चेलिक को प्रसाद के रूप में बांट दिया। चेलिक ने जैसे ही उसे खाया, वह सारे भूत-प्रेतों और जादू-टोनों का स्वामी हो गया।[1] इसी चेलिक की हम सब सन्तान हैं। सारी दुनिया में सबसे पहले जादू हमने सीखा है।'

गुण्डा को यह कहानी प्रभावित नहीं कर सकी थी। वह बोला, 'कुछ भी हो मां, यह अच्छा नहीं है।'

'वह मैं जानती हूं,' उसकी मां ने कहा, 'मैंने तुझे पैदा किया है, तुझसे ज्यादा जमाना देखा है······।'

'देखा होगा।' गुण्डा आगे कुछ न कह सका। उसकी मां ने उसे डांटकर भगा दिया था।

समय बीतता गया और······

एक दिन लोगों ने देखा कि एक भारी शेर गांव में आया है। यहां-वहां घूमता वह सिरहा के घर पहुंचा और वहां से उसके जानवर उठाकर ले गया। सिरहा ने कई तीर चलाए पर कोई असर न हुआ। शेर के तीर तो चुभता पर उसका कोई असर न होता। माहुर-ज़हर, वहां बेकार हो जाते। माहुर यदि खून में जरा भी मिल जाए तो भारी से भारी जानवर पल भर में मछली की तरह तलफने लगे। पर यह शेर जैसे सारा माहुर-ज़हर पी जाता था।

दूसरे दिन सिरहा का एक लमसेना गायब हो गया। उसकी बेटी दहाड़ मार-मारकर रोई। गांव भर ने खोज की और अन्त में उसका आधा खाया शरीर बड़ के एक झाड़ से टंगा मिला। सिरहा परेशान था। वह क्या करे! खुद गांव भर को झाड़ता-फूंकता है, सारे गांव की रक्षा का भार उसपर है पर वह अपनी रक्षा खुद न कर सका। एक दिन तंग आकर उसने गुण्डा धूर की शरण गही। बोला, 'बेटा, तेरी मां ने तो मुझसे सख्त दुश्मनी बना ली है पर तू तो मेरा भी बेटा है, तुझे बड़े-बड़े करतब आते हैं। मुझे कुछ सहारा तो दे।' गुण्डा

---

१. एक मुड़िया लोककथा

घूर उसे मदद करने को तैयार हो गया। ये दोनों तीर-कमान लेकर सारे गांव के चारों ओर घूमा करते थे। चार-छः दिन तो बेकार गए। कहीं कुछ न हुआ। एक दिन उन्होंने देखा—वही शेर फिर आ रहा है। सिरहा ने तीर छोड़ना चाहा पर गुण्डा ने उसे रोक दिया। वे आसपास की पहाड़ियों में छिपते उसके पीछे-पीछे चलते रहे। उन्होंने देखा, वह फिर सिरहा की सार में गया है। वहां से उसने उसका अकेला बंधा बैल उठाया और उसे कंधे पर रखकर ले आया। लगभग दो मील उसे ले गया। पहाड़ी के बीच एक नाले के तीर उसने बैल को पछाड़ा। उसकी गर्दन तोड़ी और सारा खून गटगटा गया। खून पीने के बाद उसने पीपल के झाड़ से अपनी देह रगड़ी और दोनों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब उन्होंने देखा कि यही शेर रूप बदल रहा है। वह धीरे-धीरे आदमी बनता जा रहा है। जब वह आधा आदमी बन गया तो गुण्डा घूर ने सिरहा को इशारा किया और सिरहा ने दौड़कर अपनी टंगिया से उसकी गर्दन उड़ा दी। जैसे ही गर्दन नीचे गिरी कि गुण्डा चीख पड़ा। यह तो उसकी मां थी![1] वह खूब रोया, खूब पछताया, पर करता भी क्या! सारे गांव को इससे बहुत राहत मिली। यह किस्सा आसपास के सब गांवों में फैल गया और उसके साथ ही गुण्डा धूर भी प्रसिद्ध हो गया। सब लोगों ने उसकी बड़ी तारीफ की। गांव को बचाने के लिए उसने अपनी मां तक को मार डाला। इतना शेरदिल और कर्तव्य-परायण आदमी भला कहां मिलता है!

इसीसे जहां-जहां वह गया सबने उसकी खूब मदद की। सबने उसे पूरे सहयोग का वचन दिया। गुण्डा धूर में भी काम करने की अद्भुत लगन सवार हो गई थी। अपने भाई के साथ वह रोज़ किसी न किसी गांव को जाता था। थोड़े ही दिनों के भीतर उसने बिझली, गढ़ बंगाल, नरायनपुर, मटबंद, बेनूर, नयानार, नेतानार इत्यादि गांवों का संगठन कर लिया। एक बड़ी सेना तैयार हो गई। लोगों को तीर-कमान चलाना तो आता ही था, उसने उन्हें निशाना साधना भी बताया। गुण्डा का साथ महुआ ने भी दिया। महुआ को अभी तक सुलकशाए की चिंता थी। सुलक के वियोग में वह स्वयं को भूल गई थी। मदमाते यौवन की लम्बी डगर में उसे भयंकर अंधेरा दिखाई दे रहा था और

---

१. यह एक सच्ची घटना पर आधारित है, जो जगदलपुर जिले में हो चुकी है।

उसके मन का नन्हा-सा पंछी दिन-रात चीखता रहता था। वह अक्सर संझा के समय दूर क्षितिज को अपलक निहारा करती थी।

आकाश के साथ क्षितिज का मिलन उसे अच्छा नहीं लगता था और इसी-लिए स्वयं अपनी अन्तर्व्यथा में रो देती थी। परन्तु अब तो उसके जीवन का क्रम बदल गया था। हर रात उसे कोई नया संदेश देती और प्रत्येक प्रातः का सूरज उसके मन में नई आशा और नई उमंग भर देता। उसका प्यारा सुलक अपने देश और अपनी जाति की रक्षा के काम में लगा है तो उसे भी उसका साथ देना चाहिए। उसने कमर कस ली। गुण्डा धूर का हाथ गहा और कहा, 'चल वीर, जंगलों के ये झाड़, पेड़ और पौधे हमारी ओर ललचाई आंखों से देख रहे हैं। हम इन्हें बचाएं।'

महुआ ने औरतों की एक फौज गठित करना शुरू कर दिया। औरतों को उसने निशाना साधना और लड़ाई के दूसरे तरीके सिखाए। यह काम उसने गढ़ बंगाल से ही आरंभ किया था। धीरे-धीरे कई गांवों तक वह फैल गया।

गुण्डा धूर जब कुछ गांवों में काम कर चुका तो उसने डेबरी से कहा, 'बीर, अब तुझे और कहीं जाना होगा। यहां का काम तो हो गया; जो बचा है, हो जाएगा। नीचे सुलक काम देख रहा है, तुझे ऊपर जाना चाहिए। तेरा काम केशकाल और तेलिनघाटी से आरंभ होगा। तू जा और वहां के लोगों को संदेस दे। यहां की सारी खबर तुझे मिलती रहेगी।'

डेबरी तुरन्त तैयार हो गया, 'जय मातुल की, जय पोंगल की, बड़े देव हमारी रच्छा करें।'

उसने डेबरी के पैर छुए। मातुल देवी का सिंदूर हाथ में लेकर अपनी कपाल पर छुलाया और चल दिया।

एक गांव में जो होता उसकी खबर सैकड़ों मील बात की बात में पहुंच जाती थी। एक गांव अपना हाल पड़ोस के गांव तक पहुंचा देता। वह उसे आगे भेजता, बस। प्रायः प्रत्येक गांव पीड़ित था। अफसरों की ज्यादती से हरएक आदमी के नाक में दम आ गया था। वैसे ही इन्हें खाने की मुसीबत। जंगलों में जो मिल जाए, उसीसे काम चलाना पड़ता था। थोड़ी-बहुत खेती। नहीं तो बरस भर पक्षी और जानवर उनकी भूख बुझाते हैं। चिड़ियां मार लीं या चूहे पकड़ लिए। उन्हें हलकी-सी आग में झुलसा लिया और यही भर्ता

वे स्वाद से खा गए। पन्ने[1] और माटा[2] साल भर काम देता है और इन्हें जब वे जावा के साथ खाते हैं तो उनका स्वाद बदल जाता है, जिन्हें भोजन ढूंढते ही कंद, मूल और फलों की खोज में मेटों की खाक छानना पड़े, यदि उनसे मुफ्त में बिगाड़ ली जाए और ऊपर से गालियां और लातें मिलें तो वे कब तक बरदाश्त करेंगे। इसकी चर्चा प्रायः हर कोई करता था। इसके पहले ऐसा कम हुआ है। राजा पर इनका अटूट विश्वास है। उसके एक इशारे पर वे अपना सब कुछ लुटा सकते हैं; परन्तु जबसे गोरों के आने की पक्की खबर लगी है, सभी बिगड़ गए हैं।

१५

'बहुत पुरानी कहानी है !

'किसी ज़माने में बस्तर महाराजा के सिपाही एक नदी के किनारे से जा रहे थे। नदी के दूसरी ओर एक दूसरे राज्य का राजकुमार, एक नंदी के साथ चला जा रहा था। राजा के सिपाही राजकुमार के रूप और नंदी की छबि देखकर बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने जब अपने राजा से जाकर बताया तो राजा भी राजकुमार और नंदी को देखने के लिए उत्सुक हुआ। उसने अपने सिपाहियों को आज्ञा दी कि दोनों को दरबार में लाया जाए। सिपाही उन्हें जाकर पकड़ लाए। राजकुमार घबड़ाया था। उसने राजा से कहा, 'मैंने कोई अपराध नहीं किया नृपश्रेष्ठ, फिर भला मुझे दरबार में क्यों पकड़कर लाया गया है ?'

'राजा बोला, 'तुम्हारे पास एक सुन्दर नंदी है, उसे मेरें हाथी से जूझना होगा। सुना है तुम्हारा नंदी बड़ा शक्तिशाली है। मैं उसकी ताकत तोलना चाहता हूं।'

'राजकुमार को बड़ी चिन्ता हुई। कहां एक साधारण-सा नंदी और कहां एक मस्त हाथी ! वह बिना कुछ बोले दरबार के बाहर आ गया। जब नंदी चरा-

---

१. मेंढक २. लाल चींटों का अचार

गाह से लौटा तो उसने राजकुमार को बड़ा चिंतित देखा। उसने राजकुमार से चिन्ता का कारण पूछा। राजकुमार की आंखों में आंसू थे। उसने सारा हाल कह सुनाया। नंदी ने उसे विश्वास दिलाया कि वह हाथी से लड़ेगा। इसमें चिंता की कोई बात नहीं है।

'नंदी ने अपना एक कान हिलाया और उससे कीमती चावलों की वर्षा होने लगी। उन चावलों को दोनों ने मिलकर पेट भर खाया और फिर दोनों राजा के पास पहुंचे। दुकाटा के मैदान में राजकुमार के नंदी और राजा के हाथी के बीच युद्ध आरम्भ हुआ। नंदी के प्रचण्ड आघातों से भय खाकर हाथी भाग गया।

'दूसरे दिन नंदी को एक भेड़िए से जूझना पड़ा। भेड़िया भी पराजित हुआ। राजा ने तब अपने पिंजड़े से एक भयंकर शेर छोड़ा और नंदी को उससे लड़ना पड़ा। जैसे ही नंदी पर शेर झपटा, नंदी का सारा शरीर लोहे में बदल गया। राजा को नदी की ताकत का लोहा मानना पड़ा। वह राजकुमार से बहुत प्रसन्न हुआ और उसने अपनी सुन्दर लड़की का ब्याह राजकुमार से कर दया। राजकुमार घरजमाई बनकर वहीं रहने लगा। जहां भी राजकुमार गया, ंदी बराबर उसके साथ रहा। नंदी की सहायता से राजकुमार ने पास-पड़ोस के राजाओं को भी परास्त कर दिया।[1] सारे राज्य में शांति और सुख था। राजा की सारी प्रजा नंदी और उस राजकुमार को गर्व से देखा करती थी, पर···।'

'पर···, फिर क्या हुआ ?' तिलोका बोली। सुलकसाए की आंखों से टप-टप आंसू गिरते रहे। सामने धूनी जल रही थी। तिलोका ने लूवर ऊपर उठाकर उसके उजाले में देखा। देखा तो वह देखती रह गई। दूसरे चेलिक और मोटियारियों ने भी उसे झांककर देखा।

'सिरदार······!'

'चुप रहो तिलोका,' सुलक बोला, 'तुम्हारा सिरदार पाण्डू है।'

पाण्डू ने गर्व से तिलोका की ओर देखा।

'होगा सुलक, पर जब से तू यहां आया है हम तो तुझे ही अपना सिरदार मानते हैं।'

---

१. बस्तर में बहुश्रुत एक लोककथा

'नहीं तिलोका, यह नहीं हो सकता, तू मुझे सिरदार कभी मत कहना।'

'सिरदार, सिरदार, सिरदार !' तिलोका ने उठकर सुलक के कान में तीन-वार बार ज़ोर से कहा। सुलक ने दोनों हथेलियां कान पर रख लीं। 'नहीं तिलोका, जब तेरे मुंह से सिरदार सुनता हूं तो मुझे अपनी महुआ याद आ जाती है। सोचता हूं, वह कैसी होगी ! मेरे बारे में क्या सोचती होगी...!'

'बेचारी महुआ...!' तिलोका ने एक बनावटी आह भरी।

सुलकसाए चुप रहा। शायद वह महुआ की याद में खो गया था। पाण्डू ने उसे एक धक्का दिया, 'कैसा आदमी है रे ! वह कहानी तो तूने अधूरी ही छोड़ दी।'

'हां पाण्डू, बिना सोचे अपने गांव से भागा था और...।'

'और अब सोच ही सोच है।'

'किसका महुआ का ?'

'हां रे, पर उससे भी बड़ा उस कहानी का।'

'क्यों पहेलियां बुझाता है सुलक,' तिलोका उचककर उसके पास आ गई थी, बोली, 'फिर उस राजकुमार का क्या हुआ ?'

'उसका क्या होगा री, राजकुमार जब तक रहा उसने इस राज्य का नाम उजागर किया। कहते हैं हमारे राजा अन्नमदेव बड़े वीर थे। बड़े दयावान् थे। सारे चक्करकोट[1] में सुख था, सारी परजा पिरेम से रहती थी। फिर कहते हैं, महाराज पुरुसोत्तम देव आए। वे बड़ी दूर से एक रथ लाए और उसे हमारे इस गांव में रखा...।'

'कौन-सा रथ सुलक ?'

'यही जो हम सब दंतेसरी मइया के पास देखते हैं।'

'अच्छा !' कई एक साथ बोले, 'यह यहां का बना नहीं है ?'

'नहीं रे, कहते हैं इसे राजा यहां से हजारों कोस दूर से लाए थे। इस मंदिर की भी बलिहारी है पाण्डू।'

'हां सुलक।'

'हां क्या, तू जानता है ?'

---

१. अन्नमदेव के शासनकाल में बस्तर राज्य 'चक्रकोट' राज्य कहलाता था।

'नहीं···नहीं···,' वह थूक लीलने लगा तो सुलक ज़ोर से बोला, 'फिर हां क्या ? कहते हैं इसी राजा के पुरखे दंतेसरी मइया को लाए थे। एक रात देवी ने सपने में आकर राजा से कहा कि मैं उस पहाड़ में हूं। तुम वहां से मुझे ले चलो। मैं तुम्हारे पीछे-पीछे चलूंगी। तुम लौटकर मुझे मत देखना और जहां-जहां तुम जाओगे तुम्हारा राज होगा। सवेरे राजा उठा, वह उस पहाड़ से जैसे ही चला कि देवी भी उसके पाछे हो गई। राजा कई दिन चलता रहा। उसे पीछे पायल की मधुर झंकार सुनाई देती रही। परन्तु जब राजा डंकनी नदी की रेत में पहुंचा तो उसे देवी की पायल की आवाज़ नहीं सुनाई दी। उसने लौटकर देखा तो देवी वहीं खड़ी हा गई। बोली, 'बस, तुमने अपना प्रन तोड़ दिया। अब मैं यहीं रहूंगी। तुम जाओ और पन्द्रह दिन के भीतर जहां-जहां राज जमा सको, जमा लो।'

'राजा ने पन्द्रह दिन में सारे चक्करकोट में राज जमा लिया और फिर जहां देवी ठहरी थी वहीं यह मंदिर बनाया और उसीमें दंतेसरी मइया को बैठाया, जिसे हम आज देख रहे हैं।'[1]

सुलकसाए किस्सा कहकर चुप हो गया। उसने घोटुल के सारे सदस्यों को देखा। सब चुप बैठे उसकी ओर देख रहे थे। उसने लम्बी सांस लेकर कहा, 'पर न अब वह देवीभक्त राजा रहा और न वह अद्भुत नंदी वाला राजकुमार। दलपतदेव जब महाराजा बने तो वे राजधानी जगतीगोंडा[2] उठाकर ले गए। उनके बाद भैरामदेव आए और अब····! अब तो रुद्रप्रतापदेव का जमाना है, साइगुती। कितना निकम्मा राजा निकला यह। जिसके पूर्वज इतने दिलेर थे, वह खुद राज न चला सका और उसने गोरों को ला बैठाया।'

'नहीं सुलक,' पाण्डू बोला, 'करतमी को तू जानता है न, आजकल तैलसीदार के साथ घूमता है। वह भी अफसर है रे, कहता था जब गोरे आए थे तब तो राजा रुद्रप्रताप बच्चे थे। यह सब करनी भैरामदेव की थी···।'

'जो हो पाण्डू, पर अब तो हम सब पर मुसीबत है। जब गढ़ बंगाल से चला था, सोचता था, कुछ दिन घूम-फिरकर मन बहला लूंगा फिर लौट जाऊंगा, पर····

१. दंतेवाड़ा में स्थित दंतेश्वरी देवी के मंदिर के सम्बन्ध में यह लोककथा कही जाती है। यह मंदिर सारे आदिवासियों का सबसे बड़ा धार्मिक केन्द्र है।
२. नगदलपुर का पुराना नाम

अपने मन की कब हुई है रे! मरदयाल में ही सर्री बदल गई। मेरे गांव पर फिर क्या गुजरी है, मुझे पता लग गया है। आखिर गोरे बाहर के ही हैं न। हमारा राजा यह क्यों नहीं सोचता। उसने हमसे बिना पूछे इन्हें क्यों बुलाया? राजा को तो परजा की मरजी पर चलना चाहिए न।'

'हां सुलक, तू ठीक कहता है, तिलोका बोली, 'पर राजा भले ही गोरों से डर जाए, हम नहीं डरेंगे। यदि वे हमारे सब अधिकार छीनने पर उतारू हैं तो हम भी चीते के पंजे हैं, उन्हें लोंच खाएंगे।'

'सुलक, सुना है जंगलों पर भी सरकार का अधिकार होगा?' एक चेलिक ने पूछा।'

'ठीक सुना है रे, अब तो जो न सुना जाए थोड़ा है। वह बैठा है न बैजनाथ नाम का अंग्रेजों का···, नित नये कानून पास करता है। राजा है सो भीगी बिल्ली बना है। अब जंगलों में घेरा डाला जाएगा। सरकार कुछ जंगलों से हमें न लकड़ी काटने देगी, न वहां शिकार करने देगी। बचे जंगल से भी जो कुछ हम निकालेंगे, उसपर नजराना देना पड़ेगा।'

'नजराना! वह तो हम हर साल राजा को देते हैं न?'

'हां, वह तो हम राजा को देते हैं। अब हमें गोरी सरकार को भी देना पड़ेगा।'

'नहीं सुलक, हम नहीं देंगे। हम दंतेसरी मइया से कहेंगे—हे मातल, तू उठ और एक बार फिर अपना जौहर दिखा।'

सुलक ने आसपास देखा, सब कुछ चांदनी की सफेदी में डूबा था। सामने दंतेश्वरी मइया का मंदिर था। उसके कलश पर लाल झंडा लहरा रहा था। उसने उस झंडे पर नज़र डाली। नीले आकाश में, झंडे के ऊपर जैसे कमल का कोई बड़ा फूल खिल रहा था। वह फूल काफी नीचे झुक आया था जैसे उस झंडे पर गिर जाना चाहता था। उसने उस ओर अंगुली दिखाई और बोला, 'तुम देखते हो न यह झंडा और वह चन्द्रमा। आज दोनों कितने पास आ गए हैं। झंडा बार-बार लहराता है और हमें उस राजा की याद दिलाता है जो देवी को यहां लाया था।····और वह कमल-सा खिला चांद, मानो नंदी वाले राजकुमार की रानी है। वह रानी जो हमारे राजा की बेटी थी। वह देखो, क्या कहती है?'

'क्या कहती है !' तिलोका ने अचरज से पूछा।

'कहती है, यदि तुम्हारा राजा अपने धरम से गिर गया है तो तुम उठो, जागो और सबको एक बहुत बड़ा पाठ सिखा दो।'

'सचमुच रे,' सब एक साथ बोले, 'वह तो बोल रही है !'

'हुर्रे हुर्रे हुर्रे ऽ ऽ ऽ !'

चेंलिक और मोटियारियों का समवेत स्वर सारे वातावरण में गूंज उठा। सबने एक साथ हाथ जोड़कर दन्तेश्वरी मइया को सिर झुकाया और अपनी-अपनी गीकी से बंध गए।

पाण्डो इस घोटुल का सिरदार था। उसकी साइगुती थी तिलोका। सुलकसाए जब यहां आया तो अजनबी-सा था परन्तु अपने मिलनसार स्वभाव के कारण उसने सबका मन जीत लिया। अपनी वीरता से उसने सारी मोटियारियों को अपना बना लिया। कहते हैं, एक रात एक चीता चुपके से गांव में घुस आया और एक बछड़ा उठाकर ले जाने लगा। जब वह घोटुल के पास से गुज़रा तो सुलक ने उसे ऐसी दुलत्ती दी कि वह बछड़ा छोड़कर भाग गया। बछड़े को उसने बचा लिया और उसीके साथ उसे गांव भर की हमदर्दी मिल गई। तिलोका तो अनजाने ही उसके पास आती गई। परन्तु सुलक ने सदा अपना ध्यान रखा। जब कोई मोटियारी उससे कंधी मांगती[1] तो वह कह देता, 'मैं आब गांव का हूं साइगुती, परदेसी की पिरीत फूस का तापना है।'

परन्तु इससे क्या ! प्रीत के मैदान में सुलक की उदासी कुछ काम न कर सकी। गांव की अनेक मोटियारियां उसपर अपने को निछावर करती थीं। जब कभी वे अकेली मिलतीं तो उसके सीधे और सरल सुभाव की बड़ी तारीफ करतीं। उसके नुकीले चेहरे और बड़ी-बड़ी आंखों पर वे बड़े-बड़े रूपक बांधतीं और उसकी वीरता की बातें करते कभी न थकतीं। आसपास के गांवों में भी सुलक चर्चा का विषय था—अपने रूप के कारण, अपने सुभाव के कारण और अपनी काम करने की अद्भुत लगन के कारण, परन्तु वह अपने गांव से दूर रहकर भी महुआ से दूर न रह सका। उसने एकाएक अपने गांव के बाहर कदम तो रख दिए थे

१. कंधी मांगना यानी प्रेम का निमंत्रण देना

परन्तु उसका मन वहीं रह गया था । इसलिए इस घोटुल में इतनी मोटियारियों के रहते हुए भी उसे चैन नहीं । रात को जब वह अपनी गीकी में जाता है तो उसकी आत्मा जैसे छटपटाती है । घोटुल के नियम के अनुसार उसे किसी मोटियारी का साथ देना पड़ता है परन्तु तब वह उसे सोता छोड़कर बाहर मैदान में आ जाता है और चांद-सितारों तथा नदी-नालों से बातें करता है । जब प्रेम की बातें करते-करते थक जाता है तो अपने संगठन की बात सोचता है । नई-नई योजनाएं उसके दिमाग में आती हैं । जिन्हें ठीक समझता है दूसरे दिन उनकी चर्चा करता है और फिर सारी खबर वह गुण्डा के पास भेजा करता है ।

दन्तेवाड़ा में सुलक जब आया था तो उसे उसकी मां मिली, वह मां जो काफी पहले उससे बिछुड़ गई थी । उसका नया बाप दन्तेवाड़ा का पेरमा था । दन्तेश्वरी देवी का बड़ा भक्त माना जाता था । मुंदरी यहां आकर बहुत खुश थी और एक नये लड़के को भी जन्म दे चुकी थी । सुलक जब आया तो उसे इतनी प्रसन्नता हुई कि वह कम से कम दो घंटे रोई । उसे अपनी गोद में बैठालकर छाती से लगाया, 'दूध पी रे, दूध पी न !'

'मां ऽ ऽ ऽ !'

'हां, कहेगा अब बड़ा हो गया हूं । मेरे लिए तो वही नन्हा-सा गुड्डा है सुलक, जो नंगा फिरता था और मेरी छाती से चिपककर बड़े प्यार से दूध पीता था, पी न रे...।' सुलक ने अपनी मां के गालों को चूम लिया, 'मां, फिर तू कहेगी नंगा भी हो जा न...।'

'हां रे क्यों नहीं, इसमें क्या है !'

'मां ऽ ऽ ऽ' और उसने मुंदरी को गोद में उठाकर चारों तरफ घुमाना शुरू कर दिया । तभी पेरमा आ गया । उसने मुंदरी को एक पराये मरद की गोद में देखा तो जल उठा और पूरी ताकत के साथ चिल्लाया—'मुं....द....री !' सुलकसाए कांप गया । उसने अपनी मां को नीचे खड़ा कर दिया और वह अपलक पेरमा की ओर देखने लगा । उसके मन में एक साथ न जाने कितने विचार घूम गए—क्या यहां भी मुंदरी की वही स्थिति है ? क्या....?

'देखता क्या है ?' कलमुसी बोला ।

'तुझे, दादाल, तुझे....!'

'दा...दा....ल !'

'हां पेरमा, तेरा बेटा जो है यह।' मुंदरी की बात सुनकर उसका क्रोध ठंडा हुआ और उसने मुंदरी की ओर प्रश्नभरी मुद्रा में देखा। जब मुंदरी ने सारा किस्सा सुना दिया तो कलमुसी मासा लज्जा के मारे गड़ गया। उसने सुलकसाए को छाती से लगा लिया, 'वाह मेरे वेटे, मैं भी·····' उसने अपनी हथेलियों से अपना कपाल पीटा, 'मैं भी···!'

'नहीं दादाल, उसे भूल जाओ।'

'हां बेटा, भूलना ही पड़ेगा अब।'

तबसे कलमुमी अपने सगे बेटे से भी सुलक को ज़्यादा मानता है। नये घर में आकर सुलक वड़ा खुश है। उसे कुछ फिकर है तो वह महुआ की। और उसके साथ ही अपने काम की, अपनी जाति और धर्म की रक्षा की, जिसका भार उसने अपने कंधे पर उठाया है।

सारे गांव में सुलक की चाह होने लगी थी। उसने गीदम, बस्तनार, किलेपाल, बारसूर और आसपास के सारे गांवों को जगा दिया था। राजा के रखैल आदमियों की हरकतें भी उसने दूर-दूर फैला दी थीं। उस पूरे क्षेत्र का वह सरदार बन गया था। घोटुल में भी पाण्डू सिर्फ नाम का सरदार रह गया था। बाकी काम इसीकी मरज़ी से होता, जबकि वह उस घोटुल का एक साधारण सदस्य भी नहीं था। उसके आते ही घोटुल में जैसे रोशनी आ गई थी। नाच-गानों के मजमें रोज़ होने लगे थे। वह प्रायः रात को दूसरे घोटुलों में भी जाता और नाच-गाने में मस्त हो जाता। उसके बाद अपना काम करता। अपनी सेना में नये सिपाही भरती करता। उसका कहना था कि हमारा सारा संगठन घोटुल से ही हो सकता है। सच्चे लड़ाके सिपाही तो यहीं मिलते हैं। यहीं तो ग्राम की मौर हैं। इन्हें जगाओ, गांव जाग जाएंगे। और हुआ भी यही। सुलक ने इस तरीके से सारे गांवों को जगा दिया था। वे बस इस घात में थे कि हुकुम मिले। सुलकसाए का सम्पर्क गुण्डा से बराबर रहता था। दो सौ मील की यह दूरी भी उनके लिए बड़ी नहीं थी। दोनों क्या कर रहे हैं, जैसे बेतार का तार लगा है, सब पता चल जाता। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकारी अधिकारियों के प्रति लोगों में घृणा जागृत हो गई।

यह बात भी अभी ताज़ी है। डंकनी नदी के उस पार दन्तेवाड़ा के कुछ आदमी झाड़ काट रहे थे, तभी जंगल का एक जमादार वहां पहुंच गया। उसने

उन्हें रोका तो उन सबने मिलकर उसकी जान ले ली। और जब पुलिस को यह खबर लगी तो दरोगा को भी पकड़कर इन लोगों ने खूब पीटा। सुलक तब घबड़ा गया था। इससे उनकी कलई खुल सकती है। अभी समय वह नहीं आया था कि दूसरे उनका भेद जान लें। दन्तेवाड़ा के एक आदमी को फांसी के तख्ते पर झूलकर गांव की लाज बचानी पड़ी। उसने हंसते-हंसते कबूल कर लिया कि जमादार को उसीने अपनी टंगिया से मारा था। एक बवंडर आया था, चला गया पर सुलक के मन में भारी चिन्ता छोड़ गया। सब जाग गए हैं, कब तक जागते रहेंगे ? उसने गुण्डा को यह खबर भेजी तो उसने संदेश दिया कि दसेरा में हम सब मिलेंगे। उसने बताया कि सब कुछ करने के पहले हम एक बार अपने राजा से बातें करना चाहते हैं।

गरमी बीत गई और आकाश में बादल आने लगे। बादलों को देखकर दन्तेवाड़ा के निवासियों को राहत मिली। इस साल की भयंकर गर्मी ने डंकिनी और शंखिनी नदियों को एकदम सुखा दिया था। झिरिया खोदी तो वह भी रोज सूख जाती। कहीं कोई झरना जीवित नहीं रह सका था। पेड़-पौधे सब सूख गए थे। बस पीपल, बड़, आम, साल और महुआ के झाड़ों की ही छाया शरण देती थी। पगडंडी के दोनों ओर की ज़मीन मुंह फाड़ चुकी थी। सभी सताए थे, सभी व्याकुल थे। इसलिए मेघों को देखकर ही राहत मिली।

'टिट्ट् टिर्री, टिट्ट् टिर्री टिट्ट् ट्रिरी'—टिटरी खुले आकाश के नीचे चक्कर काटने लगी और पपीहा का 'पिऊ पिऊ पिऊ' लगातार सुनाई देने लगा। तिलोका ने देखा ढेर-सी लाल चींटियां मुंह में अंडे दबाए भागती जा रही हैं और चिड़ियां धूल में लोट-लोटकर नहा रही हैं।[1] वह ताली पीटती उचकने लगी, 'अरे पाण्डू, अब मेह बरसने में देर नहीं है।'

पाण्डू ने देंपुड़ की ओर देखा। बोला, 'हां सुलक, वह देख, पूरब से बादल उठ रहे हैं, बिना बरसे न जाएंगे।'

सुलक बादलों को देखकर दुःखी हुआ। बोला, 'हमें पानी तो मिल जाएगा पाण्डू, पर हमारा सारा काम चौपट हो जाएगा।'

---

१. ये सब पानी बरसने के चिह्न हैं।

'हां सुलक, पर····।' एकाएक सारे गांव को गहरे काले बादलों ने चारों ओर से घेर लिया। देखते ही देखते पानी की झड़ी लग गई। अंधाधुंध मेंह बरसा और महीनों की सताई धरती की प्यास पूरी हुई। ज़मीन से सौंधी-सौंधी सुगंध उठी और तुरन्त समा भी गई।

'अरे पाण्डू !'

'हां सुलक।'

'देख तो कैसा धुआं-सा फैला है। लगता है, आज बादल की छाती एकदम फट पड़ी है। सारा पानी आज ही बरस जाएगा।'

'बरसने दे सुलक,' तिलोका ने कहा, 'इन्दरपेन ने दया तो की हमपर !'

'हां तिलोकाऽऽ !' सुलक ने एक लम्बी सांस ली और वह न जाने किन विचारों में उलझ गया। शायद वह सोच रहा था कि पानी ने उसकी योजनाओं पर पानी फेर दिया है। अब तीन महीने इसी तरह बीतेंगे। एक जगह की खबर दूसरी जगह जाना मुश्किल है। घर से निकलने में ही आफत। उसने ऊपर देखा, छत की सूखी घास पिघरने लगी थी। इसी तरह यहां की सारी टपरियां पिघरेंगी और उनमें रहने वाले सिमटते जाएंगे। उनका विस्तार सम्पुटी की तरह ज़रा से घेरे में बन्द हो जाएगा।

पानी गिरता रहा। बाहर मैदान में पानी भर गया। पगडण्डियों से नदी जैसी तेज़ धार बह निकली और उनमें सारा कूड़ा-करकट और सूखे पत्ते बहने लगे। पानी जैसे अपने साथ धरती के सारे बेकार तत्त्वों को बहाकर ले जाना चाहता था और वहां आशा तथा उमंग के बीज बोने को उत्सुक था। लगातार कई घंटों तक पानी गिरने के बाद जब वह बन्द हुआ तो सारे गांव में चहल-पहल मच गई। लड़के-लड़कियां ताली पीट-पीटकर पानी में खेलने के लिए निकल पड़े। बाकी सबके चेहरे भी उजले और धुले थे। डंकिनी और शंखिनी नदियों की प्यास बुझ गई थी और उनमें मटमैला पानी बहने लगा था।

यहां बरसात आने की देर रहती है और जब आती है जो भेड़ियों के झुण्ड की तरह बादल आते हैं और पिघलकर तीर की तरह सीधे ज़मीन पर गिरने लगते हैं। तब लगातार कई दिनों तक दिन में न पोरद दिखाई देता और न रात में नेलेंज[१]। सारा गांव बादलों की घटाओं और अंधाधुंध झड़ी के कारण

---

१. चंद्रमा

घिर जाता है और दूर-दूर तक फैले एक बड़े सागर में टापू जैसा दिखाई देता है।

धरती की प्यास भी सीमित होती है। दो दिन पानी गिरा नहीं कि तीसरे दिन उसकी छाती पर अनगिनत अंकुर फूट पड़े। सामने के नंगे पहाड़ों ने हरे रंग के कपड़े पहन लिए और दोनों नदियां कुंडली मारे सर्प की तरह फुसकारने लगीं। छोटे-छोटे बहुत-से झरने अपने आप फूट पड़े। पानी के बहने का हलका-सा शोर दूर-दूर फैल गया।

बाहर पानी गिरे तो घर में ही सबको सिमिटकर बैठना पड़ता है। क्या पता फूस की टपरियां कहां से कब आंखें खोल दें! कब पानी की तलवार जैसी तेज़ धार आए और मिट्टी के झोंपड़ों को बहाकर ले जाए! इसलिए जहां पहले पानी के लिए पपीहे की तरह गांव भर कंठ फाड़ देता है, वहीं बाद में घबरा जाता है। घोटुल भी अब खाली रहने लगा है। पूरे सदस्य कभी मिल नहीं पाते। तेंदू के पत्तों की छतरी सनसनाते तीर-सी धार को कई बार नहीं सह पाती। चेलिक और मोटियारियों को तब अपने ही लोंन में रहना पड़ता है परन्तु उनकी आंखें बाहर ही लगी रहती हैं। ज़रा मेंह ढीला हो कि अपने जीवाल से मिलने दौड़ जाएं।

सुलकसाए को इस मौसम में महुआ की बड़ी याद आई। गढ़ बंगाल में भी बरसात इसी तरह उतरती थी। परन्तु पानी की कितनी भी झड़ी क्यों न लगी हो, महुआ और सुलक ने घोटुल आना नहीं छोड़ा। दोनों भीग जाते तो घोटुल में आकर अपने कपड़े सुखा लेते। सुलक दूसरे चेलिक और मोटियारियों पर भी सख्ती रखता, कहता, 'घोटुल आना तुम लोगों का कर्त्तव्य है। पानी गिरे या गाज। जब खाना बन्द नहीं करते तो घोटुल आना भी बन्द नहीं करना चाहिए।' जो सदस्य न आते वह उन्हें दूसरे दिन खूब डांटता। एक दिन अटाटूट पानी गिर रहा था। गांव की गैल में घुटनों पानी भरा था। ज़ोर की काटती हवा बह रही थी। महुआ छतरी लगाकर बाहर निकली तो हवा का एक झोंका उसे उड़ाकर ले गया था। वह पानी में लथपथ हो गई थी। इतना भीगकर वह घोटुल में कैसे जाती! घर लौट आई थी। सुलक शायद उसका रास्ता हेर रहा था। जब रात काफी हो गई और वह न आई तो सुलक उसके घर दौड़ गया। इत्ती रात, भयंकर अंधेरा और तेज़ी से बरसते पानी में उसका आना,

महुआ को अच्छा नहीं लगा । बोली, 'कैसा दीवाना है रे !'

'हां महुआ,' उसने अपने भीगे हाथों से महुआ को पकड़ लिया था, 'काफी देर पड़ा रहा, पर नींद न आई······· ।'

महुआ ने प्रेमभरी झुंझलाहट से उसकी चिहूंटी ली थी और भीतर से अपनी फटी आंचुर निकालकर उसे दी थी । सुलक ने उसे ही पहनकर महुआ के यहां रात काटी थी और दूसरे दिन उसे ताप आ गया था । तब तीन दिन तक वह कट्टुल में अचेत पड़ा रहा था । सिरहा ने चिरायता का कड़ुवा रस पिलाया था, तब कहीं उसका ताप मिटा था। इन तीन दिनों तक महुआ ने उसकी बड़ी सेवा की थी । अपनी गुदगुदी हथेलियां वह उसके कपाल पर रखकर घंटों बैठी रहती थी और सुलक उसे अपनी फटी आंखों से निहारता रहता था ।

सुलकसाए को न जाने कब की भूली-बिसरी बहुत-सी कहानियां याद आ गईं । बेकार दिमाग जहां ढाल देखता है, उतर ही जाता है । उसे महुआ का अभाव बड़ा खला । वह सोचता, आज महुआ होती तो·······!

'यह फन्दा गलत है जलिया !'

'तो तू बता ठीक क्या है ?'

'ऐसा, इस तरह डाल ।' महुआ ने गीकी की रस्सी ठीक तरह डालकर बताई । जलिया गीकी बिनने में लग गई ।

'यह गीकी किसके लिए बिन रही है जलिया ?'

'किसीके लिए हो, तुझे क्या ? तेरे लिए नहीं है ।'

'···············'

'सुलक, मेरे सिरदार, देख तो यह डगरपोल कैसा है ?'

'बहुत सुन्दर महुआ, बड़ा सुन्दर ! ला, मुझे पहना दे ।'

'हुश्श् ऽ ऽ ऽ, तेरे लिए ? सूरत है तेरी यह डगरपोल पहिनने की ?'

'तो किसके लिए बना रही है यह ?'

'किसीके लिए हो पर तेरे लिए नहीं है ।'

सुलक ने मुंह बना लिया था और आंखें बन्द कर ली थीं । तभी महुआ ने उठकर वह डगरपोल सुलक के गले में डाल दिया था और दोनों एक दूसरे से लिपटकर खूब हंसे थे ।

एक के बाद एक घटनाएं सुलक को याद आ रही थीं । घोटुल का हर

सदस्य फुरसत के समय कुछ न कुछ बनाता रहता है। हर प्रेमी अपनी प्रेमिका के लिए और हर प्रेमिका अपने प्रेमी के लिए उपहार तैयार करती हैं। साल भर के लिए गीकी बनाने का यही मौसम होता है।

आज पानी नहीं गिरा तो दन्तेवाड़ा का सारा घोटुल भर गया। उसके सारे सदस्य जैसे मिलने के लिए तलफ रहे थे। पाण्डू ने दो मुर्गे खड़े किए और दो मुर्गे तिलोका ले आई। दोनों की लड़ाई होने वाली थी और शर्त यह थी कि जिसका मुर्गा हारे उसे दो घंटे मुर्गा बनना होगा। सुलकसाए को हार-जीत का फैसला करना था। दोनों दलों का एक-एक मुर्गा छोड़ा गया। लड़ाई शुरू हो गई। मुर्गों के पैर में तेज़ धार का चाकू बंधा था। उससे दोनों आहत हो गए और देखते-देखते खून से ज़मीन लथपथ हो गई। दोनों सैनिक मारे गए थे। तब दूसरे दो मुर्गे मैदान में उतरे। उनमें अधिक उत्साह था। शायद वे अपने-अपने मृतक सैनिक का बदला लेना चाहते थे। दोनों मुर्गे अपने मालिकों के इशारे पर काम कर रहे थे। उनकी पैंतरेबाज़ी घोटुल के सारे सदस्यों का मनोरंजन कर रही थी। सब उन्हें घेरे खड़े थे। एक मुर्गा उचटकर दूसरे की पीठ पर मार करता तो दूसरा तुरन्त जवाब देता। कई बार दोनों हवा में एक दूसरे से मिलते और फिर ज़मीन पर घंटों लेटे लड़ते रहते। दोनों खून से भीग गए थे परन्तु कोई हार मानने को तैयार नहीं था।

'बेचारे मुर्गे !' एक सदस्य बोला, 'कितने भोले हैं ये !'

'भोला कहते हो इन्हें, देखते नहीं तिलोका का मुर्गा कितना चालाक है ! ताकत भर मार कर रहा है मेरे मुर्गे को, पर देखना आखिर जीत…।'

सबने ताली पीट दी। पाण्डू का मुर्गा चित हो गया था। उसकी गर्दन धड़ से अलग पड़ी थी। तिलोका खुशी से बांसों उछल गई। ताली पीटकर वह घूमने लगी, 'तेरा मुर्गा हारा, मेरा मुर्गा जीता, मेरा मुर्गा जीता !'

'चल मुर्गा बन।'

'पाण्डू ने लाल आंखों से तिलोका की ओर देखा और दोनों पैरों के नीचे से हाथ डालकर उसने अपने कान पकड़े और मुर्गा बन गया। लेकिन तभी तिलोका का मुर्गा भी छटपटाकर चित हो गया। पाण्डू खड़ा हो गया, 'तेरा मुर्गा भी मर गया। अब मैं मुर्गा नहीं बनूंगा।'

'नहीं, बनना होगा। जीत तो मेरे मुर्गे की हुई है।'

दोनों इस बात पर झगड़ पड़े। सुलक थोड़ी देर उनका झगड़ा देखता रहा। उसे अपने घोटुल का वह झगड़ा याद आ गया जो तीतर फंसाने में एक बार हुआ था। शिकालगीर का तीतर हार गया था परन्तु उसने हार न मानी थी। जलिया अपने तीतर की जीत पर खुश थी और शर्त के अनुसार शिकालगीर को 'दो रीलो' की सज़ा दिलाना चाहती थी। शिकालगीर को रीलो आखिर गाना ही पड़ा परन्तु एक रीलो के समाप्त होते ही जलिया का तीतर भी मर चुका था।

'तीत्तरर तीत्तरर तीत्तरर' आवाज़ करते-करते वह लड़खड़ा गया और चित हो गया था। तब वहां भी फैसला सुलकसाए ने किया था।

'ठहरो', सुलक बोला, 'मुर्गा चाहे तेरा जीता हो तिलोका, पर तूने देखा, लड़ाई का फल क्या होता है। पहले दोनों सैनिक मारे गए और फिर दोनों सेनापति। दोनों के बंस में अब कोई रोने वाला नहीं रह गया। हर लड़ाई का परिनाम यही होता है तिलोका, इसलिए वह बुरी चीज है। तुम दोनों संधि कर लो...।'

तिलोका ने ज़मीन की ओर देखा, जहां चारों मुर्गे खून में सने पड़े थे। उसने एक लम्बी सांस खींची, 'बेचारे मूरख मुर्गे!'

'दुनिया इन्हीं मूरखों से भरी पड़ी है तिल्लो।'

'पर तू भी तो कहता है कि गोरों से जाकर हम लोग लड़ेंगे।'

'हां तिल्लो, हम लड़ेंगे, जरूर लड़ेंगे। तब तक लड़ेंगे जब तक हममें से एक भी जिन्दा है।' सुलक जोश में आ गया था, 'हम इसलिए लड़ेंगे तिलोका क्योंकि हमें अपनी रच्छा करनी है। गोरे हमपर छिपकर तीर चला रहे हैं। यह कायरों का काम है। हम तो खुलकर उनपर तीर छोड़ेंगे और कहेंगे, सामने आओ और बीरों की तरह लड़ो।'

'जैसे हमारे मुर्गे लड़े थे वैसे ही?' तिलोका हंस दी।

'नहीं, वे मूरख थे जैसे बाज होता है। दूसरों के इशारे पर तो वह शिकार करता है पर उसे खाने क्या मिलता है? हम किसीके इसारे पर नहीं नाचते। हम तो अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को रोकना चाहते हैं। हम उनसे जाकर पहले कहेंगे कि अत्याचार रोको और आदमी बनो।'

'और वे तुम्हारी बात मान लेंगे?'

'न मानेंगे तो उसका फल चखेंगे। हम पहले अपने राजा से मिलेंगे, तिलोका। उससे सारा किस्सा कहेंगे···।'

'सुन चुका वह सुलक,' पाण्डू बोला, 'वह सुनता तो हमें आज मुसीबत क्यों होती !'

'फिर भी एक बार सुनाएंगे तो···और फिर तीर····वह तीर, जिसमें माहुर लगा है। एक-एक कर सब चित हो जाएंगे और किसी सोते सांप को जगाने का मजा चखेंगे।'

सुलक की बात का किसीने जवाब नहीं दिया। उसने पाण्डू को बुलाया और कहा, 'कल से हम लोग यहां तीर बनाएंगे और उनमें माहुर लगाकर तरकस में बन्द रखते जाएंगे। जितने ज्यादा तीर बन जाएं उतना अच्छा। यही तो हमारा हथियार है पाण्डू, जिसके सहारे हम दूर से झगड़ सकते हैं।'

'तो उसमें भी सर्त लग जाए,' तिलोका बोली, 'देखें कौन ज्यादा तीर बनाता है।'

'हां,' सुलक ने कहा, 'इस सर्त का हम सबको स्वागत करना चाहिए।'

सारे सदस्यों ने यह बात मान ली। तिलोका ने तुरन्त बांस चीरना ही शुरू कर दिया, बोली, 'अपनी खैर मना पाण्डू।'

आकाश खुला था। सारी धरती हरी हो गई थी। गांव के रास्ते पुरुष भर ऊंचे झाड़ों से घिर गए थे। नदी कगार को फोड़कर मैदान तक आ गई थी और सब दूर पानी ही पानी भर गया था। सुलक ने देखा, कांस के फूलों से भरा हरी धरती का छोटा-सा टुकड़ा। वहां चांदनी खिली थी जैसे। उसीके पास शायद कोई डबरा[1] था। बगुलों की सेना वहां जमा थी और अपनी ऊंची टांगों तथा लम्बी चोंच से मैदान में डटी थी। उनसे दूर सारस के झुण्ड सफेद पाल ताने थे। खेतों में जुनरी के बांसों-ऊंचे उठे पौधे सामने की पहाड़ी को जैसे चुनौती दे रहे थे। उनके बीच सफेद और काले कपड़ों के पुतले खड़े थे। वे उनके पहरेदार थे और मानो कह रहे थे—ज़्यादा मत इतराओ रे। पहाड़, पहाड़ बना रहेगा परन्तु तुम जब सोनियां चादर ओढ़कर गर्व से हवा में इठलाने

---

१. गड्ढा

लगोगे तो लुटेरे तुम्हें चौपट कर देंगे और जड़ से उखाड़ फेंकेंगे। तुम्हारा यह गरब मिट्टी में मिल जाएगा।

सुलक ने चारों ओर नज़र दौड़ाई। हरी-भरी धरती के ऊपर कपास के तैरते ढेरों से भरा दूर-दूर तब फैला आकाश !

ओ दीदी पिया गे परदेस
न कोउ आवे न कोउ जावे
न भेजें संदेस।
ओ दीदी मोर पिया गे परदेस।

एक मीठी-सी आवाज़ चारों ओर गूंज जाती थी। कितनी मिठास थी उसमें, लेकिन उसमें वेदना भी कितनी भरी थी !

ओ दीदी मोर पिया गे परदेस।

उसने चारों तरफ देखा। कहीं कुछ न दिखा। धीरे-धीरे उसने अपने पैर बढ़ाए। आवाज़ जैसे पास आती गई। सुलक रुका। उसने चारों ओर देखा, बाएं हाथ की ओर जुनरी के खेत में मचान पर खड़ी कोई लड़की लचक-लचक-कर गा रही थी। वह हाथ में गुलेल लिए थी। उसमें पत्थर फंसाकर वह उसे एक बार चारों ओर घुमाती और फिर हवा में छोड़ देती थी। वह पत्थर न जाने कहां खो जाता। सुलक उसे देखता रहा। एक पत्थर उसके कपाल से आ टकराया।

'अरे रे ए ए ए !' उसका हाथ कपाल पर चला गया। हथेली से वह उसे सहलाने लगा। लड़की ने शायद यह देख लिया था। वह मचान से नीचे उतर आई।

'चिच्च चिच्च चिच्च !' मुझे माफ कर दे, साइगुती।'

'साइगुती !' सुलक ने अपनी नजर ऊपर उठाई। उसे आंख भरकर देखा। उसकी छोटी-छोटी और नन्हीं आंखें, सजे-संवरे बाल, उनमें लाल रंग का छूटा और कपाल पर कुमकुम का एक गोल टीका, अंधेरी रात में जलती आग की रोशनी की तरह। गले में चांदी की हंसली बगुलों के पर जैसी सफेद, चमकती। उसके पैर हवा में शायद यहां-वहां घूम रहे थे। पैर की पायलिया बार-बार बज उठती थी और 'रुनझुन रुनझुन रुनझुन' की हलकी-सी मीठी आवाज़ चारों तरफ बिखर जाती थी। सुलक उसकी ओर देखता रहा।

'देखूं, तुझे ज्यादा लग गया ?'

सुलक ने कपाल पर से अपना हाथ हटा लिया। उसने वहां अपना हाथ रखा। हलका-सा खून छलछला आया था। खून को उसने अपनी साड़ी से पोंछ दिया, 'माफ कर देना साइगुती.... ।'

'फिर साइगुती.... !'

''क्यों ? क्या हुआ ?'

'तू मुझे जानती है ?'

'हां, क्यों नहीं'—अपने दोनों हाथ हवा में झुलाते हुए वह बोली, 'तेरा नाम है सुलकसाए, गढ़ बंगाल से भागकर आया है... ।'

सुलक ने मुंह फाड़ दिया, 'परन्तु मैं तो तुझे नहीं जानता !'

'जरूरी नहीं है कि तू मुझे जाने।'

लड़की बड़ी निश्चिन्त होकर बातें कर रही थी। उसकी निश्चिन्तता देखकर सुलक को बड़ा अचरज हुआ। वह बोला, 'तीर कमाल का साधती है।'

'हां, क्यों नहीं, देखा...., नहीं....नहीं, तुझे नहीं मारना चाहती थी सुलक ! धोखे से तुझे जा लगा।'

'और तेरी बला से !'

'नहीं, ला मैं उसे दबा दूं।' उसने अपने हाथ से माथे को ज़ोर से दबाया। सुलक को उसकी नरम हथेलियां बड़ी भाईं। वह बार-बार नज़र उठाकर उसकी ओर देखता रहा। वह चाहता था कि यह लड़की इसी तरह हाथ दाबे रहे।

कुछ आवाज़ें सुनाई दीं। शायद कुछ लोग उस ओर आ रहे थे। वह लड़की उसे वहीं छोड़कर अपने खेत की ओर दौड़ गई। सुलक उसके पायलों की रुन-झुन की आवाज़ सुनता रहा, और उसे देखता रहा। वह फिर मचान पर चढ़ गई थी। चारों ओर से जुनरी के पौधों ने उसे फिर घेर लिया था। उसके सिर पर कपसीला आसमान झुका था। इनके बीच वह किसी वनदेवी की तरह सुशोभित हो रही थी।

'ओ दीदी, मोर पिया गे परदेस।'

उसका कंठ फिर फूट पड़ा था।

'सुलक, अरे ओ सुलक, वहां क्या कर रहा है ?'

सुलक ने देखा, मुंदरी कुछ औरतों के साथ चली आ रही है।

'आवा आ आ !' सुलक उसकी ओर बढ़ गया।

'हां बेटा, यहां क्या कर रहा है ?'

'वह पैकी····वह पैकी, आवा··· आवा, वह पैकी··· !'

'कुछ कहेगा भी ?'

'वह पैकी···पैंकी, कौन है आवा ?'

'क्यों ?'

'बस, वैसे ही पूछ रहा हूं। बड़ा मीठा गाती है। सुनती नहीं··· मोर पिया गे परदेस, ओ दीदी।'

'वह बड़ी अभागी पेड़गी है बेटा !' मुंदरी ने सांस छोड़ी, 'रावत जात की है। इसी गांव में रहती है। बारसूर में उसका पेंडुल हुआ था। पेंडुल के दूसरे बरस ही उसके मोइदो ने उसे घर से भगा दिया।'

'क्यों ?'

'कहते हैं, एक दिन वह गांव के किसी और आदमी के साथ पिरेम कर रही थी।'

'तो क्या हो गया ? इत्ती-सी बात और इत्ती बड़ी सजा ! हरजाना दे देता वह आदमी····।'

'नहीं बेटा, इनकी जात निराली है। ये बड़ी-बड़ी बातें करते हैं। इनके यहां कोई दूसरा आदमी लड़की का हाथ भर पकड़ ले····।'

'तो आवा, अब यह वहां नहीं जाएगी ?'

'नहीं बेटा, अब तो बेचारी आधी पागल हो गई है। वह बारसूर की ओर मुंह कर हमेशा यही गीत गाती रहती है। सुना है, उसके मोइदो ने अब दूसरा बिहाव कर लिया है।'

'तो यह भी क्यों नहीं कर लेती ?'

'कोई करने को तैयार नहीं है।'

'क्यों आवा, क्यों तैयार नहीं है ? पेड़गी तो देखने में सुन्दर है। उसका नुकीला चेहरा, गोल आंखें, उभरा कपाल····!'

'बस, बस, ज्यादा बातें मत कर। चल, क्या तुझे काम नहीं है ?'

'है तो।'

'तो जा।'

'पर आवा आ आ !'

'पर कुछ नहीं। इनकी जात में इतना सस्ते बिहाव नहीं हो जाता और अब तो वह पागल है। कौन बिहाव करेगा ! तू उससे कभी बात न करना, समझा ?'

'हां... नहीं, आवा, कभी नहीं। तू जा। मैं भी जा रहा हूं जरा नदिया के तीर।'

सुलक धीरे-धीरे आगे बढ़ गया परन्तु उसके पैर नहीं उठ रहे थे। वह लौट-लौटकर उस पेड़गी की ओर देख रहा था। मुंदरी और दूसरी औरतें बाएं हाथ की ओर चली गई थीं। सुलक ने जब देखा कि वे आंखों से ओझल हो गई हैं तो वह लौट पड़ा। 'कैसी पागल है यह ! इसमें तो पागलपन के कोई लच्छन नहीं हैं... ।'—सोचता-सोचता वह उस मचान के पास पहुंच गया।

'ओ पेड़गी !'

वह लड़की उसी तरह गाती रही, 'ओ दीदी...'

'ओ पेड़गी !'

उसने तीन-चार बार आवाज़ लगाई। लड़की ने न उसकी ओर देखा और न कोई जवाब दिया। सुलक ने एक छोटा-सा कीचड़ भरा कंकड़ उठाकर उसकी ओर फेंका। वह उसकी कलाई में जा लगा। उसने गाना तुरन्त बन्द कर दिया और पीछे आंखें फेरीं, 'क्या है रे, यहां क्यों आ गया ? कोई देख लेगा तो ?'

'देख लेने दे।' सुलक मचान पर चढ़ने लगा।

'नहीं सुलक, यहां मत आ। मेरा आदमी देख लेगा। वह देख बड़ी दूर से मुझे देख रहा है। तुझे साथ देखेगा तो मुझे खूब मारेगा। यहां मत आ सुलक, मत आ।'

सुलक चढ़ता गया। लड़की ने उसे एक धक्का दे दिया तो वह नीचे कीचड़ में गिर पड़ा, 'चिच्चच्च ! माफ कर दे सुलक, मैं ही नीचे आ जाती हूं।'

वह नीचे कूद गई। सुलक कीचड़ में सन गया था। लड़की ने उसके पैरों में लगे कीचड़ को झुनरी के पत्तों से पोंछा और डबरों में भरे पानी को चुल्लू में ले-लेकर उसे धोने लगी।

सुलक ने उसके हाथ पकड़ लिए और उसकी ठुड्डी ऊपर उठाई, 'बस, अब ज्यादा सेवा न कर।'

लड़की खड़ी हो गई और फिर मचान पर चढ़ने लगी। सुलक ने उसका हाथ पकड़ लिया, 'भागने लगी ? अपना नाम तो बता।'

'नहीं सुलक, मेरा आदमी देख लेगा। बहुत बड़ा आदमी है वह। ढेर-से खेत हैं उसके। भाग, तू भाग यहां से।'

वह ज़मीन पर खड़ी कमर में लचक देकर हवा में डोलने लगी। उसका लाल छूटा झूलने लगा।

'अपना नाम तो बता।'

'रतिया, रतिया ही तो मेरा नाम है। वह मुझे रातो कहता था और इसी नाम से बुलाया करता था।'

'वह कौन ?'

'वह····वही····वही····तो !'

'उसका नाम, रातो ?'

'रातो, तुमने मुझे रातो कहा। फिर कहो।' सुलक चुपचाप उसे देख रहा था। उसकी आंखों में आंसू आ गए थे, पर वह हंस रही थी। उसके सारे शरीर में बिजली जैसी चंचलता भरी थी।

'कह न, कह रे ए ए !'

'रातो, रातो, रातो !' सुलक ने तीन बार कहा तो वह उससे लिपट गई परन्तु दूसरे ही पल दूर भी हो गई, 'नहीं रे, भाग जा, वह देख लेगा। तू उससे कहेगा तो नहीं, मैंने तुझे छुआ था ?'

सुलक की आखें पत्थर बन गई थीं। वह उसके हर परिवर्तन को देख रहा था। बड़ी अजीब लड़की थी वह; पल में कुछ और पल में कुछ। आवा सच कहती थी, वह पागल है। उसने सुलक के हाथ झकझोर दिए, 'बोल, उससे कहेगा तो नहीं ?' फिर खुद ही पीछे हट गई, 'अरे मैंने फिर छू दिया तुझे ! क्या छूना पाप है सुलक ? छुआ भर तो था मैंने उसे और··· उसने····।' वह एकदम पीठ की ओर लौट गई और अपने मीठे गले से 'ओ दीदी, मोर पिया गे परदेस' गाती जुनरी के खेत में खो गई। सुलक मुंह फाड़े कीचड़ झाड़ते

बाहर निकल आया। यह लड़की और उसकी जात दोनों जैसे उसकी समझ के परे थे।

१६

हर्ष और उमंग के साथ सावन-भादों के पंख खोलकर चौमासा लौटने लगा। बेकार बैठने के दिन बीतने लगे। घोटुल के चेलिक और मोटियारियों को साल भर के लिए जो बनाना था, बना चुके। दिन भर चंग की थाप पर या ढोल और मांदर की आवाज़ पर कंठ के बेतुके राग छेड़ने का ज़माना चला गया। सब पहले की तरह अपना लोंन छोड़कर खुले आसमान में निकल पड़े। हलकी-हलकी ठंड पड़ने लगी। काम करने में उससे गति मिली। तीन-चार महीने से सुलकसाए बेकार बैठा था। वह अपने मन में तब बड़ी-बड़ी योजनाएं बना रहा था। उन्हें मूर्तरूप देने का अवसर अब आ गया था। सुलक ने एक दिन घोटुल के सारे सदस्यों और गांव भर के चुने हुए लोगों की सभा बुलाई। उसने बताया कि हमारा संगठन काफी मजबूत हो चुका है। बस, नेता के हुकुम मिलने की देर है। गुण्डा धूर कुछ साथियों के साथ यहां काम देखने आने वाला है। तब पूरी और पक्की रूपरेखा बनेगी।

सुलकसाए ने बताया कि उनके लिए यह जरूरी है कि वे अपने हथियार पैने कर लें और अधिक से अधिक तीर तथा कमान बनाकर रखें। बरसात में कुछ जगह यह काम हो चुका होगा। जहां नहीं हुआ, अब होना चाहिए। इस काम के लिए उसने गांव के पांच युवक चुने। प्रत्येक के ज़िम्मे पांच-पांच गांव दिए गए और उनसे कहा गया कि वे इन गांवों में जाकर वहां का पूरा-पूरा संगठन करें। संगठन के लिए बीस नये गांव चुने गए, जिनमें [कई गांव वहां से काफी दूर जगदलपुर के पास थे। गांव के प्रत्येक व्यक्ति ने सुलक की बात को बड़े ध्यान से सुना और पूरी मदद करने की कसम खाई।

दसेरा के दिन ही कितने बचे थे! इस साल उनका नेता वहां आने वाला था, इसलिए उसके स्वागत की भी ज़ोरदार तैयारियां शुरू हो गईं। सुलक ने कहा कि हम घोटुल में उसका स्वागत करेंगे। अभी खुलकर स्वागत करने से

बात बिगड़ सकती है। इसलिए स्वागत की तैयारी करने का काम पाण्डू और तिलोका पर छोड़ा गया। सुलक ने चैन की सांस ली।

कोरता पाण्डुम का परब आया। कोरता पाण्डुम[1] की रात नाच-गाने की होती है। जवान जोड़ों को तब अपने मन की साध पूरी करने का समय मिलता है। गांव के बाहर खुली चांदनी में एक भारी मजमा जमा हो गया। सब लोगों ने खूब लांदा ढाली और उचट-कूदकर खूब नाच किया। सुलक को इस समय भी अपने गांव की बड़ी याद आई। वहां उसने कई बार यह परब मनाया था। तब महुआ उसके साथ रहती थी और दोनों होड़ लगाकर नाचा-गाया करते थे। आज वह बिलकुल अकेला था। वैसे घोटुल में कई मोटयारियां थीं और प्रायः सभीने उसके साथ नाचने की इच्छा प्रकट की परन्तु उसका मन न हुआ। भीतर ही भीतर उसका मन कचोट रहा था। परन्तु तिलोका भला उसे कैसे अधूरा रहने देती ! हाथ पकड़ वह सुलक को मैदान में खींच ही लाई। सुलक को मैदान में उतरना पड़ा परन्तु उसके पैरों में कोई गति नहीं ला सका। एक सधा और मस्त नचैया आज अनाड़ी निकला। उसे मैदान छोड़ना पड़ा। सारी मोटयारियों ने ताबी पीटकर उसकी बड़ी हंसी उड़ाई।

कोरता पाण्डुम के खतम होते ही दन्तेश्वरी मइया के मंदिर की सफाई शुरू हो गई। उसे रंग-बिरंगी पताकाओं से सजाया गया। सुलक को पता लगा कि गुण्डा अपने साथ महुआ को भी ला रहा है। उसकी खुशी का अन्त नहीं। उसके सोए हाथ-पैर जैसे जाग उठे थे। उसने गांव वालों से कहा, 'तुम्हारा नेता आ रहा है। उसका गेंबड़े में ही भरपूर स्वागत होना चाहिए।' उसकी बात कौन टालता ! सुलक का एक-एक दिन मुश्किल में बीत रहा था। वह उस दिन की बड़ी उतावली से प्रतीक्षा करने लगा। तब घोटुल की रातें उसे और बेचैन करने लगी थीं। वह रात भर महुआ के सपने देखता था। वह सोचता था कि महुआ आएगी तो वह यह कहेगा, वह कहेगा। एक बड़ा पुराण ही जैसे वह अपने मस्तिष्क में लिख रहा था।

बेचैनी के दिन कटे और वह दिन आ गया। गुण्डा अपने दस साथियों के

---

१. सितम्बर-अक्टूबर में मनाया जाने वाला पर्व। बरसात के बाद इस दिन सबसे पहली बार खुले मैदान में नाच होता है।

साथ दन्तेवाड़ा आ गया। गांव के गेंवड़े पर जुनरी के आटे की रेखा खींचकर गांव भर ने उनका स्वागत किया। फिर सबने मातुल को सिर झुकाया। सुलक ने महुआ को देखा तो उसे लगा कि वह दौड़कर उसे अपने सीने से लिपटा ले; परन्तु दूसरे लोग थे, वह ऐसा न कर सका। दोनों की फूली आंखें एक दूसरे को ताकती रहीं। दोनों आंखें जैसे एक में मिल गई थीं। महुआ के साथ झालरसिंह भी था और गढ़ बंगाल का सिरहा भी। सिरहा ने सुलक को अपने कलेजे से चिपकाकर उसकी पीठ थपथपाई, 'मेरे हीरा, तूने गांव से भागकर अच्छा नहीं किया। तेरे जाने के बाद गांव उजड़ गया।'

'क्यों दादाल, क्या हुआ ?' सुलक ने चिन्ता से पूछा।

वह बोला, 'अरे, क्या नहीं हुआ रे ! अब होने को बचा ही क्या है !'

'वह सब कुछ जानना चाहता था। उसने जिज्ञासा प्रकट की। सिरहा ने कहा, 'महुआ ही तुझे सब कुछ बता देगी।'

महुआ तब उसके पास आ गई थी। सुलक ने सत्ताय की हत्या की कहानी सुनी तो बड़ा दुःखी हुआ, बोला, 'वह कैसी भी हो, मेरी आवा थी महुआ।' उसके नाम पर सुलक ने दो आंसू बहाए। उसने गंगी को असीसा। वह साथ न देती तो हिरमे मर जाता। इत्ते लड़कों को वह कैसे पालता ? गांव भर का भार वैसे ही उसके सिर पर है। गूमा जेल से छूट गया, यह जानकर भी उसे खुशी हुई। बोला, 'सत्ताय का उसने खून कर अच्छा नहीं किया, पर जब खून हो ही गया था तो उसे बचाकर तापे ने गांव का बड़ा उपकार किया है। अच्छा होता गूमा को यहां ले आती। मइया की वह पूजा कर अपने पाप से तो छूट जाता।'

भुसरी के बारे में दोनों चर्चा करने से मन ही मन डरते थे।

झालरसिंह बड़ा अनमना था। उसका उत्साह जाने कहां खो गया था ? सुलक ने उसे देखा और उसके बारे में पूछताछ की। जलिया के बारे में भी जानना चाहा। महुआ ने सारा किस्सा कह सुनाया। बोली, 'जलियारो तो अब आन गांव चली गई है और नये घर में ऐसी रम गई है जैसे पीछे कुछ हुआ ही नहीं।'

'नहीं महुआ, ऐसा मत सोच। उसके मन की बिथा को कौन जान सकता है ! अब वह कर भी क्या सकती है ! नये घर में रम गई, यह उसने बहुत अच्छा किया।'

सुलक को यह सुनकर भी सन्तोष मिला कि उस घर में वह सुखी है। दोनों की खूब पटती है। दोनों साथ जंगल जाते हैं और बड़े प्रेम से रहते हैं। उसने झालरसिंह की पीठ पर हाथ रखकर हमदर्दी दिखाई। बोला, 'मरद का बच्चा है तू, एक औरत के लिए क्यों रोता है? अरे, हमें औरतों की क्या कमी! वे तो कनतेली[1] की तरह हमसे लिपटती हैं।'

झालरसिंह का चेहरा अपरिवर्तित रहा।

सारा दल घोटुल तक पहुंच गया था। वहां चेलिक और मोटियारियों ने इनका स्वागत किया। सुलकसाए ने सबका परिचय कराया। सब आराम करने चले गए। सुलक, महुआ को अपने घर ले गया। कई बरस के बाद वह मुंदरी से मिली थी। मुंदरी ने उसके गाल चूमे और गले से लगाया। महुआ और मुंदरी बड़ी देर तक बातें करती रहीं। हिरमे के बारे में भी महुआ ने सब बताया। गांव के एक-एक आदमी के बारे में मुंदरी ने फिकर के साथ पूछताछ की। उसने सुलक की हालत का भी बखान किया। महुआ ने जब सुना कि उसके वियोग में सुलकसाए पागलों जैसा रहता है, तो वह बड़ी प्रसन्न हुई। नेतानार में जो घटना हो गई थी, उसे वह एकदम भूल गई। शंका-कुशंकाओं की उसने जो गांठें अपने मन में बांध ली थीं, सब एक साथ खुल गईं। उसका जीवाल सच्चा है। उससे दूर रहकर भी चाहता है। औरत के लिए इससे बड़ी बात क्या हो सकती है! महुआ की सारी मूर्च्छनाएं जाग उठीं। प्रणय की एक मदमाती स्वर-लहरी उसके मन में गूंजने लगी।

रात को घोटुल में सभा हुई। गुण्डा धूर ने सारी योजनाएं समझाईं। वहां जो काम हो चुका है, वह बताया। सुलक को यह जानकर बेहद प्रसन्नता हुई कि महुआ भी काम कर रही है और वह भी नेता कहलाती है। घोटुल के दूसरे सदस्यों को भी आश्चर्य हुआ था। तिलोका ने कहा, 'धन्य है महुआ! तू हम कमजोर कही जाने वाली औरतों का नाम जगा रही है। तुझे पाकर हमारा नाम बढ़ा।' सारी मोटियारियों ने महुआ की जयजयकार की। महुआ के जय की ध्वनि सुनकर सुलक का मन दूर आसमान में उड़ने लगा।

गुण्डा ने सुलक के काम का ब्योरा सुना तो खुश हुआ। बोला, 'भाइयो,

---

१. शहद की मक्खी

हमारा असल सरदार तो सुलकसाए है। हम सब उसके सिपाही हैं।'

'नहीं साइगुती, यह गलत है—हमारा नेता है गुण्डा धूर। आओ हम सब एक साथ उसकी जय बोलें—जय गुण्डा की, गुण्डा की जय !'

सब लोगों ने सुलक की आवाज़ में आवाज़ मिलाई। गुण्डा की छाती फूल उठी। बोला, 'जैसे तुम्हारी मरजी। परन्तु मैं तुम लोगों के बिना कोई काम नहीं कर सकता।'

सब लोगों ने उसका पूरा साथ देने का वचन दिया। झालरसिंह ने कहा, 'गुण्डा, मैं अब सुलक के साथ काम करना चाहता हूं।'

'जैसी तेरी मरजी।' गुण्डा बोला।

सुलक, झालरसिंह की मानसिक हालत जानता था इसलिए उसने झालरसिंह को अपना साथी बनाना स्वीकार कर लिया।

दन्तेवाड़ा की झाड़ियां और घाटियां महुआ को बेहद पसन्द आईं। उसे सारा डोंगुर हंसता-खेलता दिखाई दिया। चंचल नदियां पत्थरों से लिपटकर प्यार करती हैं और किनारों को चूमती, झाड़-पेड़ों को गले लगाती आगे निकल जाती हैं। सफेद दूधिया पानी सूरज की किरणें पाकर सतरंगा हो उठता है तो रात में चांद को गोद में लेकर सैकड़ों लहरों से बने पालने में झूलता है। यह सब प्यार नहीं तो क्या है ! प्यार एक होता है—वह चाहे किसीका हो। सबके मूल में एक ही भावना होती है और वह भावना है मन के सन्तोष की। महुआ ने देखा, चांद को झुलाकर भी लहरें सन्तोष पाती हैं और पत्थरों को चूमकर भी। उनकी खुशी कल-कल स्वरों में अनन्त रागों के साथ फूट रही है। महुआ अपने गले के रागों को उन रागों के साथ मिला देना चाहती थी। उसने मुंह खोला तो सुलक ने जरिया की एक लाल बेर मुंह में डाल दी। समूची बेर बिना चबाए वह निगल गई और दोनों एक दूसरे से लिपटकर खिलखिला उठे।

'देख सुलक, कित्ता पिरेम बहा जा रहा है !'

'पिरेम भी बहता है ! मैं तो आज ही देख रहा हूं।'

'वह देख' महुआ ने पानी की धार की ओर अंगुली दिखाई, जहां किसी गड्ढे को पाकर पानी जैसे रुक गया था, 'वह बातें करते-करते थक गया है। क्या कोरी बातों से किसीका पेट भरता है ?'

उसने एकदम लौटकर सुलक की ओर देखा। सुलक भी उसके उलझे बालों और फटी आंखों को देख रहा था, 'तू किसके बारे में कह रही है ?'

महुआ ने सुलक की नाक ज़ोर से दबा दी, 'उस पानी के बारे में और तेरे बारे में।'

'समझा,' सुलक बोला, 'तो चल, उसी पानी से प्यार की बातें पूछें।' सुलक पानी में उतर गया। उसने महुआ की ओर पानी उलीचना शुरू किया, 'तू भी उतर आ, फिर कहेगी—अकेला प्यार में डूब गया।'

महुआ ने विचित्र-सी मुद्रा बनाई और पानी में उतर गई। दोनों घंटों वहां नहाते रहे। कभी वे खिलखिलाकर हंस देते और कभी एक दूसरे के पास आकर कान में कुछ फुसफुसा लेते। घंटों नहाने के बाद वे बाहर आए। धूप में उन्होंने अपने कपड़े सुखाए।

'चल सुलक अब चलें, यह तो बड़ी सुन्दर जगह है। एकदम अकेली और एकदम शान्त!'

'तुझे सन्यासी तो नहीं बनना ?'

'क्यों ?'

'तुझे अकेली और शांत जगह पसन्द आने लगी है। यह तो दुनिया से दर भागने की निसानी है।'

'तेरे रहते भला कोई दूर भाग सकता है !'

'मेरा क्या है ? तू तो लौट जाने वाली है।'

'तू नहीं चलेगा ?'

'नहीं महुआ, कित्ता काम पड़ा है अभी ! अभी तो आग जलाई है, उसके साथ खेलना पड़ेगा, उसपर चलना पड़ेगा। करतब तो मुझे आते नहीं; बच पाता हूं या आग में···'

'नहीं,' महुआ ने उसके मुंह पर हथेली रख दी, 'आग तेरा कुछ नहीं कर सकती रे सुलक··पर, तू अब अपने गांव नहीं चलेगा ?'

'नहीं' सुलक ने सिर हिला दिया।

'हां' क्यों चलेगा ? यहां सब सुन्दर जो हैं। कोई पसन्द आ गई क्या ? सुना है, यहां के घोटुल में भी तूने अपनी धाक जमा ली है। तिलोका तेरे गुन गाते नहीं थकती। और एक लड़की मिली थी···।'

'कौन लड़की ?' सुलक ने व्यग्र होकर पूछा।

'पकड़ गया न। जरूर कोई खोट है। बता, कौन लड़की है वह ?'

'मैं नहीं जानता महुआ, तू ही बता।'

'वही जिसके साथ तू जुनरी के खेत में एक दिन खेल रहा था।'

सुलक सुन्न रह गया। थोड़ी देर उसने महुआ के चेहरे को देखा। वह उसी तरह हंस रही थी। वह बोला, 'उसके साथ क्या खेलूंगा महुआ ! उसकी बड़ी दर्दभरी कहानी है।'

'वह भी सुन चुकी हूं। इसीलिए तो कहती हूं, प्रेम की मारी औरत पत्थर हो जाती है। उसके चंगुल से दूर रह, वरना सिर तेरा ही फूटेगा।'

सुलक ने महुआ को पकड़कर झकझोर दिया। वह तमतमा उठा था, बोला, 'वह तो पागल है बेचारी। हमारी जात की नहीं है। तुझे मजाक करना भी नहीं आता।'

महुआ ने शायद मज़ाक ही किया था। सुलक का यह परिवर्तन देखकर उसे आश्चर्य हुआ। उसने एक झटके से अपने को छुड़ा लिया, बोली, 'तिनक गया न ? बात में जरूर गहराई होगी।'

'हां है, जा।' सुलक ने पीठ फेर ली। महुआ ने चिड़ियों की तरह फुदक-कर उसके दो चक्कर काटे फिर उसका हाथ पकड़कर बोली, 'खैर, छोड़ इसे, जब हमें फिर बिछुड़ना है तो झगड़ा क्यों करें !' वह ज़ोर से हंसी और उसने सुलक के पेट में अंगुलियां चुभाईं। सुलक चाहकर भी खुलकर न हंस सका। बनावटी हंसी उसके सिल्वी पर खेलने लगी। दोनों नदी का तीर छोड़कर आगे बढ़ गए। थोड़ा आगे चलने पर महुआ रुक गई। उसने ज़मीन से एक पत्थर उठाकर सामने फेंका। वह सामने की झाड़ी पर जाकर गिरा तो एक पक्षी, 'तीत्तरर' करता वहीं धूल में लोटने लगा। दोनों वहां दौड़ गए। वह तीतर था। सुलक ने उसे उठा लिया, 'क्यों मार दिया इसे, हम जिन्दा ही पकड़ लेते। बड़ा अच्छा था बेचारा !'

महुआ तुनक गई, 'हां मेरे काम अब तुझे क्यों पसन्द आएंगे !'

'नहीं महुआ !···खैर, अच्छा मार लिया, आज पेज के साथ छकाछक हो जाएगी।'

सुलक ने तीतर के दोनों पैर बांध दिए और उसे पीठ पर लटका लिया।

'महुआ !'

'हां ।'

'तू तो आजकल बड़ी निसानेबाज हो गई है । कहां से सीखा है ?'

'अबे सो रहा है क्या, मैं सिरदार जो हूं । गांव और आसपास की सैकड़ों मोटियारियों को तीर चलाना सिखा चुकी हूं । अब तुम लोग सम्हलकर रहना । सारी मोटियारियां, चेलिकों के कान काटने वाली हैं ।'

'चल अच्छा है, कुछ तो सीखा इसी बहाने ।'

'अपनी कह सुलक, तुम मर्दों की जात कितनी अलाल है ! सारा काम हम लोग करती हैं । तुम लोग दिन भर हुक्का गुड़गुड़ाते हो या चिलम पीते हो । सिर्फ एक ही काम निराला करते थे, वह भी हमने छीन लिया, अब....।'

'बहुत अच्छा महुआ, बहुत अच्छा । दुनिया तेरी इस बहादुरी को याद रखेगी ।'

'तू ही याद रख, बस । दुनिया से मुझे क्या लेना-देना है !'

'सुना है, तू बड़ी लगन से काम कर रही है ? बड़ा संगठन कर डाला है ?'

'हां सुलक, तू वहां नहीं था न । सोचती थी क्या करूं । जीवाल नहीं है तो जरा वीरता के ही काम कर डालूं । तू चलकर देख, दंग रह जाएगा ।'

'मैं कहां जाऊंगा महुआ ! अभी तो हमें दसेरा परब के लिए जगदलपुर जाना है । फिर यहां का सब भार गुण्डा ने मुझे दे रखा है । लौटकर वह भी पूरा करना है । बरसात में कुछ काम तो हुआ नहीं, और तूने सच ही कहा था हम मर्द बड़े आलसी हैं । मुश्किल से लोगों को जगा पाया था, फिर सब सो गए होंगे । नये सिरे से काम करना होगा । तुझे भी तो वहां बड़ा काम करना है....।'

'तेरा मतलब है कि मैं चली जाऊं ?'

'हां, क्यों नहीं ।'

'हां' महुआ रोने लगी 'ऐसा कोई जीवाल कहता है !'

सुलक ने उसके सिर पर हाथ फेरा, 'प्यार तो जिन्दगी भर चलेगा रानी, यह समय तो काम करने का है । हम लोग ही ढीले पड़ जाएंगे तो कैसे काम चलेगा ! दीवाली के बाद हम सब जगदलपुर में मिलेंगे । तू तो अब निसानेबाज हो गई है । वहीं अपने जौहर दिखाना ।'

'हां सुलक, दिखाऊंगी।' महुआ के सुर में बड़ी निराशा थी।

'निरास मत हो महुआ। मैं तेरी व्यथा जानता हूं पर···।'

'पर, तू क्या करे, सिरदार जो है!'

'और तू भी, सिरदार है। दो सिरदारों को इस तरह कमजोरी की बातें नहीं करनी चाहिएं' सुलक ने महुआ की कमर पकड़ ली और उसे ऊपर उठा लिया। फिर उसे झकझोरते हुए बोला, 'मेरी सिरदार, तुझे तो लड़ाई की बातें करनी चाहिए। कहां तेरी सेना बढ़ेगी। कैसा हमला करेगी···।'

'हां हां रे, छोड़-छोड़'—महुआ खुश हो गई थी। सुलक ने उसे ज़ोर से रास्ते पर पटक दिया। वह धूल में भर गई। सुलक ने ही उसकी धूल झाड़ी। दोनों हंसते-खिलखिलाते घर पहुंच गए।

सुलक ने अपनी मां मुंदरी को तीतर दिया। वह उसे चाकू से काटने लगी। उसने कहा, 'बेटी महुआ, बाहर टोकनी में थोड़े पन्ने रखे हैं, उठा ला। वे भी बना लिए जाएं।' महुआ ने टोकनी लाकर सामने रख दी और नीचे बैठकर उसने पन्नों को चीरना शुरू कर दिया।

'इन्हें खड़े बना याय्ते।'

'वैसे ही सही।'

मुंदरी अपना काम कर रही थी। सब चुप थे। महुआ और सुलक एक दूसरे की ओर बार-बार देखते और फिर नीचे नज़र झुका लेते थे। महुआ बोली, 'सुलक को पन्ने बड़े अच्छे लगते हैं।'

'हां मां, और महुआ को चपुड़ा[1]।'

'वह भी रखे हैं।' मुंदरी ने हिरमे की बात शुरू कर दी। उसके साथ हमदर्दी दिखाई, फिर अपनी ज़िन्दगी की बातें कीं। वह इस नये घर में प्रसन्न थी परन्तु हिरमे के गुणों को भूल नहीं पाई थी। सत्ताय के मरने का उसे दुःख था तो गंगी की तारीफ भी वह करती थी। जलियारो की बार-बार याद करती। झालरसिंह और उसके प्रेम की चर्चा करती, 'ठीक तुम दोनों जैसे थे बेचारे!'

महुआ ने सुलक की ओर देखा और मुसकरा दिया।

'याय्ते, हम अभी आते हैं।' महुआ बोली। उसने सुलक से कहा, 'तू तो

---

१. लाल चींटों का अचार

मातुल माई की गढ़ी दिखाने वाला था न ?'

'दिखा ला बेटा, फिर तो यह चली जाएगी।'

दोनों उठकर बाहर चले गए। गांव के बाहर गेंवड़े के पास मातल का छोटा-सा मन्दिर था। काफी पुराना होगा। काले पत्थरों पर बहुत-सा कीचड़ और धूल जम गई थी। दोनों ने जाकर देवी को सिर झुकाया। महुआ बोली, 'सुलक, चल हम अभी पेंडुल कर लें।'

'पागल हुई है ? खड़े-खड़े पेंडुल होता है क्या ?'

'देवी जो है हमारे सामने !'

'देवी भर के होने से क्या होता है ?'

'क्यों ? वह तो सब कुछ जानती है।' महुआ ने सुलक का हाथ पकड़कर उसे सामने खींचा, 'चल सिर झुका।'

सुलक ने सिर झुका दिया। महुआ ने भी सिर झुकाया। बोली, 'हे देवी, हम दोनों एक होने की कसम खाते हैं। हमें असीस दे।'

उसने सुलक को धक्का दिया, 'तू भी कह।' सुलक ने वही बात दुहरा दी। दोनों प्रसन्न हुए। महुआ ने देवी पर चढ़ी एक चिन्धी उठाई और सुलक के हाथ में दी, बोली, 'इसे मेरी चुटिया में बांध दे।'

सुलक ने बिना कुछ कहे चिन्धी बांध दी। फिर बोला, 'इससे क्या होता है महुआ ? हमारे यहां के पेंडुल इतने आसान···।'

'तो चल, हम याय्ते से कहेंगे, आज ही वह हमारा पेंडुल करा दे।'

'और पेंडुल कर तू गढ़ बंगाल भाग जाएगी ?'

'तू कहेगा तो न जाऊंगी।'

'अपनी सिरदारी छोड़ देगी ?'

'क्यों नहीं, बिलकुल छोड़ दूंगी।'

'फिर मुझसे भी कहेगी कि तू भी सिरदारी छोड़ दे ?'

'हां, जरूर कहूंगी।'

'जरूर कहूंगी,' सुलक ने जीभ दिखाई, 'हमारे सिर पर गाज गिर रही है और तुझे पेंडुल की सूझती है। इसीसे तो कहता हूं कि औरत की जात का कोई ठिकाना नहीं। उसे बस पिरेम चाहिए। पिरेम भर मिले तो वह जिन्दगी भर भूखी रह सकती है और सारी जिन्दगी एक ही जगह, एक ही धुन में बैठकर

गुजार सकती है। अरी, बिहाव तो एक पड़ाव है। जब आदमी चलते-चलते थक जाता है तो किसी मैड़ का आसरा ले लेता है, बस। हम अभी थके थोड़े हैं।'

महुआ खीझ गई थी, 'तू हमेशा यही कहेगा। न कभी थकेगा, न कभी पेंडुल करेगा।'

'पेंडुल में क्या धरा है महुआ! दुनिया जानती है हम एक हैं। देवी के सामने भी हमने कसम खा ली, बस, अब क्या है!'

'मैं जानती हूं, तू मुझे धोखा देना चाहता है।' महुआ ने आंख चढ़ाकर कहा, 'किसी दिन मेरी भी हालत जलिया की तरह होगी। तेरे लिए तो औरत एक खिलौना है न?'

'नहीं महुआ, ऐसा कभी नहीं होगा। पर तू ही सोच, यह कोई पेंडुल का बखत है? दो-तीन महीने के भीतर हमें गोरों पर चढ़ाई करनी है। हम ऐसा करेंगे तो लोग क्या कहेंगे? आने वाले जमाने में हमें नीची नजरों से देखा जाएगा।....और महुआ, तुझे याद है? हम दोनों ने गढ़ बंगाल के घोटुल में कसम खाई थी कि जिन्दगी भर इसकी सेवा करेंगे। हम पेंडुल कर लेंगे तो...।'

'हमें घोटुल छोड़ना पड़ेगा, यही न!'

'हां, महुआ।'

'हम बाहर रहकर भी उसकी सेवा कर सकते हैं।'

'ऐसा कभी हुआ है?'

'तो हमने कोई ठेकेदारी नहीं ले रखी।'

महुआ जोश में आ गई थी।

'मेरा कहना मान महुआ, मैं तो एक मिसाल रखना चाहता हूं। हम अपनी जाति के ढंग से बिहाव नहीं करेंगे। अनबिहाए रहकर भी हम एक रहेंगे और इस तरह घोटुल की जिन्दगी भर सेवा कर सकेंगे। तू मुझपर भरोसा रख। मरेंगे भी तो हम दोनों साथ मरेंगे।'

'तेरी बात पर बिसबास नहीं होता। मैं पूछती हूं, तिलोका क्यों तेरी इतनी तारीफ करती है?'

'वह तो मैं नहीं जानता। वह पाण्डू की चेलिक है और पाण्डू यहां के घोटुल का सिरदार है।'

'तू कुछ नहीं जानेगा सुलक, कुछ नहीं। एक दिन मुझे बरबाद कर देगा, जलिया की तरह मुझे भी कहीं और भगा देगा। खुद चैन की सांसें लेता रहेगा और मैं जिन्दगी भर धुएं में घुटती रहूंगी। यह बेठिकाने की जिन्दगी मुझे पसन्द नहीं है सुलक। नदी भी बहते-बहते थक जाती है और समुन्दर से मिलने को व्याकुल हो जाती है और वहां देख,' महुआ ने दूर अंगुली दिखाई, 'उस आसमान और धरती के छोर को देख। जब से मैंने होश सम्हाला है उसे इसी तरह देख रही हूं। कित्ते सुखी हैं ये! कभी नहीं बिछुड़ते। मैं जिन्दगी भर ऐसा ही ठिकाना चाहती हूं सुलक!'

'तू तो अब पेरमा जैसा उपदेस झाड़ने लगी।'

'उपदेस कहता है!'

'और नहीं तो क्या? हमें काम कुछ और करना है, तू कहीं और जाना चाहती है। तू अपना ही तो काम समझ। तूने ही तो कहा था कि नेतानार में तूने सीना तानकर कहा है—हम औरतों को खिलौना क्यों समझते हो मांझी? तेरी इस करनी से वे तुझे खिलौना नहीं तो और क्या समझेंगे?'

महुआ ने सुलक की ओर केवल देखा।

'हां महुआ, तू ही सोच!'

'फिर?' महुआ ने प्रश्नसूचक मुद्रा में कहा।

'फिर कुछ नहीं। इस समय हम लोग सैनिक हैं। हमारे यहां शान्ति हो जाने दे। बादल उमड़ रहे हैं, इन्हें छट जाने दे फिर……।'

'फिर क्या?'

'जो तू कहेगी।'

'बिहाव कर लेंगे हम।'

'सो तो तूने अभी कर लिया, देवी के सामने। अपनी चुटिया देख।'

महुआ ने हाथ सिर पर रखा। वह चिन्धी उसने छुई—'हां रे, तू ठीक कहता है।' दोनों एक साथ हंस पड़े और काफी देर तक हंसते रहे।

रात को सब घोटुल में मिले। काफी देर तक गुण्डा धूर और सुलकसाए अलग बैठकर बातें करते रहे। वे शायद आगे की योजना पर चर्चा कर रहे थे।

रात को घोटुल में फिर नाच हुआ। ऐसा नाच शायद आज तक यहां कभी नहीं हुआ था। काफी दिनों के बाद महुआ और सुलक मिले थे। इसलिए आज लांदा पीकर जो नाचने में दोनों भिड़े तो जैसे और सबको भूल गए। नये-नये पैंतरे उन्होंने दिखाए और नये-नये गीत गाए। आज जैसे सारा घोटुल उनके साथ मिलकर नाच-गा रहा था। गीत और मांदर की घुमक ने जीवन का रस बढ़ा दिया था।

नरकी पहर सुलकसाए, गुण्डा धूर, झालरसिंह और गांव के कुछ और चुने हुए आदमी जगदलपुर के लिए रवाना हो गए। ये सब दसेरा परब में भाग लेने जा रहे थे। महुआ दंतेसरी मइया का पूजन करने रह गई। सुलक और उसके साथी अपने साथ राजा के लिए नज़राना भी ले गए।

जगदलपुर का पूरा शहर सजा हुआ था। लकड़ी का भारी रथ रंगों से पोत दिया गया था और उसे जितना भी सजाया जा सकता था, सजाया गया था। रथ सजाने का काम राजा की ओर से किया जाता है। इसलिए बस्तर के बड़े-बड़े कारीगर यहां आए थे। साल भर बेकार पड़ा रहने वाला रथ खूब चमकने लगा था। राजा के दिए शाही कपड़ों से देवी का सिंगार हुआ था।

मूंदी मांगा[1] गीत गाते आसपास के गांव के दल के दल हर साल जगदलपुर आते हैं। बरस का यह सबसे बड़ा परब है। सारे बस्तर के आदिवासी यहां इकट्ठे होते हैं। दो-दो सौ, तीन-तीन सौ मील दूर की यात्रा कर वे आते हैं। कई दिन पहले टोलियां बनाकर वे अपने गांवों से निकलते हैं और ठीक दसेरा के दिन यहां पहुंच जाते हैं। हर गांव का गायता देवी को झंडा चढ़ाता है, और फिर सब राजा को नज़राना भेंट करते हैं।

राजदरबार की बड़ी शाही फौज सजधजकर तैयार हो रही थी। गांव भर में जलूस की तैयारी हो रही थी। सुलकसाए और गुण्डा धूर के वहां पहुंचते ही गुण्डा के नाम बुलावा आ गया। लालकलिंदरसिंह[2] ने उसे बुलाया था। गुण्डा के साथ सुलकसाए भी गया। इन तीनों की भेंट का इन्तज़ाम गांव के बाहर जंगल के एकान्त में किया गया था। कलिंदरसिंह को शायद इस संगठन का

१. बाजार जाते या यात्रा जाते समय गाए जाने वाले गीत
२. लालकलिंदरसिंह, राजपरिवार का सदस्य और यहां का भूतपूर्व दीवान

आभास मिल गया था। बोला, 'तुम दोनों जो काम कर रहे हो उसके लिए मैं तुम्हें बधाई देता हूं।' 'क्या काम?' सुलक ने अनभिज्ञता प्रकट करनी चाही तो लालकलिंदर हंस पड़ा, बोला, 'सुलक, तू ऐसे लोगों का नेता है जो बिखरे हैं, जिन्हें फौज के कोई नियम नहीं आते। मैं इस राज का दीवान रह चुका हूं। मुझसे कुछ नहीं छिपा। तुम लोग क्या कर रहे हो, मैं सब जानता हूं।'

दोनों बड़े सशंकित हुए। उन्हें अपने सारे किए-कराए पर पानी फिरते दिख रहा था। दोनों के चेहरे फक्क पड़ गए। वे शायद सोचने लगे थे कि कहीं लालकलिंदर की नीयत न खराब हो।

गुण्डा ने कहा, 'मालिक, सिरकार हमपर भरोसा रखे। राजा से हमारा कोई विरोध नहीं है। महाराज रुद्रप्रतापदेव को दंतेसरी मइया खूब लम्बी उमर दे। हमारा विरोध तो गोरों से है, जिन्हें राजा ने हमारे बिना पूछे यहां बुला लिया है।'

'कोई किसीको बुलाता नहीं गुण्डा। हमारे राजा के ऊपर बहुत करज़ा हो गया था। हमारी फौज कमज़ोर हो गई थी और जो कमज़ोर होता है उसे हर ताकतवर दबाता है। हमारी कमज़ोरी का फायदा गोरों ने उठाया और तुम तो जानते ही होगे, हमारे राजघराने में ही तब विरोध था। एक पक्ष गोरों का सहारा चाहता था। घर की फूट बुरी होती है गुण्डा। सोने की लंका इसी फूट से जल गई। और अब हमारा देश जल रहा है।'

'हां सुलक, हम सब जल रहे हैं। जिसे कमजोर देखा गोरों ने उसे दबाया। इस तरह कई राज्य वे हड़प चुके हैं। बड़ी रानी खुद परेशान हैं। वे अपना एक गांव मंदिर में लगा देना चाहती हैं पर पंडा बैजनाथ ऐसा नहीं करने देता।'

'यह तो बहुत बड़ी बात है हुज़ूर, अपने माल पर अपना ही बस नहीं। पर तुम भी तो कभी दीवान थे मालिक......।'

'कभी था गुण्डा, अब नहीं हूं। जब था तब मैंने तुम लोगों की भलाई की थी। गोरों का साथ कभी नहीं दिया। राजरानी का कभी अपमान नहीं किया।'

'हुज़ूर, सुना तो यह है कि गोरों ने तुम्हें दीवान बनाया था?'

सुलक की इस बात पर लालकलिंदरसिंह शायद चिढ़ गया था। उसकी त्योरियां चढ़ गई थीं परन्तु उसने अपने को संभाल लिया। सुलक की पीठ पर

हाथ फेरते हुए बोला, 'हां सुलक, गोरों ने तो बनाया था परन्तु मैं उन्हींके छुरे को उनकी ही पीठ पर चलाना चाहता था। समय नहीं मिल पाया। अंग्रेजों ने मेरी जगह दूसरा दीवान बैठाल दिया।'

'यह तो बहुत खराब किया हुजूर!'

'यही तो मैं कह रहा हूं गुण्डा। मैं होता तो तुम लोगों की भलाई ही करता। इसीलिए जब तुम्हारे संगठन की बात का मुझे पता लगा तो मैं बड़ा खुश हुआ। बड़ी रानी भी खुश हैं और तुम लोगों को पूरी मदद देने को तैयार हैं।'

गुण्डा ने उसके चेहरे की ओर देखा। उसकी बड़ी मूंछे हवा में उड़ रही थीं और बड़ी गोल आंखों में एक अजीब क्रूरता भरी थी। परन्तु उसका चेहरा नरम प्रतीत होता था। गुण्डा ने पूछा, 'इसी तरह गोरों को भी तो पता नहीं लगा हुजूर!'

'नहीं रे और न पता लग सकता है। मैं जो यहां बैठा हूं, तुम्हारा प्रतिनिधि बनकर। कोई बात कानोंकान पता न लग पाएगी। बस, तुम लोग चुपचाप अपना संगठन मजबूत कर लो और........।'

'धन्य हो हुजूर।'

'हां गुण्डा, और महाराजा भी तुम लोगों के पक्ष में हैं। कहते थे, तुम लोग बाहर से एकदम चढ़ाई कर देना और भीतर से हमारी फौजें बगावत कर देंगी। हम चुटकी बजाते अंग्रेज़ों को हकाल देंगे।' यह बात सुनकर दोनों बड़े खुश हुए।

सुलक ने पूछा, 'यह बैजनाथ तो गोरा नहीं है, फिर........!'

'गोरों का ही चेला है सुलक। गोरा न हुआ तो क्या। उसे तुम और खतरनाक समझो। उसके पास बहुत-से अधिकार हैं। इत्ते अधिकार हमारे राजा के पास भी नहीं हैं। आजकल जो हो रहा है सब बैजनाथ कर रहा है।'

'गोरा न होकर वह ऐसा क्यों कर रहा है हजूर?'

'बस, इसलिए कि उसे पैसा मिलता है। गोरों ने उसे इत्ता बड़ा पद जो दिया है।'

'तुम्हारे पास भी तो वह पद था.......।'

'फिर मेरी बात करता है!' कलिंदरसिंह चिढ़ गया, 'मैंने कहा न कि मैं

कहने को उनका था पर भलाई तो तुम लोगों की करता था।'

'हुज़ूर, लोग तो कहते हैं·······।'

'बको मत !' कलिंदर झल्लाया, 'लोगों के कहने पर तुम्हें चलना है या···।'

'गुण्डा दोनों हाथ जोड़कर उसके सामने खड़ा हो गया। उसने सुलक को डांटा और बोला, 'हुज़ूर, हम तुमको अपना मानते हैं। तुम हमपर पूरा भरोसा रखो। हम तुमपर भरोसा रखते हैं। तुम जैसा कहोगे, हम वैसा करेंगे।'

'ठीक है,' लालकलिंदर ने कहा, 'तो मेरा आशीर्वाद है, तुम्हारा आन्दोलन सफल हो। तुम खुद अपने राज के राजा बनोगे।'

'हुज़ूर की जय !'

'दन्तेश्वरी मइया तुम्हारी रक्षा करे। आज पूजन में तुम सब दन्तेश्वरी मइया से यही वर मांगना कि यहां से गोरे भाग जाएं।'

'हां, मालिक क्यों नहीं। हम तो आज राजा से भी मिलगे··········।'

'नहीं गुण्डा, यह तुम्हारा गलत कदम होगा।' लालकलिंदर बोला, 'राजा गोरों का बड़ा एहसान मानता है। वह इस बगावत के लिए तैयार नहीं होगा। उसे पता लग गया तो वह गोरों से कहकर तुम्हारा आन्दोलन दबा भी सकता है।'

'क्यों हुज़ूर, वह तो हमारे राजा हैं। हम जो कहेंगे, वह क्यों न करेंगे ?'

'तुम लोग यह बात नहीं समझोगे गुण्डा। बस, यही याद रखो कि मैं तुम्हारा सबसे बड़ा साइगुती हूं। मुझे अपना मानो। तुम मेरे भी नेता हो और मैं तुम्हारे एक सिपाही की तरह काम करूंगा।'

'क्या कहते हो मालिक ! तुम तो हमारे देवता हो। राजबंस के आदमी। मइया तुम्हें लम्बी उमर दे।'

'तो ठीक है। तुम अपना काम करो, मैं अपना काम करूंगा। राजा के कान तक यह बात भूलकर भी न पहुंचे।' लालकलिंदरसिंह की बात दोनों ने मान ली। फिर वह गुण्डा को एक ओर अलग ले गया और थोड़ी देर उसके कान में कुछ फुसफुसाता रहा। जब बातें खतम हुईं तो दोनों बड़े ज़ोर से हंसे। लालकलिंदर ने अपनी मूंछों पर हाथ फेरा, बोला, 'बस मेरे सरदार, मेरा भाग तुम्हारे हाथों है। तब मैं महाराजा और गोरों दोनों से बदला ले लूंगा। उन्हें अच्छा मज़ा चखाऊंगा।'

सब विदा हो गए। गुण्डा और सुलक दोनों खुश थे। राजपरिवार के ज़िम्मेदार व्यक्तियों का उन्हें समर्थन मिल गया। जिसे वे खेल समझे रहे थे वह एक बहुत बड़ा काम होगा।

ढोल और नगाड़े बजने लगे। मावली मंदिर के सामने भारी भीड़ जमा हो गई। सारी रियाया यहां जमा थी। मंदिर के भीतर कलश जल रह था। उसे उठाकर लकड़ी के भारी सजे रथ पर रखा गया। देवी की मूर्ति भी उसमें बैठाली गई। देवी को धूप-दीप दिया गया। तब महाराजा वहां पहुंचे। उनके आते ही सारा जन-समूह एक स्वर से चिल्ला उठा, 'महाराज की जय! महाराज की जय!'

शाही वेश-भूषा में सुसज्जित युवा महाराज रुद्रप्रतापदेव रथ पर आसीन हो गए। उनके हाथ में धनुष और बाण थे। महाराज ने कमर में खुसी अपनी तलवार निकाली और वह देवी की भेंट की। उसपर हल्दी, कुमकुम और अक्षत लगाया गया। राजपुरोहित ने राजा के सिर में नई पगड़ी बांधी। तिलक लगाया और तलवार उठाकर दी। राजा ने गर्व से चारों ओर देखकर, तलवार अपनी कमर में बंधे कमान में रख ली। फिर झण्डा चढ़ा। राजा ने जैसे ही रस्सी खींची कि रथ पर दो झण्डे एक साथ लहरा उठे। एक भगवे रंग का झण्डा, दन्तेश्वरी मइया की निशानी और दूसरा बस्तर राज्य का शासकीय ध्वज, जिसमें चन्द्रमा और त्रिशूल बने थे।

राजपुरोहित ने शंख बजाया। फिर जयजयकार हुई। राजा ने खड़े होकर सारी प्रजा को आशीर्वाद दिया। अब राजा के पूजन का समय था। सबसे पहले राजमाता ने राजा को टीका लगाया। फिर राजघराने के दूसरे लोगों ने नज़राना भेंट किया। तब सरकारी अफसर और सैनिकों ने राजा को सलामी दी और फिर प्रजा की बारी थी। एक-एक गांव के लोग बारी-बारी से आते थे। सबसे पहले गांव का मुखिया होता, फिर उसके पीछे वहां की जनता। वे अपनी भेंट राजा को देते और उसके पैर छूकर चले जाते थे। औरतें भी भेंट देने जाती थीं। धीरे-धीरे गुण्डा और सुलकसाए का नम्बर आया। गुण्डा ने इस साल एक तीर-कमान राजा को भेंट किया। ऐसा ही तीर-कमान सुलक ने भी दिया। राजा ने उन दोनों की ओर अर्थभरी दृष्टि से देखा। दूसरे लोगों ने तो

बड़ी-बड़ी चीज़ें दीं। साल में एक बार राजा को सारी प्रजा नज़राना भेंट करती है और सारे आदिवासी बड़े सोच-समझकर भेंट तैयार करते हैं। गुण्डा सशंकित हुआ। वह शायद राजा का भरम समझ गया था। बोला, 'हम दोनों ने बड़ी मिहनत से ये नये ढंग के तीर-कमान बनाए हैं महाराज, ताकि हमारे महाराज इनसे हमारी रच्छा करें।'

राजा ने हंस दिया, 'कितने भोले हैं ये !'

उन्होंने गुण्डा की पीठ थपथपाई, 'शाबाश !'

गुण्डा उचटकर कूदते नीचे आ गया। सारे लोग उसे देखने लगे। राजा ने उसकी पीठ थपथपाई थी। इससे बढ़कर और क्या हो सकता है !

कई घंटे यह चला और जब सब लोग नज़राना दे चुके तो ढोल, मांदर, टिमकी, घंटा और शंख-ध्वनि के साथ रथ आगे सरका। उसे सारे गांव में फिराया गया। रथ के सामने बहुत-सी टोलियां थीं। वहां लोग अपने-अपने करतब दिखाते थे। कोई नाचते और गाते भी थे। गुण्डा करतब जानता था। उसने यहां कई खेल दिखाए। एक लम्बे बांस पर चढ़कर उसने ऐसे-ऐसे खेल दिखाए कि राजा ने भी उसकी तारीफ की। बस्तर के सिरहा ने आग में चल-कर दिखाया। पेरमा ने लोहे के जूतों में उचटकर बताया। उसने कई भाले अपने गाल और छाती के आर-पार निकाले। सब देखकर दंग रह गए। भाला शरीर छेदकर निकल जाता परन्तु खून की एक बूंद भी न गिरती थी। घंटों खेल चला। घंटों नाच हुआ और सांझ के नीचे उतरने पर ही उत्सव समाप्त हुआ। मावली के मंदिर में अनेक दीप जलाए गए। मंदिर के बाहर सैकड़ों पशुओं की बलि दी गई थी। वह भाग खून से लाल हो गया था। लाल दियों की रोशनी में नीचे का लाल मैदान चमक उठा और आग की तरह जलता दिखाई दिया। गुण्डा और सुलक ने देखा जैसे उस आग से एक नई लौ निकल रही है और उन्हें एक नया संदेश दे रही है।

रात को सुलक और गुण्डा दोनों ने बस्तर के और गांवों से आए मुखियों से बातचीत की। सारी योजना पर विचार किया और दूसरे दिन सब अपने-अपने गांव चले गए।

दोनों नेता जब दंतेवाड़ा लौटे तो घोटुल के सारे सदस्यों ने उनका बहुत

स्वागत किया। उन दोनों ने वहां के सारे समाचार सुनाए। सुनकर सबको प्रसन्नता हुई। यहां भी दंतेश्वरी मइया के पूजन में महुआ ने जो करतब दिखाए थे, उनकी चर्चा मोटियारियों ने की। रात को फिर नाच हुआ और सवेरे का सूरज दुःख की बदली लेकर आया। सुलक और महुआ दोनों दुःखी हुए। सुलक ने तो अपने आंसू संभाल लिए, पर महुआ न संभाल पाई। किसी तरह दोनों विदा हो गए। महुआ ने सुलक को खूब आंख भरकर देखा। अपने सिर पर बंधी लाल चिन्धी उसे दिखाई और झालर के पास आकर उसके कान में कुछ कह गई। शायद सुलक की रखवाली का भार उसपर छोड़ गई थी! झालरसिंह अब सुलकसाए के साथ मिलकर काम करने वाला था। जब तक दोनों आंखों से ओझल न हो गए, एक दूसरे को लौट-लौटकर देखते रहे। विरह के इन आंसुओं में ही तो उन्होंने विद्रोह के बीज को जन्म दिया है।

१७

हलकी-हलकी ठंड धीरे-धीरे बढ़ती गई और उसीके साथ सुलकसाए का काम भी ज़ोर पकड़ता गया। अब उसके चार हाथ हो गए थे, झालरसिंह मिल गया था। झालर बड़ा उपयोगी साबित हुआ। जलिया के विछोह ने जैसे उसका विवेक छीन लिया था और वह केवल एक यंत्र मात्र रह गया था। उसने कभी सुलक का कोई कहना नहीं टाला है। किसी बात पर क्यों और कैसे भी नहीं कह सका। जो हुक्म सुलक दे उसे पालना है, बस। दन्तेवाड़ा के घोटुल का वह भी सदस्य बन गया, परन्तु वह वहां के जीवन से जैसे विरक्त-सा था।

दीवाली परब पास आ रहा था। इस बार बारसूर की मोटियारियां यहां आने वाली थीं। झालरसिंह कोहा का एक दांड़ काटने जंगल गया और दांड़ काटकर जब लाने लगा तो जंगल के सिपाही ने उसे रोक दिया।

'कौन है ? इसे तूने बिना पूछे क्यों काटा ?'

'मैं हूं झालरसिंह ! इसमें पूछने की क्या बात है ?'

'क्या बात है, तुझे अभी बताता हूं।'

उस सिपाही ने आवाज़ लगाई तो उसके कुछ साथी भी वहां आ गए। शायद ये सब गश्त लगा रहे थे। झालरसिंह और उनके बीच काफी बात बढ़ गई तो उन सबने मिलकर उसे पीटा और चौकी ले गए। सुलक को जब यह बात पता लगी तो उसका खून उबल पड़ा। चौकी में जाकर उसने थानेदार से बातचीत की :

'हुज़ूर, ये जंगल हमारे हैं। आज तक कभी किसीने हमें नहीं पकड़ा। अब.... ।'

पुलिस का दरोगा कुछ नहीं बोला। उसने अपनी क्रूर आंखों से सुलक की ओर देखा। सुलक उसकी आंख देखकर ही घबड़ा गया।

'हुज़ूर, यहां झालरसिंह को बन्द किया गया है ?'

'हां !' वह ज़ोर से चिल्लाया, 'अब कुछ दिन वह हमारा मेहमान रहेगा।'

'नहीं हुज़ूर, ये जंगल तो हमारे हैं... ।'

'तुम्हारे बाप ने लगाए थे ? हरामी कहीं का !' मुंशी जी की ओर देखकर वह बोला, 'मुंशी जी, इसकी अक्कल दुरुस्त करो तो !'

मुंशी ने सिपाहियों की ओर देखा और दो-तीन सिपाही उसे पकड़कर पीछे ले गए। पहले तो सबने मिलकर उसे दो-चार लातें लगाईं, फिर बोले, 'झालर को छुड़ाना चाहता है न ?'

सुलक घबड़ा गया था। वह अपने चारों ओर देख रहा था। उसे ऐसे व्यवहार की कल्पना नहीं थी। कल्पना होती तो शायद वह तैयार होकर आता, 'हां मालिक, छुड़ाना तो है।' उसके स्वर में निराशा थी।

'इसकी कीमत जानता है ?'

उसने सिर हिलाकर अनभिज्ञता प्रकट की।

'दरोगा साहब के लिए दो मुर्गियां, बस, और हम सबके लिए दो.... ।'

सुलक ने उन सब लोगों के चेहरे देखे। उसे सब एक जैसे दिखे। सारे चेहरे मिलकर जैसे हंस रहे थे। उसे लालकलिंदरसिंह की बात याद आ गई। उसने सच कहा था, यह सब गोरों की करनी है। आज तक तो ऐसा कभी नहीं हुआ। सुलक ने लाकर चार मुर्गियां मुंशी जी को भेंट कीं, उनके पैर छुए। तब कहीं झालरसिंह छोड़ा गया।

शाम को घोटुल में इसकी चर्चा हुई। गुण्डा धूर के पास खबर भी भेजी

गई। सुलक ने यह भी सुना कि जगदलपुर में पहला 'स्कूल' चालू हो गया है। उसमें चार गोंड़-लड़के भरती किए गए हैं। उन्हें जबरन लाया गया था। उस स्कूल का उद्घाटन दीवान रा० ब० पंडा बैजनाथ ने किया था। कहते हैं, उसने बड़े नरम शब्दों में लड़कों को स्कूल भेजने की अपील की थी परन्तु वे चार लड़के जबरन वहां लाए गए थे। उनका मांझी पंडा बैजनाथ के पास गया था। पंडा ने उसे बहुत समझाया था। कहता था, 'तुम्हारे लड़के पढ़-लिखकर सरकार की सहायता करेंगे।' मांझी गिड़गिड़ाया था, 'नहीं हुज़ूर, ऐसी सिरकार की हमें सहायता नहीं करनी।'

'कैसी सरकार ?'—इसका उत्तर मांझी न दे सका। बैजनाथ ने उसे बहुत कुछ समझाया, पर उसकी समझ में कुछ न आया।

सुलक अपने आप झल्ला उठा। उसकी सारी मिहनत पर जैसे पानी फिर गया था। वह न स्कूल का बनना रोक सका और न जंगलों पर अपना प्रभुत्व कायम रखने में सफल हुआ। गांव-गांव कांजी-हौस भी बनते जा रहे थे और ज़मीन की नाप-जोख भी तेज़ी से हो रही थी। सब कुछ हवा की तरह होता जा रहा था। सुलक दूर खड़ा उस बवंडर को देख रहा था जो उसके पास है और उसे शीघ्र ही अपने में लपेटने वाला है। सुलक ने सब कुछ घोटुल के सदस्यों को समझाया। सभी दुःखी हुए। सुलक को लगा कि वह यहीं के सारे लोगों को इकट्ठा कर चौकी में धावा बोल दे और मुंशी तथा दरोगा की गर्दन तोड़ दे। पर झालरसिंह ने उसे रोक दिया। बोला, 'सिरदार, जल्दबाजी से काम बिगड़ जाएगा।' उस रात सुलक सो न सका। बीच में ज़रा-सी झपकी आई तो उसने एक सपना देखा—उसका परदादा वहां आया है। उसी तरह लाठी टेके और सिर में पगड़ी बांधे उसके सामने खड़ा है। उसने सुलक के सिर पर हाथ फेरा है और कहता है, 'बच्चे, घबड़ा मत। हर अच्छे काम में बाधाएं आती हैं। बिना बाधा के कभी किसीको सफलता नहीं मिली। इनमें तू अपनी सफलता का पत्थर समझ और आगे बढ़ता जा।'

'पर दादा, यह कब तक सहना होगा ?'

'बस, ज्यादा दिन नहीं।'

'सच !'

'हां रे'—उसने फिर सुलक के सिर पर हाथ फेरा, और जब सुलक ने आंख

खोली तो अपने को गीकी में अकेला पाया। यह सपना उसके लिए एक बड़ा सहारा बनकर आया। उसने इसकी चर्चा किसीसे नहीं की। उसके बाद वह सोया भी नहीं क्योंकि सपना देखने के बाद सोने से उसका फल नहीं मिलता। उसकी यदि चर्चा की जाए तो भी वह बेकार हो जाता है। वैसे सुलक बड़ा प्रसन्न था इसलिए कम से कम भालरसिंह से उसकी चर्चा करना चाहता था, परन्तु गले तक बात आकर रुक जाती थी।

दीवाली परब के दिन पास आ गए। सारे गांव ने मिलकर नुकानोंरदाना पाण्डुम[1] मनाया। नाच-गाकर सबने देवता का पूजन किया और अकरी तथा कोहला[2] सबको बांटी गई। सबने मिलकर प्रार्थना की, 'हे देवता, इसी तरह हमारे दीये हर साल सोना उगलें।'

दूसरे दिन यहां की मोटियारियां सजधजकर तैयार हो गईं। तिलोका के नेतृत्व में वे टेकनार जा रही थीं, दीवाली नाचने। सब मातुल की मढ़िया के पास इकट्ठी हुईं। गांव के गायता ने मातुल की पूजा की और मनौती मनाई। चावल-हल्दी चढ़ाकर मातुल को मुर्गी की बलि भेंट की गई। तिलोका के मस्तक पर गायता ने तिलक लगाया। उसने अपनी कुल्हाड़ी कंधे पर रखी। नुका[3] का एक तिनका सबने अपनी आंचुर में बांधा। एक बर्तन में तिलोका ने आग रखी। इसीमें देवी को धूप दी गई थी। गेंवड़े पर जोंदरा के आटे की रेखा उसने उचटकर पार की। उसी तरह दूसरी मोटियारियों ने किया और बिना पीछे देखे वे आगे बढ़ गईं। उनके गीत आसपास की पहाड़ियों में गूंज उठे :

नाना रे नाना सिल्सी रा रेला रे रेलो रे रेला।

दो दिन के बाद दीवाली के परब का ठीक दिन आ गया और इसी दिन गायता ने बारसूर की मोटियारियों का गेंवड़े में स्वागत किया। ये छः गांव पार कर यहां आई थीं। नाचते-गाते गायता के घर की ओर एकदम बढ़ गईं :

तिना नामुर ना ना रे, ना ना नामूर
गायता ना लोन बेकेरा लयोरे

---

१. दीवाली के समय मनाया जाने वाला त्योहार जिसे 'नवान्न' भी कहते हैं।
२. कुदई और कुटकी ३. चावल

तानां लोने वाता रो लयोरे
ओना लोने मूंजरा लयोरे[1]

सुलकसाए, पाण्डू और झालरसिंह ने मोटियारियों का स्वागत किया। ये कुल दस थीं। इन्हें वे घोटुल ले गए। आपस में बातचीत चली। परिचय हुआ। सबने अपने-अपने घोटुल का नाम बताया। खूब हंसी-मज़ाक हुई। रात को नाच का इन्तज़ाम किया गया। सारी मोटियारियों के साथ यहां के चेलिकों ने नाच किया :

अग वागा परेगांव रोय देले
डोंगर भूम तांव पारेगांव रोय देले
अग बागा रैया मंदा रोय देले ?
गायता दादा दुआर रे रोय देले
किले रे कोरू रचाय रोय देले
अगाए इते रइतांग रोय देले।[2]

झालरसिंह और सुलकसाए भी खूब नाचे। झालरसिंह ने तो हरएक मोटियारी के साथ नाच किया। यह नाच रात भर चलता रहता परन्तु घंटे भर के बाद ही एक बड़ा अशुभ हो गया। सुलक के सिर पर बंधे मोरपंखों में से एक पंख नीचे गिर पड़ा। उसे देखते ही सबके पैर अड़ गए। सुलक थोड़ी देर तो उसे एकटक देखता रहा। फिर उसने पंख उठाया। उसे घोटुल की छत पर रख दिया। सबने लिंगो से प्रार्थना की, 'हे देवता, हमपर क्या अनर्थ आने वाला है! हमारी रच्छा करो।'

सारे चेलिक और मोटियारी नीचे बैठ गए। उनका उत्साह खो गया था। इस नाच में पंख का गिर जाना बज्र का टूटना है। सब चिंतित हो गए, न जाने अब कौन-सा पहाड़ टूटने वाला है! सदस्यों ने तरह-तरह की चिन्ताएं व्यक्त कीं। जिसे जो सूझा उसने वह बताया।

सुलक ने फिर चर्चा का दौर बदल दिया, 'जो बनता है सो करते हैं। कोई

---

१. गायता का घर किधर है बाबू? गायता का घर नज़दीक है। उसके घर में क्या है बाबू? उसके घर में बन्दर है बाबू।
२. ये सुन्दरियां किस गांव से आई हैं? ये ऊंचे स्थान से आई हैं। वे कहां ठहरी हैं? वे गायता के घर ठहरी हैं। उसकी वाड़ी के सामने उनका निवास है। वहीं वे ठहरी हैं।

मुसीबत अब अनजाने आएगी तो हम उसका भी सामना करेंगे।' सबने यह बात मान ली। सुलक ने अपनी योजना पर चर्चा शुरू कर दी। सारी मोटियारी उसे जानती थीं। वह उनके घोटुल में कई बार गया है। वहां और आस-पास क्या काम हो रहा है, इसकी जानकारी सुलक ने प्राप्त की और दरोगा के व्यवहार की बात उन सबको बताई। झालरसिंह ने इस दल की एक मोटियारी से दोस्ती कर ली थी। वह उसीके पास बैठा बातें करता रहा। वह भी बड़ी घुलघुलकर उसका साथ दे रही थी। झालरसिंह के चेहरे पर कई दिनों के बाद ऐसी खुशी दिखाई दी।

नरकी पहर गायता ने पंख गिरने की खबर सुनी तो वह भी चिंतित हुआ। उसने बड़े देवता का पूजन किया और उसके सामने खड़े होकर क्षमा मांगी, 'हे देव, अनजाने हमसे कोई अपराध हो गया हो तो माफ कर दो।'

मोटियारियों को आज डोंगुर घूमने जाना था। उन्हें आसपास की देवी-देवताओं के दर्शन कराए गए। सबने दन्तेश्वरी मइया को श्रद्धा के साथ सिर झुकाया और अपने-अपने मन की मनौती मानी। वहां से सब जंगल की ओर बढ़ गए। यह पूरा दल कई छोटे-छोटे दलों में बंट गया। झालर अपनी नई मोटियारी को अकेला अलग ले गया। दोनों घने और ऊंचे जंगलों को देखते रहे। यहां-वहां की बातें करते रहे और एक दूसरे में इतने घुल-मिल गए जैसे उनकी बड़ी पुरानी पहचान हो।

'सच कोसी, तुझे देखकर मुझे अपनी जलिया की याद आ जाती है। वैसा ही तेरा नाक-नकशा है और ठीक वैसी ही तू हंसती है।'

'कौन जलिया?'

'वही जलिया, जो मेरा दिल जलाकर बिझली चली गई और उस नये घर में ऐसी खो गई है जैसे मुझसे कभी मिली ही नहीं।'

'तो और करती भी क्या? तुझमें हिम्मत होती तो उसे जाने से रोक न लेता!'

'हिम्मत....उसकी बात न कर कोसी, हिम्मत तो बहुत है पर...' झालरसिंह उदास हो गया। कोसी ने उसकी वेदना पर हमदर्दी दिखाई, 'उसे भूल जा झालर, अब बिलकुल भूल जा।'

'हां कोसी, तुझे देखकर....।'

कोसी ने उसे धक्का दिया, 'बात करने में छुरी जैसा तेज दिखता है। ऊपर से तो बड़ा भोला है रे।'

झालर बहुत खुश हुग्रा। उसने कोसी का हाथ पकड़कर यहां-वहां खूब घुमाया। उसके लिए कई जंगली पुंगार तोड़े और उनके गुच्छे बनाकर उसके बालों में लगाए। उसे दो पड़ियां भेंट करने का उसने वचन दिया। घंटों घूमने के बाद वे लौट आए।

गायता के घर सारी मोटयारियों को भोज दिया गया। झालरसिंह और पाण्डू ने सारे गांव में झोली फिराई और अनाज इकट्ठा कर उस दल का नेतृत्व करने वाली बिलोसा को भेंट किया। गायता ने उन सबको असीसा। गेंवड़े में मातुल का पूजन हुआ। सबको मातुल मइया का तिलक लगाया गया। और फिर उचटता-फुदकता सारा दल चला गया। कोसी ने लौटकर झालर की ओर देखा। सुलक ने इसे देखकर और भी चिन्ता प्रकट की। बोला, 'एनदाना के समय पंख गिरा था और अब एक मोटियारी ने भी लौटकर हमें देखा है।'[१] झालरसिंह ने समझाने की कोशिश की कि उसके लौटकर देखने में कोई बड़ी बात नहीं है परन्तु सुलक न माना। इत्ते बड़े अशुभ हो जाएं और वह उन्हें साधारण बात समझलें।

कई दिन वह चिंतित रहा परन्तु उसका उत्साह कम नहीं हुआ। अपने काम में वह बराबर लगा रहा।

सूरज सिर पर चमक रहा था और अब उसकी किरनों में भी गर्मी आ गई थी। सुलकसाए पास के किसी गांव से लौटा था। बाहर धूप में कट्टुल डालकर चित लेटा था कि किसीने उसे आवाज़ दी। वह उठ बैठा। उसने देखा किलेपाल का सैलू खड़ा है। सुलक ने उठकर उससे जुहार की और उसे बैठने को कहा। सैलू ने बिना कुछ कहे एक लाल मिर्च और आम की एक डाल उसके हाथ में थमा दी। सुलक प्रसन्नता से बांसों उछल पड़ा। वह घोटुल की ओर दौड़ गया। उसके फरके पर खड़े होकर उसने तोंड़ी बजाई। जितने लोग उस समय गांव

---

१. दीवाली नाचने के बाद जब दल गांव से लौटता है तो गेंवड़ा पार करने के बाद किसीको पीछे लौटकर नहीं देखना चाहिए। लौटकर देखना अशुभ सूचक है।

में थे, सब वहां जमा हो गए। झालरसिंह भी आ गया था। सबने लाल मिर्च देखी तो खुशी से नाच उठे। सुलक गिने-चुने आदमियों को लेकर सबसे पहले चौकी में चढ़ दौड़ा—'जय दंतेसरी मइया की !'

हुर्रे हुर्रे हुर्रे ऽ ऽ ऽ !

हुर्रे हुर्रे हुर्रे ऽ ऽ ऽ।

गम्भीर विजय-निनाद से आकाश गूंज उठा।

चौकी में पहुंचकर सुलक ने सबसे पहला तीर दरोगा को मारा। वह उसकी छाती में जा लगा और वह वहीं ढेर हो गया। झालर ने मुंशी की मरम्मत की। सिपाही चौकी छोड़कर भाग गए। दूसरे लोगों ने उनका भी पीछा किया और जिसे जो मिला उसकी खूब मरम्मत की। इन लोगों ने एकाएक धावा बोल दिया था। किसीके कान में इसकी भनक भी नहीं पड़ी थी। सुलक ने चकमक जलाई। सूखी झाड़ियों में आग लगाई और चौकी की छत पर छुला दी। सारी चौकी आग की लपटों में खो गई।

सुलक और उसके साथी 'हुर्रे हुर्रे हुर्रे' का जय-निनाद करते जगदलपुर की ओर बढ़ गए। झालरसिंह को वहीं छोड़ दिया गया था। उसका काम गांव में बचे लोगों की रक्षा करना था।

सारे बस्तर में आग लग गई थी। गुण्डा धूर अपने दल-बल के साथ जगदलपुर पहुंच चुका था। जहां-जहां लाल मिर्च और आम की डाल जाती, वहां जौहर मच जाता। अन्तागढ़ के तहसीलदार को वहां के लोगों ने खूब मारा था और नरायनपुर के थाने में आग लगा दी थी। वहां के मुंशी और थानेदार भाग निकले। स्कूल की इमारत की एक-एक ईंट फोड़कर सबने चकनाचूर कर दी। किलेपाल और बारसूर में जंगल की चौकियां तोड़ दी गईं। उनमें आग लगा दी गई और सिपाहियों को या तो खूब पीटा गया या हत्या कर दी गई।

डिबरी धूर ने केशकाल में सबसे बड़ा काम किया। वहां से होकर रायपुर को टेलीफोन लाइन जाती थी। अपने दल के साथ उसने सारी लाइन के टुकड़े-टुकड़े कर दिए, ताकि इसकी खबर किसी तरह बाहर न जा पाए।

महुआ के उत्साह का ठिकाना नहीं था। वह स्वयं तोड़ी फूंकती थी और अपनी फौज को लेकर आगे बढ़ रही थी। उसके दल में कोई सौ औरतें थीं।

सबके पास धनुष और बाण थे। सब गीत गाती थीं और आगे बढ़ती जाती थीं। स्वयं महुआ ने अपनी साथिनों की सहायता से कई पुलिस-चौकियों पर कब्ज़ा किया था। कई पुलिस-चौकियों में उसने आग लगाई थी और जंगल के बहुत-से नाके तोड़े थे। इन औरतों का साहस देखकर सब दांतों तले अंगुली दबाकर रह जाते।

सारा काम इतनी शान्ति के साथ हुआ था कि किसीको कानोंकान खबर नहीं लगी थी। रातों रात गुण्डा धूर ने सारे गांवों में लाल मिर्च और आम की डाल बंटवाई थी। सब पहले से तैयार ही थे। और इस समय की बाट जोह रहे थे।

सारे दल आसपास के गांवों को लूटते जगदलपुर की ओर बढ़ रहे थे। जगदलपुर में गंगामुंडा टेकड़ी पर इन्होंने अपना डेरा डाला था। सब वहीं जमा हो रहे थे। गुण्डा धूर ने सबसे पहले पहुंचकर लालकलिंदरसिंह से भेंट की। लालकलिंदर उत्तर द्वार के पास उससे मिला। उसने बताया कि पंडा बैजनाथ तो बीजापुर इलाके की ओर है।

गुण्डा ने वहां से लौटकर सुलक से चर्चा की। सुलक ने बताया कि वहां झालरसिंह है और वह यह सब सतर्क होकर देखेगा। झालर सचमुच सतर्क था। उसे बैजनाथ के आने की बात का पता लग गया था इसलिए वह कुछ आदमियों के साथ किलेपाल पहुंच गया था। किलेपाल में आठ-दस हजार आदिवासी जमा थे और पंडा बैजनाथ के आने का रास्ता देख रहे थे। उस समय वहां से एक बैलगाड़ी निकली तो झालर ने उसे रोका। उससे पूछताछ की, 'पंडा साहब किधर हैं?'

'वह तो पीछे आ रहे हैं भाई।' वह बोला।

झालर ने उसका गला पकड़ लिया और एक घूंसा पीठ पर मारा। उसके साथियों ने बैलगाड़ी में लदा सारा सामान नीचे फेंक दिया। जब उसमें पंडा नहीं मिले तो उन्होंने गाड़ीवान को छोड़ दिया। वे पंडा साहब का रास्ता देखते रहे, पर जब वह नहीं आए तो सब गीदम की ओर बढ़ गए। वहां पता लगा कि उस गाड़ीवान ने भोपालपट्टनम में पंडा साहब को इसकी खबर दे दी थी। उनके साथ पोलिटिकल एजेन्ट भी थे। वे दोनों हाथी में बैठकर पुलिस की सहायता से चांदा की ओर चले गए थे। झालरसिंह और उसके दल के लोगों

के गुस्से का ठिकाना नहीं था। दो दिन वे लगभग बैजनाथ का रास्ता देखते रहे थे। उस गाड़ीवान के छल पर उन्हें इतना गुस्सा आया कि अब आदिवासियों को छोड़कर जो भी गांवों में मिलता वे उसे भी मारने लगे। झालरसिंह तो बौखला उठा था। उसने गुस्से में आकर आम के उस पेड़ को अपने तीरों से छेदना शुरू कर दिया, जिससे पंडा साहब का हाथी बंधा था। उसके साथियों ने भी यही किया और अन्त में पूरे पेड़ को ही काटकर फेंक दिया। ये सारे साथी रास्ते के हर कंकड़ और पत्थर को तोड़ते-फोड़ते जगदलपुर की ओर रवाना हो गए। झालर ने गुण्डा धूर के पास यह खबर भी भेज दी कि आदिवासियों को छोड़ और जो भी लोग हैं वे सब गोरों का साथ दे रहे हैं और हमारे दुश्मन हैं।

जगदलपुर में मार-काट मची थीं। गुण्डा, सुलक, डेबरी और महुआ अपने साथियों के साथ सारे गांव को चौपट कर रहे थे। जो आदिवासी नहीं थे, वे भी गोरों के मित्र हैं, यह विश्वास उनके मन में घर कर गया था। इसलिए वे किसीको न छोड़ते। सुलक ने उस स्कूल को जला दिया जहां गोंड़-लड़के भरती किए गए थे। जगदलपुर का थाना भी आग की लपटों में खो गया था। लालकलिंदरसिंह प्रायः रोज़ रात को इन लोगों से मिला करता था। बड़ी रानी भी अपना संदेश उसके हाथ भेजतीं। सुलक ने कहा, 'हुज़ूर, हम एक बार राजा से भी मिलना चाहते हैं।'

'उनसे मिलकर क्या करोगे, सुलक ?'

'हम उनसे कहेंगे कि वे भी अपनी फौज हमें दे दें।'

'ऐसा नहीं हो सकता।' कलिंदरसिंह ने कहा, 'राजा तुम लोगों के पक्ष में नहीं हैं।'

'हमारे पच्छ में नहीं हैं ?' सुलक को अचरज हुआ।

'हां सुलक, इसमें अचरज की क्या बात है, वह तो गोरों का साथ दे रहे हैं।'

'तो हम राजमहल पर भी धावा बोलेंगे।' सुलक रोष में आ गया। लालकलिंदर ने उसकी पीठ ठोकी, 'शाबाश, पर अभी नहीं, दो-चार दिन बाद।'

'जैसा हुज़ूर कहें।' वह वहां से चला आया। लालकलिंदरसिंह राजमहल

की खबर उन्हें बराबर देता रहा।

महुआ रात को सुलक से मिलती तो अपनी पूरी योजना पर चर्चा करती। उसमें अपार शक्ति और लगन थी। सुलक देखकर चकित था। जो एक दिन प्यार में पागल थी, वह आज जैसे सारा प्रेम भूल गई थी। सुलक कभी प्रेम की कोई बात करना भी चाहता तो महुआ उसे ज़ोर का धक्का देकर कहती, 'कैसा सिरदार है रे, लड़ाई के मैदान में कोई ऐसी बातें करता है! खबरदार, ऐसा कहा तो! मैं भी तेरी बराबरी की सिरदार हूं।'

सुलक उसके चेहरे पर फूटती लाली को देखकर दंग रह जाता। उसकी फिर हिम्मत न होती कि वह प्यार की बातें करे।

जगदलपुर का पूरा शहर चारों ओर ऊंची दीवाल से घिरा था।[1] इस दीवाल में चारों ओर चार दरवाज़े थे। एक तरफ इन्द्रावती नदी और तीन ओर खाई। खाइयों में इतना पानी कि कोई आदमी पैदल पार नहीं कर सकता। चहारदीवारी के लगभग मध्य में शहर के बाहर महल राजवाड़ा है। इसी महल की चोटी पर लाल चन्द्रमा और त्रिशूल के निशान वाला शासकीय ध्वज फहरा रहा था। राजा रुद्रप्रतापदेव और उनका पूरा परिवार इसी महल में रहा था। लालकलिंदरसिंह राजपरिवार का ही एक व्यक्ति होने के नाते महल राजवाड़ा की बाजू में ही दूसरे महल में रहता था। वह पूरी तरह विद्रोहियों का साथ दे रहा था क्योंकि उसकी हार्दिक इच्छा थी कि यदि राजा मारे जाएं तो वह किसी तरह जोड़-तोड़ भिड़ा ले और गद्दी पा जाए। उसने बगावत की इस घटना का कोई उल्लेख महाराजा से नहीं किया। महाराजा को इतना पता था कि आदिवासी वहां जमा हो गए हैं परन्तु लालकलिंदरसिंह ने राजा साहब को बताया कि वे कोई गलत नीयत से नहीं आए। इस साल से यहां एक मेला लगाने का काम शुरू हो रहा है। गुण्डा और सुलक की खबर आई थी कि वे उनसे मिलना चाहते हैं परन्तु लालकलिंदरसिंह ने राजा को मना कर दिया। बोला, 'भाई साहब, पंडा बैजनाथ ने स्कूल खोलने, जंगल-कर लगाने और ज़मीन

१. आज जगदलपुर का नकशा एकदम बदल गया है। चहारदीवार के कुछ चिह्न भर बचे हैं।

बांटने के जो कानून बनाए हैं; ये आदिवासी सोचते हैं, सब आपके बनाए हैं। आपसे कुछ अच्छी नीयत लेकर ये भेंट नहीं कर रहे। हो सकता है कोई आप-पर हमला कर दे।'

महाराजा रुद्रप्रतापदेव को राज्य चलाने का अनुभव तो था नहीं। प्रकृति से भी वे अधिक मिलनसार और साहसी व्यक्ति नहीं थे। लालकलिंदर ने दोनों को समझाने का सारा ज़िम्मा अपने ऊपर लेकर यहां राजा को निश्चिंत कर दिया।

रात ज़ोरों की खुर्राटें भर रही थी। गुण्डा धूर और सुलक इस अंधेरी रात में इन्द्रावती नदी के तीर लालकलिंदरसिंह का रास्ता हेर रहे थे। लालकलिंदरसिंह वहां पहुंचा तो दोनों ने उसके पैर छुए। गुण्डा बोला, 'हुज़ूर, क्या अंधेर है! एक ओर तो महाराजा ने गोरों को बुला लिया है और अब हमसे मिलना भी नहीं चाहते।'

'क्या हुआ गुण्डा ?' लालकलिंदर की आवाज़ में दया और नरमी थी।

'आज हमने यहां राजा से मिलने के लिए खबर भेजी थी हुज़ूर,' गुण्डा ने कहा, 'परन्तु महाराजा ने घंटे भर बाद जवाब भिजवाया कि हमें मिलने का समय नहीं है।'

'अच्छा ! तो महाराजा इतने आगे पहुंच गए ?'

'हां मालिक ! बिपदा एक ओर से थोड़े आती है। जब आती है तो चारों ओर से घेर लेती है।'

'इसमें बिपदा की क्या बात है गुण्डा,' लालकलिंदर ने उसकी पीठ ठोकी। 'तुम्हीं सोचो भला, राजा तुमसे क्यों मिलेगा ? पहले की बात छोड़ दो, अब राजा तुम्हारे साइगुती थोड़े हैं।....राजा साहब ने तो मुझसे कहा है कि मैं तुम लोगों से कह दूं कि यदि यहां गड़बड़ किया तो सरकारी फौज छोड़ दी जाएगी।'

'एं एं एं !' सुलक आश्चर्य से बोला, 'यहां राजा ने इस तरह हमें अनाथ छोड़ दिया ? हम भी देख लेंगे।'

'हां मालिक, कम से कम हमसे एक बार बात तो कर लेते। हम अपना दुःख-दर्द उन्हें सुना देते और फिर जो वह कहते हम अपने सिर-माथे पर धरते।' गुण्डा ने कहा।

'तुम लोग गलत सोचते हो गुण्डा,' लालकलिंदर ने दूसरा पासा फेंका, 'महाराजा अब तुम्हारे मित्र नहीं रहे। उनसे न्याय की आशा मत रखो।'

'फिर हुजूर ?' सुलक के इस प्रश्न पर लालकलिंदरसिंह कुछ देर सोचता रहा। फिर बोला, 'अच्छा यह तो बताओ, अभी तुम्हारी कित्ती फौज और आना बाकी है ?'

'अभी कम से कम आधे लोग और आएंगे। रोज सब आते जा रहे हैं।'

'देखो गुण्डा, चार दिन और रास्ता देखो, पांचवें दिन तुम लोगों को महल राजवाड़ा पर धावा कर देना है और यहां की एक-एक ईंट उखाड़ फेंकना है।'

लालकलिंदर की इस बात को दोनों ने स्वीकार कर लिया। वहां से लौटकर गुण्डा और सुलक गंगामुण्डा की टेकरी पर चढ़ गए और ज़मीन पर लेटे दोनों महल पर धावा करने की योजना बनाते रहे। उन्हें भरोसा था कि चार दिन में बस्तर के सारे जवान आदिवासी वहां जमा हो जाएंगे और फिर आंधी की गति से वे ऐसा हमला करेंगे कि राजमहल की एक भी ईंट न बचेगी। दोनों राजा की ओर से निश्चिन्त थे।

लालकलिंदरसिंह ने इन्हें वचन दे दिया था कि वह राजा को भरमाए रखेगा और यह पता नहीं लगने देगा कि ये लोग राजमहल पर धावा करने वाले हैं।

झुटपुट अंधेरा था और बहुत-से लोग इन्द्रावती के तीर मुंह धो रहे थे। उनमें झालरसिंह भी था। सबने देखा, इन्द्रावती नदी के उस पार कोई अजीबसी चीज़ खड़ी है। उसके पास एक गोरा अफसर है और साथ में कुछ सिपाही। सब लोगों ने वह अजीब चीज़ अभी तक नहीं देखी थी। झालर ने अपने साथियों से कहा, 'वह देखो, क्या चीज है ? चलो हम उसे देखें।' सब तैयार हो गए। लगभग आधा मील नदी के किनारे-किनारे गए तब कमर तक पानी से सबने नदी पार की और वहां जा पहुंचे।

झालर ज़ोर से उचका, 'हुर्रे ऽ ऽ ऽ !'

सब एक साथ चिल्लाए, 'हुर्रे ऽ ऽ ऽ !'

'अरे, यह तो कालीदेवी है रे, चलो पूजन करें।' सब उसके पास चले गए। गोरा था ग्रेयर[1] जो एक भारी अंग्रेज़ अफसर था, इन्हें देखकर घबड़ा

---

१. ग्रेयर रायपुर में डी० एस० पी० था।

गया। उसने शायद सोचा था कि ये लोग हमला करने आए हैं। उसने मोटर से गोली निकाली और दनादन दाग दी। सबसे पहली गोली झालरसिंह को लगी और वह थोड़ी देर मछली की तरह तड़पकर सदा के लिए सो गया। उसके तीन-चार और भी साथी मारे गए। बाकी वहां से भाग गए। बेचारे निहत्थे थे। कभी मोटर तो उन्होंने देखी नहीं थी। उसे एक देवी समझकर वे उसकी पूजा करने आए थे, ग्रेयर ने उनकी जान ले ली।

ग्रेयर पहले से ही आग-बबूला था। पंडा बैजनाथ यहां की सारी खबर उसे दे चुका था। वह किसी तरह नदी पार करना चाहता था। वहां कोई पुल तो था नहीं। घंटों यत्न करने के बाद भी उसे रास्ता न मिला। काफी देर के बाद मोटर वहीं छोड़कर एक फकीर की मदद से अपने कुछ सिपाहियों के साथ उसने खड़गघाट पार किया और सीधे राजमहल जा पहुंचा।

राजमहल में जाकर उसने सबसे पहले रुद्रप्रतापसिंह को गिरफ्तार किया। राजा रुद्रप्रताप एकदम घबड़ा गए। उन्होंने अपने को नादान बताया पर ग्रेयर कहां मानने चला था! उसने महल के अहाते में और आसपास कांच कूट-कूटकर बिछवा दिए। चारों ओर लोहे की जालियां लगवा दी गईं और महल के परकोटे के किनारे लगे बड़े-बड़े झाड़ कटवा दिए गए। इससे कोई महल में नहीं घुस सकेगा। यहां राजा एक कमरे में कांच के घेरे में बन्द कर दिए गए। लालकलिंदर तब महल के बाहर था। ग्रेयर को यह किसी तरह पता चल गया कि वह और बड़ी रानी दोनों बागियों से मिले हैं।

यहां झालरसिंह और उसके साथियों के मरने की खबर जब गुण्डा और दूसरे साथियों को मिली तो वे तड़प उठे। उनके कलेजे में जैसे किसीने कीला ठोक दी थी। महुआ तो सुनकर सूख गई, 'बेचारा झालर मुफ्त में मारा गया!'

'हमें अब चुप नहीं बैठना चाहिए, सिरदार!'

'हां सुलक, तू ठीक कहता है।'

गुण्डा ने टेकरी पर खड़े होकर तोड़ी फूंकी। सारे आदिवासी धनुष-बाण लेकर खड़े हो गए।

गुण्डा ने झालर और दूसरे साथियों के मरने की उन्हें खबर दी और कहा, 'भाइयो, हमें आज ही राजमहल पर धावा करना है। सब तैयार हो जाओ।'

'हम तैयार हैं!'—एक साथ सब चिल्लाए। इसी समय सामने से एक

अफसर आता उन्हें दिखाई दिया। सुलक ने उसे देखा, बोला, 'गुण्डा, देखो तो वह कौन आ रहा है ?' गुण्डा ने अपना धनुष निकालकर बाण उसपर चढ़ाया और उसे जैसे ही छोड़ना चाहा कि वह अफसर चिल्लाया, 'मैं तुम्हारा साइगुती हूं, साइगुती हूं, ठहरो।' गुण्डा ठहर गया। अफसर ने पास आकर कहा, 'गुण्डा, तुम लोग क्यों उबल रहे हो ! ग्रेयर साहब तो महल में जाकर घंटों रोए हैं। उन्होंने धोखे से तुम्हारे साथियों पर गोली चलाई है।'

'यह कैसा धोखा है ?' सुलक ने सीना तानकर कहा।

'धोखा किससे नहीं होता बीर, साहब ने समझा था कि वे लोग उनपर धावा करने आ रहे हैं।'

'तुम्हारे अफसर की क्या आंखें नहीं थीं ? हम बिना बताए किसीपर धावा नहीं करते हुजूर।'

'इसीलिए तो हुजूर रोए हैं गुण्डा। उन्होंने खबर भेजी है कि वे तुम लोगों से मिलना चाहते हैं। वे तुम्हारी तकलीफ मिटाने आए हैं, लड़ाई करने नहीं।'

'यही तो हम चाहते हैं,' गुण्डा बोला, 'हमने महाराजा से भी यही कहा था, पर वे हमसे न मिले। हम हुजूर से बातें करने को तैयार हैं।'

'तो चलो।'

गुण्डा अपने साथियों के साथ महल राजवाड़ा की ओर चल पड़ा। महल के बाहर ग्रेयर खड़ा था। उसने मुसकराते हुए हाथ जोड़कर सबसे जुहार की। गुण्डा उसके सामने खड़ा हो गया। उसने आंख भरकर गुण्डा को देखा। गुण्डा के पास ही डेबरी था। ये दोनों शक्ल में मिलते-जुलते थे। वह बोला, 'ओ खूब, टुम डोनों बहोत खूबसूरट हो।'

'हमें किसलिए बुलाया गया है ?' डेबरी ने तेज़ आवाज़ में पूछा। ग्रेयर अपनी आंखों में बनावटी आंसू लाया, 'अम बहोट डुखी है। टुमारे डोस्टों को मारा। अरे टुम नयीं जानटा, हम इहां रे चुका है। एक बार गढ़ बंगाल गिया ठा। वहां का 'राजमेल' में ठहरा ठा। वहां का आडमी बहोट अच्छा है....।'

सुलकसाए अपने गांव का नाम सुनकर सामने आ गया, 'मैं वहीं रहता हूं साहब। आपको अब पहचान गया।' सुलक के साथ महुआ खड़ी थी। ग्रेयर ने तिरछी आंखों से उसे देखा। बोला, 'खूब नौजवान, अम टुमको पेछान गया। और वो लड़की... ?'

'महुग्रा नाम है इसका ।'

'बहोट खूबसूरत है।'

महुग्रा ग्रपनी प्रशंसा सुनकर प्रसन्न हुई। उसने गोरे ग्रफसर की ग्रोर देखा, यह तो वही था जो उस रात राजामहल में ठहरा था ग्रौर यदि झिरिया की ग्रात्मा उस राजामहल में न होती तो··· । महुग्रा ने दांत पीसे। मन हुग्रा कि वह ग्रपने कंधे से कमान निकालकर एक तीर छोड़ दे। वह कंधे तक हाथ भी ले गई पर तीर न निकाल सकी। निहत्थे ग्रादमी पर तीर कैसे छोड़ा जाए! ग्रेयर ने कहा, 'टो, मैं टुम लोग में से है। ग्रम····ग्राया····है टुमारा शिकायट सुनने।'

'पर हमें भरोसा कैसे हो?' सुलकसाए ने कहा, 'तुम्हारी बातों का बिसास हम नहीं कर सकते।'

ग्रेयर यहां की ज़मीन से परिचित था। उसने मिट्टी का एक टुकड़ा उठाया ग्रौर ग्रपने मुंह में रखते हुए बोला, 'हम मट्टी खाकर कसम खाटा है।'

सुलक ने गुण्डा की ग्रोर देखा, 'यह तो धरती मइया की कसम खाता है!'

'तब तो बात माननी पड़ेगी सुलक!'

'हां गुण्डा।'

'टो ग्रब टुम भी कसम खाग्रो।' ग्रेयर ने उन लोगों की ग्रोर देखा।

गुण्डा ने नीचे झुककर मिट्टी उठाई ग्रौर मुंह में रखकर कसम खाई, 'हमारे पंख थोड़े उगे हैं मालिक। हम तो ग्रपनी रच्छा के लिए यहां ग्राए हैं। जब कोई कुछ सुनता ही नहीं तो हम क्या करते!'

'ग्रम सब सुनेगा गुण्डा, सब सुनेगा।'

गुण्डा की देखादेखी उसके सारे साथियों ने भी मिट्टी खाकर कसम खाई ग्रौर टेकरी की ग्रोर लौट गए।

'हुर्रा हुर्रा हुर्रा!'

'हमारी जीत हुई सुलक।'

'हां गुण्डा।'

'हमारी बात मान ली गई।'

'यही तो हम चाहते थे। ग्रब सारा किस्सा हम उससे कहेंगे ग्रौर वह हमारे दुःख जरूर दूर करेगा। ग्रफसर बड़ा भला है।'

सबने ग्रेयर की बड़ी तारीफ की। झालरसिंह का मरना भी वे भूल गए।

दूसरे दिन ग्रेयर ने उनकी सारी बातें सुनीं और बोला, 'टुमें टीन डिन यहां ठहरना होगा। मैंने बैजनाथ को बुलाया है। वह आ जाए, अम उसकी भी सुन लें।'

'हां सुन लो ग्रेयर साहब। हम यह सब उसके सामने भी कह सकते हैं।' सुलकसाए ने बड़े गर्व से कहा।

'टीन डिन टम्हें सरकार की ओर से खाना मिलेगा।'

'जय हो ग्रेयर साहब की!' सबने ग्रेयर की बड़ी बड़ाई की। वे पंडा बैजनाथ के आने की प्रतीक्षा करते रहे।

सुलक और महुआ एक झाड़ के नीचे बैठे थे। सुलक बोला, 'तुझपर मोहित था यह और अब फिर मिल गया। कहीं उसने तुझे रात को बुलाया तो!'

'चल हट,' महुआ बोली, 'अब क्या बुलाएगा माइलोटा!'

'क्यों? नहीं बुला सकता क्या?'

'तू जाने देगा?'

'मैं क्या करूंगा महुआ, यदि तू जाना ही चाहेगी।'

महुआ ने उसके चिहूंटी ली, 'अब यह वह महुआ नहीं है सुलक! वह बुलाएगा तो यहीं से एक तीर छोड़कर उसका काम तमाम कर दूंगी।'

'शेरनी बन गई है तू तो!' सुलक ने उसकी पीठ ठोकी।

'क्यों नहीं!' महुआ ने सीना तानकर कहा, 'सिरदार हूं, तुझसे कम थोड़े ही हूं।'

दो दिन कट गए। तीसरी रात आई। सब सो रहे थे। महुआ, सुलक, गुण्डा और डेबरी—चारों सरदार गंगामुंडा से दूर झुटपुटे में बैठे बातें कर रहे थे। वे आपस में इस बात की चर्चा कर रहे थे कि बैजनाथ के आने के बाद कहीं ग्रेयर ने उनकी शर्तें न मानीं तो वे क्या करेंगे।

'हम तुरन्त उनपर तीर छोड़ देंगे।' महुआ बोली।

'हां गुण्डा, जब समझौता नहीं होगा तो चुप क्यों खड़े रहेंगे!'

सुलक की इस बात पर गुण्डा ने नाराजगी प्रकट की, 'हमने धरती मइया की

कसम खाई है सुलक ।'

'हां रे ऽ ऽ ऽ' सुलक और महुआ एक साथ बोले, 'तू ठीक कहता है गुण्डा ।'

'तब'—डेबरी ने कहा, 'मैं बताता हूं.....'

इसी समय गोली चलने और चीखने-चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दी । सबने खड़े होकर देखा तो वे देखते रहे । सारी गंगामुंडा पहाड़ी हज़ारों बंदूकधारी सैनिकों ने घेर ली थी । कई आदिवासी ज़मीन पर निर्जीव पड़े थे और ग्रेयर ज़ोर से कह रहा था, 'खबरदार, एक ने भी टीर छोड़ा । सबका कटलेआम करा डूंगा ।'

सारे आदिवासी घबड़ाए खड़े थे और उन्होंने अपने तीर-कमान जमीन पर डाल दिए थे ।

ये चारों एक दूसरे की ओर देखने लगे । वे एक साथ फुसफुसाए, 'इसने तो धरती मइया की कसम खाई थी !'

और उन्होंने देखा कुछ सैनिक उनकी ओर चले आ रहे हैं ।

'भागो सुलक, सब भागो । जो जहां भाग सके भागो । नहीं हम मारे जाएंगे ।

चारों उस पहाड़ी से कूदते-फांदते भाग गए । सैनिक कुछ दूर तो दौड़े पर फिर उनका पता नहीं चला । वे सब जाने कहां खो गए थे ।

ग्रेयर टेकरी पर खड़ा गर्व से देख रहा था । उसे अपनी विजय पर जैसे असीम आनन्द हो रहा था । उसी समय बेंत से भरी तीन गाड़ियां सामने आकर खड़ी हो गईं । ये सारी बेंतें पानी में भीगी थीं और काफी फूल गई थीं । ग्रेयर के पास एक सैनिक खड़ा था—हट्टा-कट्टा और तगड़ा । हज़ारों दूसरे सैनिक इन आदिवासियों को घेरे थे । वे बंदूकें ताने खड़े थे । एक-एक आदमी सामने लाया जाता और बेंतों से उसकी मरम्मत की जाती । उससे उनके नेता का नाम पूछा जाता, पर कोई बताने को तैयार नहीं था । सैकड़ों बेंत खाकर भी किसीने नाम नहीं बताया । औरतों को भी बेरहमी से बेंतों द्वारा पीटा गया । कई को ज़मीन पर घसीटा गया । सारे दिन मार-पीट का यह सिलसिला जारी रहा । सूरज थककर सामने की पहाड़ी में सो गया पर गंगामुण्डा की पहाड़ी से सटाक-सटाक बेंतें चलने की आवाज बराबर आती रही । इन बेचारे आदिवासियों को ऐसा धोखा दिया गया था, जैसा यहां के लोगों ने आज तक न कभी देखा था और न सुना था !

गुण्डा और डेबरी उस अंधी दौड़ में न जाने कहां खो गए थे। सुलकसाए और महुआ भागते-भागते काफी दूर निकल गए थे। पहाड़ियों और घाटियों को पार कर जब वे नीचे उतरे तो उन्हें सामने फूस की कुछ टपरियां बिखरी नज़र आई।

'यह तो उलनार है सुलक......।'

'हां महुआ, हम आठ मील आ गए !'

'गुण्डा न जाने कहां निकल गया ! पत्थरों और कांटों की चोट खाकर उसके दोनों पैर खुरच गए थे। खून निकल रहा था, परन्तु वह भागता जा रहा था।'

'सिपाही कहीं उसका पीछा न कर रहे हों महुआ, वरना बेचारा पकड़ा जाएगा और यदि पकड़ा गया तो ग्रेयर उसका गला काटे बिना नहीं रहेगा।'

'वह देखो'—महुआ ने सामने अंगुली दिखाई, 'यहां भी अपने बहुत-से साथी जमा हैं।'

'चलो, हम वहां चलें।' दोनों ने फिर दौड़ लगाई। एक ही दौड़ में वे गांव के बीच पहुंच गए थे। यह गायता का घर था। वहां सैकड़ों लोग जमा थे। वे सब जगदलपुर की ओर जाने की तैयारी में थे। उन्होंने सुलक को देखा तो एक साथ चिल्ला उठे, 'जय बड़े देव की, हुर्रे हुर्रे हुर्रे !'

सुलक ज़ोर से हांफ रहा था और महुआ तो लस्त पड़ गई थी। सुलक ने मुश्किल से धीरे-धीरे जगदलपुर का सारा किस्सा कह सुनाया।

उलनार के गायता को यह पता लग चुका था। बोला, 'सुलक, यह हम सुन चुके हैं। इसलिए मैंने सारे लोगों को यहीं रोक लिया है। चितरकोट, बदनपाल और महपाल के दलों को भी यहीं बुला लिया है। इन रास्तों पर अपने आदमी खड़े कर दिए गए हैं।'

'बहुत खूब गायता,' सुलक ने उसके सामने सिर झुका दिया, 'तुमने बहुत अच्छा किया।'

'सुलक, एक बहुत बुरी बात सुनी है,' गायता के चेहरे पर जैसे चिन्ता की सैकड़ों पगडंडिया उभर आई थीं। उसकी आंखें भर गई थीं—'हमारे नेता के

बिरुद्ध ग्रेयर हाथ धोकर पड़ा है ?'

'किसके, गुण्डा के पीछे ?'—महुआ ने पूछा ।

'हां महुआ ।' गायता की आंखों से आंसू की बूंदें ढुलकने लगीं, 'ग्रेयर ने मुनादी कराई है कि जो कोई भी गुण्डा धूर और डेबरी धूर को जिन्दा या मुर्दा पकड़कर उसके सामने ला देगा उसे दस हजार और पांच हजार रुपये इनाम मिलेंगे ।'

'इत्ता रुपया !' महुआ ने मुंह फाड़ दिया ।

'हां महुआ, इसलिए मुझे चिन्ता है । पैसों के लोभ में पड़कर कहीं कोई उसे पकड़वा न दे !'

गायता की बात सुनकर सब चिन्तित हो गए । सबने खड़े होकर बड़े देव की याद की, 'हे देवता, हमारे दोनों नेताओं की रच्छा कर ।'

'ग्रेयर ने हमें बहुत बड़ा धोखा दिया गायता ।' सुलक की आवाज़ कांप रही थी, 'देवता उसे इस पाप के लिए जरूर सजा देगा ।'

'कब देगा सुलक ? जब देगा देखा जाएगा । आज तो हमें सजा मिल रही है,' महुआ अब सारा साहस खो बैठी थी, 'लालकलिंदर का भी तो पता नहीं है रे,........।'

'है, उसका पता है,' गायता ने कहा, 'उसे ग्रेयर ने गिरफ्तार कर लिया है और सुना है, उसे रातोंरात राज के बाहर निकाल दिया गया है ।

'अब क्या होगा ?' महुआ अपने सिर पर हाथ रखकर बैठ गई ।

'यह मुसीबत आने वाली थी, यह मैं कई दिन पहले जान गया था गायता । दंतेवाड़ा में दीवाली नाचते समय मेरे सिर से पंख गिरा था और बारसूर की एक मोटियारी ने जाते समय लौटकर देखा था ।'

सुलक की बात सुनकर गायता ने भी लम्बी सांस ली, 'यह तो बहुत बड़ा अशुभ था सुलक ।'

'हां गायता ।'

'अब हम क्या करें ?' दूसरे खड़े लोगों ने एक साथ प्रश्न किया ।

'हम फिर लड़ेंगे ।' महुआ तेज़ी से बोली ।

'जब तक हममें से एक भी जिन्दा है, बिना लड़े नहीं रहेंगे ।'

'हां गायता, महुआ ठीक कहती है । इसके सिवाय हमारे पास और चारा

ही क्या है ! न लड़ेंगे तो भी मारे जाएंगे । लड़कर मरना ज्यादा अच्छा है ।'

सब लोगों ने सुलकसाए की बात मान ली । तय हुआ कि जो और लोग आने वाले हैं उन्हें भी आ जाने दिया जाय और फिर सब जगदलपुर चलकर एक साथ धावा बोल देंगे ।

उलनार में पड़ाव डाल दिया गया । गांव के बाहर महुआ और सुलक ने एक झोंपड़ी में शरण ली । वे अपने घावों को सेंकते रहे । महुआ स्वयं बेहद कमज़ोर हो गई थी परन्तु फिर भी वह सुलक की सेवा करती रही ।

नाडूम नरका ! रात सांय-सांय कर जैसे सिसकियां भर रही थी । सुलक ने तभी आवाज़ सुनी—'ठांय ! ठांय !! ठांय !!!' यह गोलियों की आवाज़ थी । महुआ तब सो रही थी । उसने महुआ को उठाया । दोनों ने एक बांस में सनकाड़ी बांधकर आग जलाई और ऊपर उठाकर देखा । कहीं कुछ न दिखा पर 'ठांय-ठांय' की आवाज़ बराबर सुनाई पड़ती रही । काफी देर के बाद उन दोनों ने देखा कि कुछ मशालें उनके गांव की तरफ बढ़ती आ रही हैं।

'देख महुआ, लगता है ग्रेयर को हमारे यहां आने का पता लग गया है ।'

'हां सुलक, पर कौन हमारा पता देगा ?'

'क्या जाने हममें ही कौन बिभीसन है । जो हो यह सरकारी फौज ही चली आ रही है ।'

सुलक टपरिया में गया । वहां से वह तोड़ी निकाल लाया । उसे ज़ोर से फूंककर उसने अपने साथियों को जगाना चाहा । परन्तु तोड़ी फूंकते ही उन दोनों ने देखा कि सारे गांव को चारों तरफ से मशालों ने घेर लिया । दूर की मशालें अभी भी दिख रही थीं ।

'समझी,' महुआ बोली, 'यह भी ग्रेयर की चाल है । बहुत-सी फौज अंधेले में पहले ही आ चुकी है । अब हम सब घिर चुके हैं, सुलक ।'

'हां महुआ ।'

महुआ सुलक से लिपट गई, 'क्या जाने हम फिर मिलते हैं या नहीं !'

'जिन्दा नहीं तो मरकर मिलेंगे महुआ, पर इस बार लड़ेंगे जरूर ।'

सुलक ने तोड़ी को ताकत भर फूंकना शुरू कर दिया । सारे आदिवासी तैयार हो गए । सुलक ने तुरन्त आदेश दिया, 'धावा करो ।'

अंधेरे में आदिवासियों ने तीर छोड़े । सरकारी फौजों ने भी ठांय-ठांय कर

गोलियों की बौछार शुरू कर दी। तीर और गोलियों की वर्षा घंटों हुई। रात बीत गई और अलबेतू[1] का परछाई जैसा उजाला उतर आया, पर लड़ाई में किसी तरह की कमज़ोरी नहीं आई। दोनों ओर के सिपाही मरते रहे, किसीने हिम्मत न हारी।

एकाएक एक घुड़सवार सुलकसाए की झोंपड़ी के पास आ धमका। उसने बंदूक की एक गोली छोड़ी परन्तु वह सुलक को न लगकर झोंपड़ी की दीवाल में छेद बनाकर निकल गई। झोंपड़ी के एक बाजू में महुआ थी। उसने पीछे से तीर छोड़ दिया और वह सैनिक घोड़े से नीचे गिर पड़ा। सुलक ने एक और तीर उसकी छाती में चुभा दिया। वह वहीं ढेर हो गया और वे दोनों उस घोड़े पर बैठकर सबकी नज़र बचाते गांव के बाहर हो गए।

घंटों युद्ध के बाद जब सूरज की रोशनी उलनार पर उतरी तो आदिवासियों ने देखा, ग्रेयर की अनगिनत फौज उनके गांव को घेरे है। आधे से ज़्यादा आदिवासी निर्जीव धूल में लोट रहे हैं। गायता ने तीर-कमान नीचे डाल दी। उसकी देखादेखी सबने यही किया। सरकारी फौजों ने सबको गिरफ्तार कर लिया। ये सब जगदलपुर लाए गए और ग्रेयर के सामने पेश किए गए। ग्रेयर की क्रूर आंखों से खून टपक रहा था, 'ये जंगली, हमसे लड़ने की हिम्मत करते हैं!' उसने गायता के गाल पर कसकर चांटे लगाए और अपने भारी जूते की एक ठोकर उसके पेट में मारी, फिर एक सैनिक को बुलाकर हुक्म दिया कि इसके गले में फंदा लगाकर झाड़ से लटका दिया जाए।

गोलबाज़ार में इमली का एक भारी पेड़ लगा था। गायता के गले में रस्सी बांधकर उसे सबके सामने झाड़ पर ज़िन्दा लटका दिया गया। वह बहुत देर तड़पता रहा और अन्त में लकड़ी जैसा ठूंठ बनकर रह गया। उसीके बाजू में अन्तागढ़ के परगना-मांझी को ज़िन्दा लटका दिया गया था। ग्रेयर क्रोध में लाल था। हाथ से रिवाल्वर और चमड़े का हंटर लेकर दांत पीसता चारों ओर देख रहा था। हज़ारों लाशें वहां पड़ी थीं और हज़ारों आदिवासी बन्दी बना लिए गए थे। उसके क्रोध का जैसे अन्त नहीं था। उसने गायता और मांझी की लटकती लाशों को भी कोड़े से पीटा।

---

१. सवेरा

'जंगली !'

ग्रेयर ने अपने किसी बड़े सैनिक को बुलाया—'गुण्डा, डेबरी और सुलक को कहीं से हो हाज़िर करो।'

'बहुत खोजा हुज़ूर पर किसीका पता नहीं चलता।'

ग्रेयर गुस्से में था ही। उसने अपने ही सैनिक के गाल पर चांटा जड़ दिया—'नॉनसेंस, गेट आउट।'

ग्रेयर ने राजमहल की ओर देखा। उसपर भगवा झंडा लहरा रहा था। एक सैनिक को हुक्म देकर उसने वह झंडा निकलवाया और उसके चिथड़े-चिथड़े कर दिए। राजमाता को भी उसने जी भर गालियां दीं। वह इस मामले में अनजान थी पर सब सुनती गई। अन्त में उन्हें राज्य से निकाल दिया गया। राजा रुद्रप्रतापदेव विवश थे। कांच के चूरण के बीच वह घिरे आंसू बहाते रहे।

ग्रेयर ने एक बार कैदियों की ओर फिर देखा। उनमें सैकड़ों औरतें भी थीं। औरतों को देखकर उसने दांत पीसे—'जंगली चुड़ैल ! यह भी लड़ता है !' उसने एक-एक औरत को सामने बुलाया। प्रत्येक को वह ध्यान से देखता और ताकतभर एक-एक हंटर उन्हें मारता और जेल में बन्द करने का हुक्म दे देता। वह शायद उनमें से महुआ को खोज रहा था। सारी औरतें चली गईं पर महुआ वहां नहीं थी। उसकी बौखलाहट बढ़ गई थी। उसने हंटर और रिवाल्वर वहीं फेंक दिए और राजमहल के अन्दर चला गया।

सुलक और महुआ घोड़े पर भागते काफी दूर निकल आए थे। पोरद की किरणें लड़खड़ाने लगी थीं और सारा पश्चिमी पोरोभूम किसी खूनी की तरह कठोर हो गया था।

'सुलक !'

'हां महुआ।'

'अब तो बैठा भी नहीं जाता। कमर जैसे टूट रही है।'

सुलक ने दाएं हाथ की ओर देखा। वहां एक टूटा-फूटा ईंटों का खण्डहर था। वह घोड़े से उतर पड़ा। महुआ को भी सहारा देकर उसने नीचे उतारा—'चलो आज की रात यहीं गुजारेंगे।'

'पर....!'

'डर लगता है तुझे, कहीं चुड़ैल रात को धावा न करे ?'

'नहीं सुलक, चुड़ैल तो हमारी साइगुती है। उसीके डर से तो शायद जंगल में यह खण्डहर भी अकेला पड़ा है। जब हमारी कमर टूट चुकी है तब फिर उसीका सहारा क्या कम है !'

'फिर...?'

'यह घोड़ा हमारे गले की फांसी बनेगा, सुलक।'

'तू ठीक कहती है महुआ।'—सुलक ने घोड़े को चूमा। उसके गले से लिपटकर उसने अपने आंसू बहाए और उसकी लगाम तथा करारी छोड़ दी। आलीशान घोड़ा उचाट भरकर भाग गया और न जाने कहां खो गया।

सुलक ने महुआ का हाथ पकड़ा। महुआ ने अपना हाथ उसके गले पर रख दिया। दोनों उस खण्डहर के भीतर चले गए और अपने साथियों की याद में आंसू बहाने लगे, 'यह भूमकाल हम कभी नहीं भूल सकते, सुलक कभी नहीं।'

'हम क्या ! हमारी आने वाली पीढ़ी भी उसे याद रखेगी महुआ।'—यह सुनकर महुआ शरमा गई और उसने प्रेमभरी तिरछी नज़रों से सुलक को देखा।

अब तक पोरद भी किसीकी गोद में सो चुका था और सारे जंगल में अंधेरा आवारों की तरह चक्कर काटने लगा था। उसका साथी कोल्हिया[1] उस खण्डहर के पास आकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा था, 'हुआ ऽ ऽ ऽ हुआ ऽ ऽ ऽ'। कोल्हिया की आवाज़ सुनकर महुआ कांप उठी। सुलक ने उसे अपने पास खींचकर छाती से लगा लिया, 'जो हो चुका उससे बड़ा अशुभ अब क्या हो सकता है महुआ, यह कोल्हा तो भूमकाल के असमय अन्त पर रो रहा है। पर सचमुच यह अन्त नहीं है साइगुती। सबेरे का नया सूरज हमें नई ताकत देगा। तब हम देखेंगे ग्रेयर हमारी भूम से कैसे बचकर निकलता है।'

० ० ०

१. सियार